प्रातिहार्ययुक्त जिनप्रतिमा

लखनादौन, जिला मिवनी, मध्यप्रदेश

भगवान् महावीर के
२५०० वें निर्वाण महोत्सव
के उपलक्ष्य में प्रस्तुत

जैन प्रतिमा विज्ञान

(प्रतिमालक्षण सहित)

बालचन्द्र जैन, एम० ए०, साहित्यशास्त्री
उपसंचालक, पुरातत्त्व एवं संग्रहालय
मध्यप्रदेश

जबलपुर

वीर निर्वाण संवत् २५०० ईस्वी १९७४

प्रकाशक

मदनमहल जनरल स्टोर्स

राइट टाउन

जबलपुर ४८२००२

पंद्रह रुपये

मुद्रक

सिंघई प्रिंटिंग प्रेस

मढ़ाताल, जबलपुर

निवेदन

लगभग दस वर्ष पूर्व, मैंने इस पुस्तक के हेतु मूल सामग्री का संग्रह करना प्रारम्भ किया था। पर, दुर्भाग्यवश ऐसी कुछ अननुकूल परिस्थितियां आयीं कि कार्य बीच में रुक गया।

गत वर्ष १९७३ में, मेरे अनेक मित्रों और स्नेहीजनों ने मुझे पुन प्रेरित किया और भगवान् महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष्य में पुस्तक प्रकाशित किये जाने का आग्रह भी किया। उन्ही हितैषीजनों के सतत प्रदत्त उत्साह और प्रेरणा के फलस्वरूप जैन प्रतिमा विज्ञान विषयक पुस्तक इस रूप में प्रस्तुत है। इस में दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों परम्पराओं के ग्रन्थों के आधार पर देवाधिदेव जिन और विभिन्न प्रकार के देवों की प्रतिमाओं के संबंध में विचार किया गया है।

पुस्तक के प्रथम अध्याय में जैन प्रतिमा विज्ञान के आधारभूत ग्रन्थों का वर्णन है। द्वितीय अध्याय में प्रतिमा घटन द्रव्य तथा पूज्य, अपूज्य और भग्न प्रतिमाओं के संबंध में परम्परागत विचार प्रकाशित किये गये हैं। तृतीय अध्याय में तालमान की चर्चा है। चौथे अध्याय में त्रेसठ शलाका पुरुषों का विवरण देते हुये चतुर्विंशति तीर्थंकरों से संबंधित जानकारी प्रस्तुत की गयी है। तत्पश्चात् भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों और विशेष कर उन के इन्द्रों के स्वरूप का वर्णन है।

सोलह विद्या देवियों और शासन देवताओं को जैन देववाद में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उनके लक्षण छठे और सातवें अध्यायों में वर्णित हैं। आठवें, नौवें, दसवें और ग्यारहवें अध्यायों में क्रमशः जैन मान्यतानुसार क्षेत्रपाल, अष्ट मातृकाओं, दस दिक्पालों और नव ग्रहों की चर्चा है। यद्यपि कुछेक जैन ग्रन्थों में चौसठ योगिनियों, चौरासी सिद्धों और बावन वीरों के नामोल्लेख

उपलब्ध हैं, पर उन्हें इस पुस्तक में सम्मिलित नहीं किया जा सका। प्रतीक पूजा के उपकरण, विभिन्न यन्त्रों और मांडनों तथा भौगोलिक नकशों आदि को इस दृष्टि से छोड़ दिया गया है क्योंकि जैनों की प्रतीक पूजा एक स्वतंत्र ग्रन्थ का विषय बनने योग्य है।

प्रतिमा विज्ञान केवल कठिन ही नहीं अपितु अगाध विषय है। मैं अपनी अक्षमता को समझता हूं। पुस्तक में त्रुटियां सर्वथा संभाव्य हैं। विशेषज्ञ जन उन के लिये मुझे क्षमा करेंगे।

बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्।

महावीर जयन्ती, १९७४ बालचन्द्र जैन

विषय सूची

प्रथम अध्याय

जैन प्रतिमाविज्ञान के आधारग्रन्थ

अर्हत्, सिद्ध, साधु और केवली-प्रज्ञप्त धर्म, इन चार को जैन परम्परा में मंगल और लोकोत्तम माना गया है। साधु तीन प्रकार के होते हैं, १. आचार्य, २. उपाध्याय और ३. सर्व (साधारण) साधु। उसी प्रकार केवली भगवान् के उपदेश को जिनवाणी या श्रुत भी कहा जाता है। उपर्युक्त पञ्च परमेष्ठियों और श्रुतदेवता की पूजा करने का विधान प्राचीन जैन ग्रन्थों मे मिलता है।[१] किन्हीं आचार्यों ने पूजा को वैयावृत्त्य का अंग माना है, जैसे समन्तभद्र ने रत्नकरंड श्रावकाचार म, और किन्हीं ने इस सामयिक शिक्षाव्रत मे सम्मिलित किया है, जैसे सोमदेवसूरि ने यशस्तिलक चम्पू मे। जिनसेन आचार्य के आदिपुराण में पूजा, श्रावक के निरपेक्ष कर्म के रूप में अनुशंसित है।

पूजा के छह प्रकार बताये गये है, १. नाम पूजा, २. स्थापना पूजा, ३. द्रव्यपूजा, ४ क्षेत्रपूजा, ५. काल पूजा और ६. भाव-पूजा।[२] इनमे से स्थापना के दो है, सद्भाव स्थापना और असद्भाव स्थापना। प्रतिष्ठेय की तदाकार सांगोपाग प्रतिमा बनाकर उसकी प्रतिष्ठा करना सद्भाव स्थापना है और शिला, पूर्णकुंभ, अक्षत, रत्न, पुष्प, आसन आदि प्रतिष्ठेय से भिन्न आकार की वस्तुओं मे प्रतिष्ठेय का न्यास करना असद्भाव स्थापना है।[3] असद्भाव स्थापना पूजा का जैन ग्रन्थकारो ने अक्सर निषेध किया है क्योकि वर्तमान काल मे लोग कुलिंग मति म मोहित होते है, और वे असद्भाव स्थापना से अन्यथा कल्पना भी कर सकते है।[४] वसुनन्दि ने कृत्रिम और अकृत्रिम प्रतिमाओं की पूजा को ही स्थापना पूजा कहा है।[५]

---

१. जिणसिद्धसूरिपाठय साहूण ज सुयस्स विहवण।
कीरइ विविहा पूजा वियाण त पूजणविहाण।।
वसुनन्दिश्रावकाचार, ३८०।

२ वही, ३८१। ३ भट्टाकलंककृत प्रतिष्ठाकल्प।

४. वसुनन्दि श्रावकाचार, ३८५; आशाधर कृत प्रतिष्ठासारोद्धार, ६।६३.

५. एवं चिरतमाणं कट्टिमाकट्टिमाण पडिमाण।
जं कीरइ बहुमाण ठवणापुज्जं हि तं जाण।।
वसुनंदि श्रावकाचार, ४४६।

प्राणियों के आभ्यंतर मल को गलाकर दूर करने वाला और आनंददाता होने के कारण मंगल पूजनीय है। पूजा के समान मंगल के भी छह प्रकार जैन ग्रन्थकारों ने बताये हैं। वे ये हैं, १. नाम मंगल, २. स्थापना मंगल, ३. द्रव्यमंगल, ४. क्षेत्र मंगल, ५. काल मंगल और ६. भाव मंगल।[१] कृत्रिम और अकृत्रिम जिन बिम्बों को स्थापना मंगल माना गया है।[२] प्रवचन सारोद्धार और पद्मानंद महाकाव्य में जिनेन्द्र की प्रतिमाओं को स्थापना जिन या स्थापना अर्हत् की संज्ञा दी गयी है।[३] जयसेन के अनुसार, जिन बिम्ब का निर्माण कराना मंगल है।[४] भाग्यवान् गृहस्थों के लिए अपने (न्यायोपात्त) धन को सार्थक बनाने हेतु चैत्य और चैत्यालय निर्माण के बिना कोई अन्य उपाय नहीं है।[५]

जिन प्रतिमा के दर्शन कर चिदानंद जिन का स्मरण होता है। अतएव जिन बिम्ब का निर्माण कराया जाता है। बिम्ब में जिन भगवान् और उनके गुणों की प्रतिष्ठा कर उनकी पूजा की जाती है। जैन मान्यता है कि प्रथम तीर्थंकर भगवान् ऋषभनाथ के पुत्र भरत चक्रवर्ती ने कैलास पर्वत पर बहत्तर जिन मंदिरों का निर्माण करवाकर उनमें जिन प्रतिमाओं की स्थापना कराई थी और तब से जैन प्रतिमाओं की स्थापनाविधि की परम्परा चली।[६]

स्थापनाविधि या प्रतिष्ठाविधि का विस्तार से अथवा संक्षिप्त वर्णन करने वाले पचासों ग्रन्थ जैन साहित्य में उपलब्ध है। यद्यपि वे सभी मध्यकाल की रचनाएँ है, पर ऐसा नहीं है कि उन ग्रन्थों की रचना से पूर्व जैन प्रतिमाओं का निर्माण नहीं होता था। अतिप्राचीनकाल से जैन प्रतिमाओं का निर्माण और उनकी स्थापना होती रही है, इस तथ्य की पुष्टि निश्शंक रूपेण पुरातत्त्वीय प्रमाणों और प्राचीन जैन साहित्य के उल्लेखों से होती है। आवश्यक चूर्णि आदि ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है कि अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर के जीवनकाल मे, उनके दीक्षा लेने से पूर्व, उनकी चन्दनकाष्ठ की

१. तिलायपण्णत्ता, १/१८.
२. वही, १/२०.
३. प्रवचनसारोद्धार, द्वार ४२; पद्मानन्द महाकाव्य, १/३.
४. जयसेन कृत प्रतिष्ठापाठ, ७१५.
५. वही, २२.
६. वही, ६२–६३.

प्रतिमा निर्मित की गई थी।[1] हाथी गुंफा प्रशस्ति में नन्दराज द्वारा कलिंग की जिन प्रतिमा मगध ले जाये जाने का उल्लेख है। कुछ विद्वान हड़प्पा की कबन्ध प्रतिमा को जैन प्रतिमाओं का आद्यरूप स्वीकार करते हैं। लोहिनीपुर से प्राप्त और वर्तमान में पटना संग्रहालय में प्रदर्शित जिन प्रतिमाएँ तथा खंडगिरि (उड़ीसा) और मथुरा में उपलब्ध विपुल शिल्प, प्रतिमाएँ और आयागपट्ट आदि, जैन प्रतिमा निर्माण के प्राचीनतर नमूने हैं। कंकाली टीले से प्राप्त कलाकृतियों में विभिन्न जिन प्रतिमाओं के अतिरिक्त स्तूप, चैत्यवृक्ष, ध्वजस्तंभ, धर्मचक्र, और अष्टमंगलद्रव्य आदि का भी रूपांकन मिला है। देवी सरस्वती और नैगमेष की प्राचीन प्रतिमाएँ भी मथुरा में प्राप्त हुई है। प्रिन्स आफ वेल्स संग्रहालय की पार्श्वनाथ प्रतिमा लगभग इक्कीस सौ वर्ष प्राचीन आँकी गई है।

उपलब्ध जैन आगमों के पूर्ववर्ती विद्यानुवाद नामक दसवें और क्रिया-विशाल नामक तेरहवें पूर्व में शिल्प और प्रतिष्ठा संबंधी विवेचन का होना बताया जाता है पर वे ग्रन्थ विच्छिन्न हो गये है। सूत्रकृतांग, समवायांग कल्पसूत्र आदि में जैन प्रतिमाओं के संबंध में कुछ आद्य—सूचनाएँ मिलती है। समवायांग में ५४ महापुरुषों के विवरण हैं। पिछली परम्परा में इन महापुरुषों या शलाकापुरुषों की संख्या ६३ मानी गयी है किंतु समवायाग की सूची में ९ प्रतिनारायणों की गणना नहीं किये जाने के कारण उनकी संख्या ५४ ही है। शलाकापुरुषों में सर्वाधिक श्रेष्ठ और पूजनीय २४ तीर्थंकरों को माना गया है। तीर्थंकर जैन प्रतिमा विधान के मुख्य विषय है। मध्यकालीन जैन साहित्य में तीर्थंकरों के चरितग्रंथो मे उनके शासन से संबंधित देवताओं के रूपों का भी वर्णन मिलता है।

हेमचंद्र का त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित, शीलांकाचार्य का प्राकृत भाषा मे रचित चउपन्नमहापुरिसचरित, पुष्पदन्त का अपभ्रंश भाषा का तिसट्ठिमहापुरिसालंकार, आशाधर का संस्कृत भाषा में त्रिषष्टिस्मृतिशास्त्र और चामुण्ड-राय का कन्नड भाषा का त्रिषष्टिलक्षण महापुराण, ये सभी सुप्रसिद्ध चरितग्रंथ है। वर्द्धमानसूरि के आदिणाहचरिउ, विमलसूरि के पउमचरिउ, रविषेणाचार्य के पद्मचरित, जिनसेनाचार्य के हरिवंशपुराण और महापुराण, अमरचन्द्र सूरि कृत पद्मानंद महाकाव्य या चतुर्विंशति जिनेन्द्रचरित, गुणविजय सूरि कृत नेमिनाथ चरित्र, भवदेवसूरि कृत पार्श्वनाथ चरित्र तथा अन्य पुराणों और चरित्रकाव्यों मे विभिन्न तीर्थंकरो और उनके समकालीन महापुरुषों का

---

१. उमाकांत परमानंद शाह : स्टडीज इन जैन आर्ट, पृ०४।

विवरण दिया गया है और उसके साथ प्रतिमा पूजा संबंधी जानकारी भी दी गयी है।

प्रथमानुयोग के पुराण और चरितग्रन्थों के अलावा करणानुयोग साहित्य के ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न द्वीप, क्षेत्र, पर्वत आदि स्थानों में स्थित जिनालयों और जिनबिम्बों का वर्णन है। उन्हीं स्थानों में निवास करने वाले चतुर्निकाय देवों के संबंध में भी करणानुयोग साहित्य में विस्तार से जानकारी मिलती है। उमास्वाति के तत्त्वार्थसूत्र को दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों में मान्यता प्राप्त है। इस सूत्रग्रंथ के तृतीय और चतुर्थ अध्याय में अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक का वर्णन है। पद्मनन्दि के जंबूदीपपण्णत्तिसंगहो, यतिवृषभ के तिलोयपण्णत्ति, नेमिचन्द्र के त्रिलोकसार तथा जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीपसमास, क्षेत्रसमास, संग्रहणी आदि की विषयभूत सामग्री से भी जैन प्रतिमा–विज्ञान के विभिन्न अंगों का प्रामाणिक ज्ञान होता है।

तीर्थंकरों और सरस्वती, चक्रेश्वरी, अम्बिका, पद्मावती आदि देवियों की स्तुतिपरक स्तोत्र, आचार्यों और पंडितों द्वारा रचे गये थे। यह स्तोत्र-साहित्य जैन प्रतिमाशास्त्र के अध्ययन के लिये भी मूल्यवान् है। आचार्य समन्तभद्रका स्वयंभूस्तोत्र इस विषयक प्राचीनतर कृति है। पाँचवीं-छठी शताब्दी में मानतुंग ने भक्तामर स्तोत्र और कुमुदचंद्र ने कल्याणमंदिर स्तोत्र की रचना की। इनमें क्रमशः आदिनाथ और पार्श्वनाथ की स्तुति है। दोनों स्तोत्रों का जैन समाज के दिगम्बर और श्वेताम्बर सम्प्रदायों में प्रचार है। धनंजय कवि ने सातवीं शताब्दी में विषापहार स्तोत्र की, और वादिराज ने ग्यारहवीं शताब्दी में एकीभाव स्तोत्र की रचना की थी। जिनसहस्रनाम स्तोत्रों में भगवान् जिनेन्द्र देव को ब्रह्मा, विष्णु आदि नामों से भी स्मरण किया गया है। सिद्धसेन दिवाकर के जिनसहस्रनाम स्तोत्र का उल्लेख मिलता है। नौवीं शताब्दी ईस्वी में आचार्य जिनसेन ने, तेरहवीं शताब्दी में आशाधर पंडित ने, सोलहवीं शताब्दी में देवविजयगणि ने और सत्रहवीं शताब्दी में विनयविजय उपाध्याय ने जिनसहस्रनाम स्तोत्रों की रचना की थी। बप्पभट्टि, शोभनमुनि और मेरुविजय की स्तुतिचतुर्विंशतिकाएं प्रसिद्ध हैं। इन स्तोत्रों और स्तुतियों में जिन भगवान् के बिम्ब का शाब्दिक प्रतिबिम्ब परिलक्षित होता है।

अनेक आचार्यों और पंडितों ने सरस्वती, चक्रेश्वरी अम्बिका जैसी देवियों के स्तुतिपरक स्तोत्रों की भी रचना की थी। उदाहरण के लिये, आशा-

धर पंडित रचित सरस्वती स्तुति, जिनप्रभसूरि कृत शारदास्तवन, साध्वी शिवार्या द्वारा रचित पठितसिद्धसारस्वतस्तवन, जिनदत्तसूरि कृत अम्बिका स्तुति, और महामात्य वास्तुपाल विरचित अम्बिकास्तवन आदि के नाम गिनाये जा सकते है। इन स्तुतियो मे उन उन देवियो के वाहन, आयुध, रूप आदि का वर्णन किया गया है।

तान्त्रिक प्रभाव के कारण जैनो ने भी तरह तरह के यंत्र, मंत्र, तंत्र, चक्र आदि की कल्पना की। सिद्धान्त रूप से तन्त्रोपेक्षी होने के बावजूद भी समय की माँग का आदर करने के लिये जैन आचार्यों को भी तान्त्रिक ग्रन्थों और कल्पो की रचना करनी पडी थी। यह स्थिति मुख्यत नौवी-दसवी शताब्दी के साथ आयी। उस प्रवाह मे हेलाचार्य, इन्द्रनन्दि और मल्लिषेण जैसे दिग्गजों ने तान्त्रिक देवियो की साधना की और लौकिक कार्यसिद्धि प्राप्त की। हेलाचार्य ने ज्वालिनी कल्प की रचना की थी। उल्लेख मिलता है कि उन्होंने स्वय ज्वालिनी देवी के आदेश से वह रचना सम्पन्न की थी। हेलाचार्य द्रविड संघ के गणाधीश थे। दक्षिण देश के हेम नामक ग्राम मे किसी ब्रह्मराक्षस ने उनकी कमलश्री नामक शिष्या को ग्रसित कर लिया था। उस ब्रह्मराक्षस से शिष्या की मुक्ति के लिये हेलाचार्य ने ग्राम के निकटवर्ती नीलगिरि शिखर पर वह्नि देवी को सिद्ध किया और ज्वालिनी मंत्र उपलब्ध किया। परम्परागत रूप से वही मंत्र गुणनन्दि के शिष्य इन्द्रनन्दि को मिला किन्तु उन्होंने उस कठिन मंत्र को आर्या—गीता छंदो मे रचकर सरलीकृत किया। इन्द्रनन्दि के ज्वालिनी कल्प की प्रतिया उत्तर और दक्षिण भारत के शास्त्र-भण्डारो म उपलब्ध है। उनमे दिय गये विवरण से विदित होता है कि ५०० श्लोक सख्या वाले इस कल्प की रचना कृष्णराज के राज्यकाल मे मान्यखेट कटक म शक संवत् ८६१ की अक्षय तृतीया को सम्पूर्ण हुयी थी। इन्द्रनन्दि द्वारा रचित पद्मावती पूजा की प्रतियाँ भी उपलब्ध हुई है। उनके शिष्य वासवनन्दि की कृतियो का भी उल्लेख मिला है।

मल्लिषेण श्रीषेण के पुत्र और आचार्य जिनसेन के अग्र शिष्य थे। उनके सुप्रसिद्ध मंत्रशास्त्रीय ग्रन्थ भैरवपद्मावतीकल्प का दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनो सम्प्रदायो मे प्रचार रहा है। उस ग्रन्थ मे ४०० श्लोक है। ग्यारहवी शताब्दी ईस्वी के इस मांत्रिक विद्वान् की उपाधि उभयभाषाकविशेखर थी। उनके द्वारा रचित विद्यानुवाद, कामचाण्डालिनीकल्प, यक्षिणीकल्प और ज्वालिनी कल्प की प्रतिया विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे सुरक्षित है। सागरचन्द्र सूरि

के मंत्राधिराजकल्प में यक्ष-यक्षियों तथा अन्य देवताओं की आराधना की गई है। बप्पभट्टि, विजयकीर्ति और उनके शिष्य मलयकीर्ति के सरस्वतीकल्प, भट्टारक अरिष्टनेमि का श्रीदेवीकल्प, भट्टारक शुभचन्द्र का अम्बिकाकल्प, यशोभद्र उपाध्याय के शिष्य श्रीचन्द्रसूरि का अद्भुतपद्मावतीकल्प, ये सभी तांत्रिक प्रभावयुक्त हैं। इनमें देवियों के वर्ण, वाहन, आयुध आदि का विवरण उपलब्ध होने से वे जैन प्रतिमाशास्त्रीय अध्ययन के लिये उपयोगी हैं। लोकानुसरण करते हुये जैन आचार्यों ने ६४ योगिनियों और ९६ क्षेत्रपालों की स्तुतियां और उनकी पूजाविधि संबंधी कृतियों की भी रचनाएँ की थी।

श्रावकाचार युग में श्रावकाचार ग्रन्थों, संहिताओं और प्रतिष्ठापाठों की रचनाएं हुयीं। इन्द्रनन्दि और एकसंधि भट्टारक की जिनसंहिताओं की प्रतियां उत्तर भारत में आरा, दक्षिण में मूडबिद्री और पश्चिम में राजस्थान के शास्त्र भण्डारों में उपलब्ध हुई हैं। उपासकाध्ययन नामक श्रावकाचार ग्रन्थ का उल्लेख अनेक कृतिकारों ने यथास्थान किया है। पूज्यपाद द्वारा रचित उपासकाध्ययन का भी उल्लेख मिलता है। सोमदेवसूरि के यशस्तिलक चम्पू के एक भाग का तो नाम ही उपासकाध्ययन है। वसुनन्दि ने उपासकाध्ययन का उल्लेख किया है पर उनका तात्पर्य किस विशिष्ट कृति से है यह ज्ञात नहीं हो सका है। स्वयं वसुनन्दि ने भी श्रावकाचार विषयक स्वतंत्र ग्रन्थ की रचना की थी। चामुण्डराय ने अपने चारित्रसार में 'उक्तं च उपासकाध्ययने' लिखकर एक श्लोक उद्धृत किया है किन्तु वह श्लोक किसी उपलब्ध ग्रन्थ में मूलतः नहीं मिला है।

प्रतिष्ठाग्रन्थों में से जयसेन या वसुविन्दु कृत प्रतिष्ठापाठ में शासन देवताओं और यक्षों की पूजा का विधान नहीं मिलता। इस प्रतिष्ठापाठ की प्रकाशित प्रति में जयसेन कुंदकुंद आचार्य के अग्र शिष्य बताये गये हैं। ग्रन्थनिर्माण का उद्देश्य बताते हुये सूचित किया गया है कि कोंकण देश में रत्नगिरि शिखर पर लालाट्ट राजा ने दीर्घ चैत्य का निर्माण कराया था। उस कार्य के निमित्त गुरु की आज्ञा प्राप्तकर, जयसेन ने दो दिनों में ही प्रतिष्ठापाठ की रचना की।[1] विक्रम संवत् १०५५ में रचित धर्मरत्नाकर के कर्ता का नाम भी जयसेन था। किन्तु यह कहना कठिन है कि धर्मरत्नाकर के रचयिता जयसेन और वसुविन्दु अपर नाम वाले जयसेन अभिन्न हैं अथवा नहीं।

१. श्लोक ९२३–९२६

प्रतिष्ठासारसंग्रह के रचयिता वसुनन्दि के श्रावकाचार का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। वे आशाधर पंडित और अय्यपार्य से पूर्ववर्ती थे क्योंकि इन दोनों ने ही अपने अपने ग्रन्थों मे वसुनन्दि के मत का उल्लेख किया है। प्रतिष्ठासारसंग्रह की रचना के लिये वसुनन्दि ने चन्द्रप्रज्ञप्ति और सूर्य प्रज्ञप्ति के साथ महापुराण से भी सार ग्रहण किया था। आशाधर पंडित के प्रतिष्ठासारोद्धार की रचना विक्रम संवत् १२८५ में आश्विन पूर्णिमा को परमार नरेश देवपाल के राज्यकाल में नलकच्छपुर के नेमिनाथ चैत्यालय में सम्पूर्ण हुयी थी। ग्रन्थ की प्रशस्ति में[1] उल्लेख किया गया है कि प्राचीन जिनप्रतिष्ठाग्रन्थों का भलीभाँति अध्ययन कर और ऐन्द्र (संभवत: इन्द्रनन्दि के) व्यवहार का अवलोकन कर आम्नाय–विच्छेदरूपी तम को छेदने के लिये युगानुरूप ग्रन्थ की रचना की गयी। आशाधर जी ने वसुनन्दि के पक्षधर विद्वानों के विपरीत मत का भी उल्लेख किया है।[2] आशाधर के प्रतिष्ठासा-रोद्धार का प्रचार केल्हण नामक प्रतिष्ठाचार्य ने अनेक प्रतिष्ठाओं में पढ़कर किया था।

नेमिचन्द्र का प्रतिष्ठातिलक भी बहुप्रचारित ग्रन्थ है। उसमें इन्द्रनन्दि की रचना का उल्लेख है। नेमिचन्द्र जन्मना ब्राह्मण थे। प्रतिष्ठातिलक की पुष्पिका में उन्होंने लिखा है कि भरत चक्रवर्ती द्वारा निर्मित ब्राह्मण वंश मे से कुछ विवेकियों ने जैन धर्म को नहीं छोड़ा। उस वंश मे भट्टारक अकलंक, इन्द्रनन्दि मुनि, अनंतवीर्य, वीरसेन, जिनसेन, वादीभसिंह, वादिराज, हस्तिमल्ल (गृहाश्रमी), परवादिमल्ल मुनि हुये। उन्हीं के अन्वय मे लोकपाल नामक विद्वान द्विज हुआ जो गृहस्थाचार्य था। चोल राजा उसकी पूजा करते थे। लोकपाल राजा के साथ कर्णाटक मे प्रतिदेश पहुंचा। वहां उसकी वंश परम्परा मे समयनाथ, कवि राजमल्ल, चिंतामणि, अनंतवीर्य, संगीतज्ञ पायनाथ, आयुर्वेदज्ञ पार्श्वनाथ और षट्कर्मज्ञाता ब्रह्मदेव हुये। ब्रह्मदेव का पुत्र देवेन्द्र संहिता शास्त्र का ज्ञाता था। उसके आदिनाथ, नेमिचन्द्र और विजयप ये पुत्र थे। इन्हीं नेमिचन्द्र के द्वारा प्रतिष्ठातिलक की रचना की गयी।

नेमिचन्द्र की माता का नाम आदिदेविका बताया गया है। नाना विजयपार्य थे और नानी का नाम श्रीमती था। नेमिचन्द्र के तीन मामा थे, चंदपार्य,

१. श्लोक १८–२१

२. प्रतिष्ठासारोद्धार, १,१७५

ब्रह्मसूरि और पार्श्वनाथ। उनके ज्येष्ठ भ्राता आदिनाथ के त्रैलोक्यनाथ, जिनचंद्र आदि, स्वयं नेमिचन्द्र के कल्याणनाथ और धर्मशेखर तथा कनिष्ठ भ्राता विजय के समन्तभद्र नामक पुत्र हुये।

प्रतिष्ठातिलक की प्रशस्ति में नेमिचन्द्र ने विजयकीर्ति नामक आचार्य का स्मरण किया है, पर किस प्रसंग में, यह वहां स्पष्ट नहीं है। अभयचन्द्र नामक महोपाध्याय से नेमिचन्द्र ने तर्क, व्याकरण और आगम आदि की शिक्षा प्राप्त की थी एवं सत्यशासनपरीक्षाप्रकरण तथा अन्य ग्रन्थों की रचना की थी। प्रतिष्ठातिलक की प्रशस्ति से बताया गया है कि नेमिचन्द्र को राजा से पालकी, छत्र आदि वैभव प्राप्त हुये थे। उसी प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि उनका परिवार समृद्ध था। नेमिचन्द्र ने जैन मंदिर, मंडप, वीथिका आदि का निर्माण कराया था एवं पार्श्वनाथ मंदिर में गीत, वाद्य, नृत्य आदि का प्रबंध किया था। नेमिचन्द्र स्थिरकदम्ब नगर मे निवास करते थे। पुत्रों और बंधुओं की प्रार्थना पर उन्होंने प्रतिष्ठातिलक की रचना की थी।

हस्तिमल्ल के प्रतिष्ठापाठ का उल्लेख अय्यपार्य ने किया है। किन्तु उस ग्रन्थ की प्रमाणित प्रति अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी है। आरा के जैन सिद्धान्त भवन मे सुरक्षित प्रतिष्ठापाठ नामक हस्तलिखित ग्रन्थ के कर्ता संभवत. हस्तिमल्ल हो सकते है ? अय्यपार्य का प्रतिष्ठाग्रन्थ जिनेन्द्रकल्याणाभ्युदय के नाम से ज्ञात है। वे हस्तिमल्ल के अन्वय मे हुये थे और उनका गोत्र काश्यप था। अय्यप के पिता का नाम करुणाकर और माता का नाम अर्कमाम्बा था। करुणाकर गुणवीरसूरि के शिष्य पुष्पसेन के शिष्य थे। अय्यप के गुरु धरसेन आचार्य थे। अय्यप के जिनेन्द्रकल्याणाभ्युदय में ३५६० श्लोक हैं। वह रुद्रकुमार के राज्य मे एकशिलानगरी मे शक संवत् १२४१ में माघ सुदि १० रविवार को सम्पूर्ण हुआ था।[1] अय्यपार्य ने स्वयं सूचित किया है कि उन्होंने वीराचार्य, पूज्यपाद, जिनसेन, गुणभद्र, वसुनन्दि, इन्द्रनन्दि, आशाधर और हस्तिमल्ल के ग्रन्थो से सार लेकर पुष्पसेन गुरु के उपदेश से ग्रन्थ की रचना की है।

वादि कुमुदचन्द्र के प्रतिष्ठाकल्पटिप्पण या जिनसंहिता की प्रतियां कई स्थानो मे उपलब्ध है। मद्रास ओरियण्टल लाइब्रेरी में सुरक्षित प्रति

१. जैनग्रन्थप्रशस्तिसंग्रह, प्रथम भाग, पृष्ठ ११२, दौर्बलि शास्त्री श्रवणबेल्गुल की प्रति से उद्धृत अंश।

की उत्थानिका और पुष्पिका से ज्ञात होता है कि कुमुदचन्द्र माघनन्दि सिद्धान्तचक्रवर्ती के शिष्य थे जिनका स्वयं एक प्रतिष्ठाकल्प उपलब्ध है। भट्टाकलंक के प्रतिष्ठाकल्प, ब्रह्मसूरि के प्रतिष्ठातिलक, भट्टारक राजकीर्ति के प्रतिष्ठादर्श, पंडिताचार्य नरेन्द्रसेन के प्रतिष्ठादीपक, पंडित परमानन्द की सिंहासनप्रतिष्ठा आदि आदि रचनाओं की हस्तलिखित प्रतिया आरा, जयपुर तथा अन्य स्थानों के शास्त्रभण्डारों में अद्यावधि सुरक्षित हैं। ये सभी दिगम्बर परम्परा के ग्रन्थ हैं।

श्वेताम्बर परम्परा के सकलचन्द्र उपाध्याय का प्रतिष्ठापाठ गुजराती अनुवाद सहित प्रकाशित हुआ है। उसमें हरिभद्र सूरि, हेमचन्द्र, श्यामाचार्य गुणरत्नाकरसूरि और जगच्चंद्र सूरीश्वर के प्रतिष्ठाकल्पों का उल्लेख किया गया है। श्वेताम्बर परम्परा के ही आचारदिनकर में प्रतिष्ठाविधि का बड़े विस्तार से वर्णन है। ग्रंथकर्ता वर्धमान सूरि ने दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों शाखाओं के शाखाचार का विचार कर आवश्यक में उक्त आचार का व्यापन किया है। उन्होंने चन्द्रसूरि का उल्लेख करते हुए लिखा है कि उनकी लघुतर प्रतिष्ठाविधि को आचार दिनकर में विस्तार से कहा गया है। वर्धमानसूरि ने आर्यनन्दि, क्षपक चंदननन्दि, इन्द्र नन्दि और वज्रस्वामी के प्रतिष्ठाकल्पों का अध्ययन किया था। आचार दिनकर की रचना विक्रम संवत् १४६८ में, कार्तिकी पूर्णिमा को अनंतपाल के राज्य में जालंधरभूषण नन्दवन नामक पुर में पूर्ण हुई थी।[1]

श्वेताम्बर शाखा का निर्वाणकलिका नामक ग्रन्थ जैन प्रतिमा विज्ञान के अध्ययन के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कृति है। इसका प्रतिमालक्षण स्पष्ट और सुबोध है। ग्रन्थ पादलिप्तसूरिकृत कहा जाता है किन्तु वे पश्चात्-कालीन आचार्य थे। निर्वाणकलिका के अतिरिक्त नेमिचन्द्र के प्रवचनसारोद्धार और जिनदत्त सूरि के विवेकविलास में भी जैन प्रतिमाशास्त्रीय विवरण मिलते हैं।

दिगम्बर शाखा के बोधपाहुड, भावसंग्रह (देवसेन) यशस्तिलकचम्पू, प्रवचनसार, धर्मरत्नाकर, आदि ग्रन्थों में जिन पूजा का निर्देश मिलता है। सातवीं शताब्दी ईस्वी में जटासिंहनन्दी द्वारा रचित पौराणिक काव्य वरांगचरित के २२-२३ वें सर्ग में जिनपूजा और अभिषेक का वर्णन है

१. ग्रन्थप्रशस्ति, पन्ना १५०।

किन्तु उसमें दिक्पालादिक के आवाहन का नामोल्लेख भी नहीं है। इससे ज्ञात होता है कि जैन पूजा-विधान में दिक्पालादिक को पश्चात्काल में -१० वीं-११ वीं शताब्दी के लगभग—महत्त्व दिया गया। सोमदेवसूरि और आशाधर के ग्रन्थों में दिक्पालादिक को बलि प्रदान करने का विधान है। जान पड़ता है कि सोमदेव के समय में दक्षिण भारतीय जैनों में शासन देवताओं की बड़ी प्रतिष्ठा थी। इसी कारण, सोमदेव को अपने उपासकाध्ययन के ध्यान प्रकरण में स्पष्ट उल्लेख करना पड़ा कि तीनों लोकों के द्रष्टा जिनेन्द्रदेव और व्यन्तरादिक देवताओं को जो पूजाविधानों में समान रूप से देखता है, वह नरक में जाता है।[1] सोमदेवसूरि ने स्वीकार किया है कि परमागम में शासन की रक्षा के लिये शासन देवताओं की कल्पना की गयी है। अतः सम्यग्दृष्टि उन्हें पूजा का अंश देकर उनका केवल सम्मान करते हैं।

जैन प्रतिमाशास्त्र के अध्ययन के लिये हरिभद्रसूरि कृत पञ्चवास्तु-प्रकरण और ठक्कर फेरु रचित वास्तुसारप्रकरण विशेष उपयोगी ग्रन्थ हैं। जिनप्रभसूरि के विविधतीर्थंकल्प से भी जिनमंदिरों और जिनबिम्बों के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है।

अनेक जैनेतर ग्रन्थों में जैन प्रतिमाशास्त्रीय ज्ञान सन्निहित है। गुप्त कालीन मानसार के ५५ वें अध्याय में जैन लक्षण विधान है। वराह मिहिर की बृहत्संहिता में जैन प्रतिमाओं के लक्षण बताये गये हैं। अभिलषितार्थ चिन्तामणि, अपराजितपृच्छा, राजवल्लभ, दीपार्णव, देवतामूर्ति प्रकरण और रूपमंडन में भी तीर्थंकरों और शासन देवताओं की प्रतिमाओं के लक्षण बताये गये हैं।

आधुनिक काल में जेम्स बर्जेस, देवदत्त भण्डारकर, बी० भट्टाचार्य, टी० एन० रामचन्द्रन, डाक्टर सांकलिया, डाक्टर उमाकांत परमानन्द शाह, बाबू छोटेलाल जैन प्रभृति विद्वानों ने जैन प्रतिमा शास्त्र विषयक अनुसंधानात्मक प्रबंध प्रकाशित किये हैं। डाक्टर द्विजेन्द्रनाथ शुक्ल, आर० एस० गुप्ते तथा अन्य विद्वानों ने भी अपने प्रतिमा शास्त्रीय ग्रंथों में जैन प्रतिमा शास्त्र विषयक जानकारी सम्मिलित की है। ये सभी जैन प्रतिमा विज्ञान के आधारभूत है।

१—श्लोक ६९७-६९९।

द्वितीय अध्याय

जैन मंदिर और प्रतिमाएं

मंदिर निर्माण के योग्य स्थान

मंदिर कैसे स्थान पर निर्मित किये जाना चाहिये ? इस जिज्ञासा का समाधान प्रायः सभी ग्रंथकारो ने एक समान उत्तर देकर किया है। जयसेन ने नगर के शुद्ध प्रदेश में, अटवी में, नदी के समीप में और पवित्र तीर्थभूमि में विराजित जैनमंदिर को प्रशस्त कहा है।[1] वसुनन्दि के अनुसार, तीर्थकरों के जन्म, निष्क्रमण, ज्ञान और निर्वाण भूमि में तथा अन्य पुण्य प्रदेश, नदीतट, पर्वत, ग्रामसन्निवेस, समुद्रपुलिन आदि मनोज्ञ स्थानो पर जिनमंदिरों का निर्माण किया जाना चाहिये।[2] अपराजितपृच्छा में जिनमंदिरो को शान्तिदायक स्वीकार किया गया है और उन्हे नगर के मध्य में बनाने का विधान किया गया है।[3]

जिनमंदिर के लिये भूमि का चयन करते समय अनेक उपयोगी बातों पर विचार करना होता है, भूमि शुद्ध हो, रम्य हो, स्निग्ध हो, सुगंधवाली हो, दूर्वा से आच्छादित हो, पोली न हो, वहा कीड़े-मकोड़ो का निवास न हो और श्मशान भूमि भी न हो।[4] भूमि का चयन मंदिर निर्माण विधि का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है। योग्य भूमि पर निर्मित प्रासाद ही दीर्घकाल तक स्थित रह सकता है।

विभिन्न ग्रंथकारो ने भूमिपरीक्षा के दो उपाय बताये है। जिस भूमि पर मंदिर निर्मित करने का विचार किया गया हो, उसमे एक हाथ गहरा गड्ढा खोदा जावे और फिर उस गड्ढे को उसी मे से निकली मिट्टी से पूरा जावे। ऐसा करने पर यदि मिट्टी गड्ढे से अधिक पड़े तो वह भूमि श्रेष्ठ मानी गई है। यदि मिट्टी गड्ढे के बराबर हो तो भूमि मध्यम कोटि की होती है और यदि उतनी मिट्टी से गड्ढा पुनः पूरा न भरे तो वह भूमि अधम जाति की

---

१. प्रतिष्ठापाठ, १२५।

२. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ३/३,४।

३. अपरा० १७६/१८।

४. आशा० १/१८; वसुविन्दु, २८।

होती है। वहां मंदिर का निर्माण नही करना चाहिये।[१] ठक्कर फेरु ने यह उपाय भी बताया हैं कि उत्खात गड्ढे को जल से परिपूर्ण कर सौ कदम दूर जाइये। लौट कर आने पर यदि गड्ढे का जल एक अंगुल कम मिले तो भूमि को उत्तम, दो अंगुल कम मिलने पर मध्यम और तीन अंगुल कम होने पर अधम समझना चाहिये।[२] निर्वाणकलिकाकार ने गड्ढे के सम्पूर्ण भरे रहने पर भूमि को श्रेष्ठ, एक अंगुल खाली होने पर मध्यम और उससे अधिक खाली हो जाने पर निकृष्ट कहा है।[३]

प्रतिष्ठाग्रंथों तथा वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में मंदिरों के प्रकार आदि का विवरण मिलता है किन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ का विवेच्य विषय नहीं होने के कारण तद्विषयक विवेचन यहां नही किया जा रहा है।

प्रतिमा घटन द्रव्य

प्राचीन काल में मंदिरों में प्रतिष्ठा करने के लिये प्रतिमाओं का निर्माण किया जाता था। वे दो प्रकार की होती थी, प्रथम चल प्रतिमा और द्वितीय अचल प्रतिमा। अचल प्रतिमा अपनी वेदिका पर स्थिर रहती है किन्तु चल प्रतिमा विशिष्ट विशिष्ट अवसरों पर मूल वेदी से उठाकर अस्थायी वेदी पर लायी जाती है और उत्सव के अन्त मे यथास्थान वापस पहुंचायी जाती हैं। अचल प्रतिमा को ध्रुववेर और चल प्रतिमा को उत्सववेर कहा जाता है। इन्हें क्रमशः स्थावर और जंगम प्रतिमा भी कहते हैं।

वसुनन्दि के श्रावकाचार में मणि, रत्न, स्वर्ण, रजत, पीतल, मुक्ताफल और पाषाण की प्रतिमाएं निर्मित किये जाने का विधान है।[४] जयसेन ने स्फटिक की प्रतिमाएं भी प्रशस्त बतायी है।[५] काष्ठ, दन्त और लोहे की प्रतिमाओ के विषय मे विभिन्न आचार्यो में मतभेद है। कुछ आचार्यो ने काष्ठ, दन्त और लोहे की प्रतिमाओ के निर्माण का किसी भी प्रकार से उल्लेख नही किया है। कुछ ने इन द्रव्यों से जिनबिम्ब निर्माण किये जानेका स्पष्ट निषेध किया है

१. आशा० १।१६ ; वसुबिन्दु २६ ; वास्तुसारप्रकरण १।३, निर्वाण कलिका, पन्ना १०।
२. वास्तुसारप्रकरण १।४.
३. निर्वाणकलिका, पन्ना १०।
४. श्रावकाचार, ३९०।
५. प्रतिष्ठापाठ, ६९।

जबकि कुछ ने ऐसे बिम्बों की प्रतिष्ठाविधि का वर्णन किया है। भट्टाकलंक ने मिट्टी, काष्ठ और लौह से निर्मित प्रतिमाओं को प्रतिष्ठेय बताया है।[१] वर्धमानसूरि ने काष्ठमय, दन्तमय और लेप्यमय प्रतिमाओं की प्रतिष्ठाविधि का वर्णन किया है[२] किन्तु कांसे, शीसे और कलई की प्रतिमाओं के निर्माण का निषेध किया है। जयसेन आदि आचार्यों ने मिट्टी, काष्ठ और लेप से बनी प्रतिमाओं को पूज्य नही बताया है।[३] यद्यपि जीवन्तस्वामी की चन्दनकाष्ठ की प्रतिमा निर्मित किये जाने का प्राचीन ग्रन्थो में उल्लेख मिलता है[४] पर ऐसा प्रतीत होता है कि काष्ठ जैसे भंगुर द्रव्यों से जिनप्रतिमाएं निर्मित किये जाने की विचारधारा को जैन परम्परा में कभी स्थायी मान्यता प्राप्त नही हो सकी। पाषाण की प्रतिमाएं निर्मित किया जाना सर्वाधिक मान्यताप्राप्त एवं व्यावहारिक रहा।

प्रतिमा निर्माण के लिये शिला के अन्वेषण और उसके गुण दोषों के विचार के विषय मे भी प्राचीन ग्रन्थो मे विवेचन मिलता है। आशाधर ने लिखा है कि जब जिनमंदिर के निर्माण का कार्य पूरा हो जावे अथवा पूरा होने को हो तो प्रतिमा के लिये शिला का अन्वेषण करने शुभ लग्न और शकुन में इष्ट शिल्पी के साथ जाना चाहिये।[५] वसुनन्दि ने श्वेत, रक्त, श्याम, मिश्र, पारावत, मुद्‌ग, कपोत, पद्‌म, मांजिष्ठ, और हरित वर्ण की शिला को प्रतिमा निर्माण के लिये उत्तम बताया है।[६] वह शिला कठिन, शीतल, स्निग्ध, सुस्वाद सुस्वर, दृढ़, सुगंधयुक्त, तेजस्विनी और मनोज्ञ होना चाहिये।[७] बिन्दु और रेखाओं वाली शिला प्रतिमा निर्माण कार्य के लिये वर्ज्य कही गयी है। उसी प्रकार, मृदु, विवर्ण, दुर्गन्धयुक्त, लघु, रूक्ष, धूमल और निःशब्द शिलाएं भी अयोग्य ठहरायी गयी है।[८]

---

१. तद्‌यार्ग्यैः सगुणैर्द्रव्यैर्निर्दोषैः प्रौढ़शिल्पिना।
   रत्नपाषाणमृद्‌दारुलोहाद्यैः साधुनिर्मितम्॥

२. आचार दिनकर, उदय ३३।

३. प्रतिष्ठापाठ, १८३।

४. उमाकान्त परमानन्द शाह : स्टडीज इन जैन आर्ट, पृष्ठ ८।

५. प्रतिष्ठासारोद्धार, १।८६।

६. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ३।७७।

७. वही, ३।७८। प्रतिष्ठासारोद्धार, १।५०, ५१।

८. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ३।७९।

गृह पूज्य प्रतिमाएं

निवास गृह में पूज्य प्रतिमाओं की अधिकतम ऊँचाई के विषयमें जैन ग्रन्थकारों में किञ्चित् मतभेद दिखायी पड़ता है। दिगम्बर शाखा के वसुनन्दि ने द्वादश अंगुल तक ऊंची प्रतिमा को घर में पूजनीय बताया है।[1] किन्तु ठक्कर फेरु ग्यारह अंगुल तक ऊँची प्रतिमा को ही गृह पूज्य कहते हैं।[2] इस का मुख्य कारण यह है कि ठक्कर फेरु ने सम अंगुल प्रमाण प्रतिमाओं को अशुभ माना है। आचारदिनकरकार भी विषम अंगुल प्रमाण की ही प्रतिमाएँ निर्मित किये जाने का विधान और सम अंगुल प्रमाण की प्रतिमाएँ निर्मित करनेका निषेध करते हैं।[3]

ठक्कर फेरु ने सिद्धों की केवल धातुनिर्मित प्रतिमाओं को ही गृह पूज्य बताया है। सकलचन्द्र उपाध्याय जैसे ग्रन्थकारों ने बालब्रह्मचारी तीर्थंकरों की प्रतिमाओं को भी गृहपूज्य नहीं कहा है क्योंकि उन प्रतिमाओं के हर क्षण दर्शन करते रहनेसे परिवार के सभी लोगों को वैराग्य हो जाने की आशंका हो सकती है। मलिन, खण्डित, अधिक या हीन प्रमाण वाली प्रतिमाएँ भी गृह में पूज्य नहीं है।

अपूज्य प्रतिमाएँ

रूपमण्डनकार ने हीनाँग और अधिकांग प्रतिमाओं के निर्माण का सर्वथा निषेध किया है।[4] शुक्रनीति में हीनांग प्रतिमा को, निर्माण कराने वाले की और अधिकाँग प्रतिमा को शिल्पी की मृत्यु का कारण बताया है।[5] जैन परम्परा के ग्रन्थों में भी वक्राँग, हीनांग और अधिकाँग प्रतिमा निर्माण को भारी दोष माना गया है। वास्तुसार प्रकरण में सदोष प्रतिमा के कुफल का विस्तार से वर्णन है। टेढ़ी नाकवाली प्रतिमा बहुत दुखदायी होती है। प्रतिमा के अंग छोटे हों तो वह क्षयकारी होती है। कुनयन प्रतिमा में नेत्रनाश और अल्पमुखवाली प्रतिमा के निर्माण से भोगहानि होती है। यदि प्रतिमा की कटि

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/७७

२. वास्तुसारप्रकरण, २/४३

३. आचार दिनकर, उदय ३३।

४. रूपमण्डन १/१४.

५. शुक्रनीति, ४/५०६

हीनप्रमाण हो तो आचार्य का नाश होता है। हीनजँघा प्रतिमा से पुत्र और बंधु की मृत्यु हो जाती है। प्रतिमा का आसन हीनप्रमाण होने से ऋद्धियाँ नष्ट होती हैं। हाथ-पैर हीन होने से धन का क्षय होता है। प्रतिमा की गर्दन उठी हुयी हो तो धन का विनाश, वक्रग्रीवा मे देश का विनाश और अधोमुखसे चिन्ताओं की वृद्धि होती है। ऊँच-नीच मुखवाली प्रतिमासे विदेशगमन का कष्ट होता है। अन्यायोपात्त धन से निर्मित करायी गयी प्रतिमा दुर्भिक्ष फैलाती है। रौद्र प्रतिमामे निर्माण करानेवाले की और अधिकाग प्रतिमा मे शिल्पी की मृत्यु होती है। दुर्बल अंगवाली प्रतिमासे द्रव्य का नाश होता है। तिरछी दृष्टि वाली प्रतिमा अपूज्य है। अति गाढ दृष्टि युक्त प्रतिमा अशुभ एव अधोदृष्टि प्रतिमा विघ्नकारक होती है।[1] वसुनन्दि न जिनप्रतिमामे नासाग्रनिहित, शान्त, प्रसन्न एव मध्यस्थ दृष्टि को उत्तम बताया है। वीतराग की दृष्टि न तो अत्यन्त उन्मीलित हो और न विस्फुरित हो। दृष्टि तिरछी, ऊँची या नीची न हो इसका विशेष ध्यान रखे जाने का विधान है।[2] वास्तुसारप्रकरण के समान वसुनन्दि ने भी अपने प्रतिष्ठासारसग्रह मे सदोष प्रतिमा के निर्माण से होने वाली हानियो का विवरण दिया है।[3] आशाधर पंडित और वर्धमानसूरि ने भी अनिष्टकारी, विकृतांग और जर्जर प्रतिमाओ की पूजा का निषेध किया है।[4] यद्यपि महाभारत के भीष्म पर्व, बृहत्सहिता, रूपमण्डन आदि ग्रन्थो मे उल्लेख मिलता है कि प्रतिमा के निर्माण, प्रतिष्ठा और पूजन मे यथेष्ट विधि के अपालन के कारण प्रतिमा मे विभिन्न विकृतिया उत्पन्न हो जाती है। किन्तु वीतराग भगवान् की प्रतिमामे विकृति उत्पन्न होने का कोई उल्लेख किसी भी जैन ग्रन्थमे नही मिलता।

भग्न प्रतिमाएँ

भग्न प्रतिमाओं की पूजा नही की जाती। उन्हे सम्मान के साथ विसर्जित कर दिया जाता है। मूलनायक प्रतिमा के मुख, नाक, नेत्र, नाभि और कटि के भग्न हो जाने पर वह त्याज्य होती है।[5] जिनप्रतिमा के विभिन्न अग-

१. वास्तुसार प्रकरण, २/४६-५१
२. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ४/७३-७४.
३. वही, ४/७५-८०
४. प्रतिष्ठासारोद्धार, १/८३; आचार दिनकर, उदम ३३
५. वास्तुसारप्रकरण, २/४०

प्रत्यंगो के भंग होने का फल बताते हुये ठक्कुर फेरु ने कहा है कि नखभंग होने से शत्रुभय, अंगुली-भंग से देशभंग, बाहु भंग होने से बंधन, नासिका भंग होने से कुलनाश और चरण भंग होने से द्रव्यक्षय होता है।[१] किन्तु इन्ही ग्रन्थकार का यह भी मत है कि जो प्रतिमाएँ सौ वर्ष से अधिक प्राचीन हो और महापुरुषों द्वारा स्थापित की गयी हो, वे यदि विकलांग भी हो जावें तब भी पूजनीय है।[२] आचार दिनकरकार ने भी यह मत स्वीकार किया है, किन्तु उन्होने उन प्रतिमाओं को केवल चैत्य मे रखने योग्य कहा है, गृह में पूज्य नहीं।[३]

भग्न प्रतिमाओ के जीर्णोद्धार के संबंध मे भी विभिन्न ग्रन्थों में उल्लेख मिलते है। रूपमण्डन[४] मे धातु, रत्न और विलेप की प्रतिमाओं के अंगभंग होने पर उन्हे संस्कार योग्य बताया है किन्तु काष्ठ और पाषाण की प्रतिमाओं के जीर्णोद्धार का निषेध किया गया है। ठक्कर फेरु केवल धातु और लेप की प्रतिमाओ के जीर्णोद्धार के पक्ष में है, वे रत्न, काष्ठ और पाषाण की प्रतिमाओं को जीर्णोद्धार के अयोग्य मानते है।[५] आचारदिनकरकार भी इसी मत के समर्थक हैं।[६] निर्वाणकलिका मे शैलमय बिम्ब के विसर्जन की विधि बतायी है किन्तु स्वर्णबिम्ब को पूर्ववत निर्मित कर पुनः प्रतिष्ठेय कहा गया है।[७]

जिन प्रतिमा के लक्षण

जैन प्रतिष्ठाग्रन्थो और बृहत्संहिता, मानसार, समरांगणसूत्रधार, अपराजितपृच्छा, देवतामूर्त्तिप्रकरण, रूपमण्डन आदि ग्रन्थों मे जिन प्रतिमा के लक्षण बताये गये है। जिन प्रतिमाएं केवल दो आसनों मे बनायी जाती हैं, एक तो कायोत्सर्ग आसन जिसे खड्गासन भी कहते है और द्वितीय पद्मासन। इसे कही कही पर्यक आसन भी कहा गया है। इन दो आसनों को छोड़कर किसी अन्य आसन मे जिनप्रतिमा निर्मित किये जाने का निषेध किया गया है।

१. वास्तुसारप्रकरण, २/४४
२. वही २/३६
३. आचारदिनकर, उदय ३३
४. १/१२
५. वास्तुसारप्रकरण, २/४१
६. उदय ३३
७. पत्र ३१

जयसेन ने जिन बिम्ब को शांत, नासाग्रदृष्टि, प्रशस्तमानोन्मानयुक्त, ध्यानारूढ एवं किञ्चित् नम्रग्रीव बताया है । कायोत्सर्ग आसन मे हाथ लम्बायमान रहते है एव पद्मासन प्रतिमा मे वामहस्त की हथेली दक्षिण हस्त की हथेली पर रखी हुयी होती है ।[1] जिन प्रतिमा दिगम्बर, श्रीवक्षयुक्त नखकेशविहीन, परम शान्त, वृद्धत्व तथा बाल्य रहित, तरुण एवं वैराग्य गुण से भूषित होती है । वसुनन्दि[2] और आशाधर पंडित[3] ने भी जिन प्रतिमा के उपर्युक्त लक्षणो का निरूपण किया है । विवेक-विलास मे कायोत्सर्ग और पद्मासन प्रतिमाओ के सामान्य लक्षण बताये गये है ।[4]

सिद्धपरमेष्ठी की प्रतिमाओ मे प्रातिहार्य नही बनाये जाते ।[5] अर्हत्प्रतिमाओ मे उनका होना आवश्यक है । अर्हत् और सिद्ध, दोनो की मूल प्रतिमाएं बनायी तो समान जाती है पर अष्ट प्रातिहार्यों के होने अथवा न होने की अवस्था मे उनकी पहचान होती है । अर्हन् अवस्था की प्रतिमा मे आठ प्रातिहार्यो के साथ दाये ओर यक्ष, बाये ओर यक्षी और पादपीठ के नीचे जिनका लाछन भी दिखाया जाता है ।[6] तिलोयपण्णत्ती मे भी सिंहासन तथा यक्षयुगल से युक्त जिन प्रतिमाओ का वर्णन है । ठक्कर फेरु ने तीर्थंकर प्रतिमा के आसन और परिकर का विस्तार से वर्णन किया है ।[7] मानसार मे भी जिन प्रतिमाओ के परिकर आदि का वर्णन प्राप्त है । अपराजितपृच्छा मे यक्ष--यक्षी, लाछन और प्रातिहार्यों की योजना का विधान है ।[8] सूत्रधार मंडन के दोनो ग्रन्थो मे जिन प्रतिमा को छत्रत्रय, अशोकद्रुम, देवदुन्दुभि, सिंहासन, धर्मचक्र आदि से युक्त बताया गया है ।

१ प्रतिष्ठापाठ, ७०

२. प्रतिष्ठासारसंग्रह ४/१,२,४

३. प्रतिष्ठासारोद्धार, १/६३

४. विवेक विलास १/१२८--१३०

५. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ४।७०

६. प्रतिष्ठासारोद्धार, १/७६--७७

७. वास्तुसारप्रकरण, २/२६--३८

८. अपराजितपृच्छा, १३३/२६--२९

प्रत्येक तीर्थंकर प्रतिमा अपने लांछन से पहचानी जाती है। वह लांछन प्रतिमा के पादपीठ पर अंकित किया होता है।[1] किन्तु, कुछ तीर्थंकरों की प्रतिमाओं में उनके विशिष्ट लक्षण भी दिखाये जाते हैं, जैसे आदि जिनेन्द्र की प्रतिमा जटाशेखर युक्त होती है,[2] सुपार्श्वनाथ के मस्तक पर सर्प के पांच फणों का छत्र[3] और पार्श्वनाथ के मस्तक पर सातफणों वाले नाग का छत्र होता है।[4] बलराम और वासुदेव सहित नेमिनाथ की प्रतिमा मथुरा में प्राप्त हुयी है।

आचार्यों और साधुओं की प्रतिमाएं पिच्छिका, कमण्डलु या पुस्तक के सद्भाव के कारण पहचान ली जाती हैं।

१. अति प्राचीन प्रतिमाओं में लांछन नही होते थे। मथुरा की कुषाण कालीन जिन प्रतिमाओं में लांछन नही हैं।

२. तिलोयपण्णत्ती, ४/२३०

३. पद्मानंदमहाकाव्य, १/१०

४. वही, १/२६

तृतीय अध्याय

तालमान

जैन और जैनेतर शिल्पग्रन्थों में जिन प्रतिमा के मानादिक का विवरण मिलता है। रूपमण्डन जैसे कुछ ग्रन्थों में जिन प्रतिमा का ऊर्ध्वमान दशताल कहा गया है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि नवताल जिनप्रतिमा के निर्माण विधान की मान्यता प्रायः प्रचलित रही है और शिल्पकारों ने अधिकतर उसी का अनुसरण किया है।

परमाणु तालमान की सबसे छोटी इकाई है। वह अत्यन्त सूक्ष्म स्वरूपी है। तिलोयपण्णत्ती में[1] बताया गया है कि परमाणुओं के अनंतानंत बहुविध द्रव्य से एक उपसन्नासन्न स्कंध बनता है और आठ उपसन्नासन्न स्कंधों के बराबर एक सन्नासन्न स्कंध होता है।

सन्नासन्न स्कंध से ऊंची इकाईयों को तिलोयपण्णत्तीकार इस प्रकार बताते है।[2]:--

८ सन्नासन्न स्कंध = १ त्रुटिरेणु
८ त्रुटिरेणु = १ त्रसरेणु
८ त्रसरेणु = १ रथरेणु
८ रथरेणु = १ उत्तम भोगभूमि का बालाग्र
८ उत्तम भोगभूमि बालाग्र = १ मध्यम भोगभूमि का बालाग्र
८ मध्यम भोगभूमि बालाग्र = १ जघन्य भोगभूमिका बालाग्र
८ जघन्य भोगभूमि बालाग्र = १ कर्मभूमि का बालाग्र
८ कर्मभूमि बालाग्र = १ लिक्षा
८ लिक्षा = १ जूं
८ जूं = १ यव
८ यव = १ अंगुल

---

१. १/१०२-१०३
२. १/१०४-१०६

कौटिल्य के अर्थशास्त्र (२,२०, २--३) में ८ परमाणु=१ रथरेणु और ८ रथरेणु=१ लिक्षा का मान बताया गया है। बृहत्संहिता में रेणु और लिक्षा के बीच बालाग्र का भी विचार किया गया है। तदनुसार ८ परमाणु= १ रजांश, ८ रजांश=१ बालाग्र और ८ बालाग्र=१ लिक्षा का क्रम होता है।

आठ यवमध्यों का अंगुल कहते हुये भी अर्थशास्त्रकार ने बताया है कि सामान्यतया मध्यम कद के पुरुष की मध्य अंगुली के मध्य भाग की मोटाई एक अंगुल का मान है।[1]

तिलोयपण्णत्तीकार ने तीन प्रकार के अंगुल बताये हैं, उत्सेधांगुल, प्रमाणांगुल और आत्मांगुल।[2] उन्होंने बताया है कि जो अंगुल उपर्युक्त परिभाषा से सिद्ध किया गया है वह उत्सेधसूच्यंगुल है। प्रमाणांगुल पाँच सौ उत्सेधांगुल के बराबर होता है तथा भरत और ऐरावत क्षेत्र में उत्पन्न मनुष्यों के अपने अपने काल के अंगुल का नाम आत्मागुल है।

उपर्युक्त तीन प्रकार के अंगुलों में से पांच सौ उत्सेधसूच्यंगुल के बराबर वाले अंगुल के मान से प्रतिमाओं का निर्माण किया जा सकना वर्तमान काल के लिये असंभव तो है ही, पर आठ यवमध्य वाले अंगुल और स्वकीय अंगुल के मानवाली प्रतिमाओं का निर्माण भी शास्त्रीय मानयोजना के अनुसार अव्यावहारिक था। स्वकीयागुल मान से यह स्पष्ट नहीं होता कि वह मूर्ति निर्माण करानेवाले का अंगुल होना चाहिये अथवा शिल्पी का अंगुल। दोनों के अंगुल की मोटाई में आधिक्य और न्यूनता की संभावना हो सकती है। ऐसी स्थिति में, यह प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में प्रतिमा निर्माण कार्य के लिये न तो आठ यव वाले अंगुल के मान को और न शिल्पकार अथवा निर्माता के अंगुल वाले मान को ही सुनिश्चित मान माना जा सका था। एक ही समय में और संभवतः एक ही शिल्पी द्वारा निर्मित भिन्न-भिन्न प्रतिमाएं छोटी और बड़ी मिलती है। यदि उपर्युक्त मानयोजना के अनुसार वे निर्मित की गयी होतीं तो उनका मान एक सा होना चाहिये था। इसलिये यह मानना पड़ेगा कि उपर्युक्त मानो के अतिरिक्त एक और मान को वास्तविक मान्यता प्राप्त थी

१. अर्थशास्त्र, २,२०,७

२. तिलोयपण्णत्ती, १।१०७

जिसका उपयोग प्राचीन प्रतिमा निर्माण मे किया जाता था। वह मान है प्रतिमा का मुख।

वसुनन्दि ने ताल, मुख, वितस्ति और द्वादशांगुल को समानार्थी बताया है और उस मान से बिम्ब निर्माण का विधान किया है।[1] प्रतिमा के मुख को एक भाग मानकर सम्पूर्ण प्रतिमा के नौ भाग किये जाने चाहिये। तदनुसार वह प्रतिमा नौ ताल या १०८ अंगुल की होगी। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि नवताल प्रतिमा का नवा भाग एकताल और उसका १०८ वां भाग एक अंगुल कहलावेगा।

वसुनन्दि ने नवताल मे बनी ऊर्ध्व (कायोत्सर्ग आसन) जिन प्रतिमा का मान इस प्रकार बताया है :-

मुख	१ ताल (१२ अँगुल)
ग्रीवाध.भाग	४ अंगुल
कण्ठ से हृदय तक	१२ अंगुल
हृदय से नाभि तक	१ ताल (१२ अंगुल)
नाभि से मेढ्र तक	१ मुख (१२ अंगुल)
मेढ्र से जानु तक	१ हस्त (२४ अंगुल)
जानु	४ अंगुल
जानु से गुल्फ तक	१ हस्त (२४ अंगुल)
गुल्फ से पादतल तक	४ अंगुल

योग १०८ अंगुल—९ ताल[2]

प्रतिष्ठासारसग्रह (वसुनन्दि) ने प्रतिमा के अंग-उपांगो के मान का विस्तार से विवरण दिया है।[3] द्वादशागुल विस्तीर्ण और आयत केशान्त मुख के तीन भाग करने पर ललाट, नासिका और मुख (वचन) प्रत्येक भाग ४-४ अंगुल का होता है। नासिकारंध्र ८½ यव और नासिकापाली ४ यव होना चाहिये। ललाट का तिर्यक् आयाम आठ अंगुल बताया गया है। उसका आकार अर्धचंद्र के समान होता है। पाच अंगुल आयत केशस्थान से उष्णीष दो अंगल

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ४–५

२. रूपमण्डन की नवताल प्रतिमा का भी यही मान है।

३. परिच्छेद ४

उन्नत होता है। जयसेन (वसुविन्दु) के प्रतिष्ठापाठ में भी जिनप्रतिमा के तालमान संबंधी विवरण उपलब्ध हैं। वे प्राय: वसुनन्दि के समान ही हैं। जयसेन ने भ्रू-लता को ४ अंगुल आयत, मध्य में स्थूल, छोर में कृश अर्थात् धनुषाकार कहा है। नेत्रों की पलकें ऊपर-नीचे नदी के तटों के समान होती हैं। ओष्ठ का विस्तार ४ अंगुल, जिसका मध्यभाग १ अंगुल उच्छ्रित होता है। चिबुक ३½ अंगुल, उसके मूल से लेकर हनु तक का अन्तर ४ अंगुल। कर्ण और नेत्र का अंतर भी ४ अंगुल। आदि आदि

पद्मासन जिनप्रतिमा का उत्सेध कायोत्सर्ग प्रतिमा से आधा अर्थात् ५४ अंगुल बताया गया है। उसका तिर्यक् आयाम एक समान होता है। एक घुटने से दूसरे घुटने तक, दायें घुटने से बायें कंधे तक, बायें घुटने से दायें कंधे तक और पादपीठ से केशांत तक चारों सूत्रों का मान एक बराबर बताया गया है। वसुनन्दि के अनुसार, पद्मासन प्रतिमा के बाहुयुग्म के अंतरित प्रदेश में चार अंगुल का ह्रास तथा प्रकोष्ठ से कूर्पर पर्यन्त दो अंगुल की वृद्धि होती है।[1]

वास्तुसारप्रकरण के द्वितीय प्रकरण में पद्मासन और कायोत्सर्ग जिन प्रतिमाओं के मान संबंधी विवरण श्वेताम्बर मान्यता के अनुसार दिये गये हैं। वास्तुसारप्रकरण के रचयिता ठक्कर फेरु पद्मासन प्रतिमा को समचतुरस्र संस्थान युक्त कहते हैं। तदनुसार उसके चारों सूत्र बराबर होते हैं किन्तु उनके अनुसार पद्मासन प्रतिमा ५६ अंगुल मान की होती है जो इस प्रकार हैं :-

भाल	४ अंगुल
नासा	५ अंगुल
वचन	४ अंगुल
ग्रीवा	३ अंगुल
हृदय	१२ अंगुल
नाभि	१२ अंगुल
गुह्य	१२ अंगल
जानु	४ अंगुल
योग	५६ अंगुल[2]

१ प्रतिष्ठासारसंग्रह, ४/६८

२. वास्तुसारप्रकरण, २/८

ठक्कर फेरु ने कायोत्सर्ग प्रतिमा को नवताल अर्थात् १०८ अंगल की बताया है ।[1] उन्होंने ऊर्ध्व (कायोत्सर्ग) प्रतिमा के अंगविभाग के ग्यारह स्थान बतलाये हैं जो निम्न प्रकार हैं:–

ललाट	४ अंगुल
नासिका	५ अंगुल
वचन (मुख)	४ अंगुल
ग्रीवा	३ अंगुल
हृदय	१२ अंगुल
नाभि	१२ अंगुल
गुह्य	१२ अंगुल
जंघा	२४ अंगुल
जानु	४ अंगुल
पिण्डी	२४ अंगुल
चरण	४ अंगुल

योग १०८ अंगुल = ९ ताल[2]

ठक्कर फेरु द्वारा दिये गये अन्य विवरण ये हैं :[3]–

कानों के अँतराल में मुख का विस्तार	१४ अंगुल
गले का विस्तार	१० अंगुल
छाती प्रदेश	३६ अंगुल
कटि प्रदेश का विस्तार	१६ अंगुल
शरीर की मोटाई	१६ अंगुल
कान का उदय	१० भाग

१. वास्तुसारप्रकरण, २।५

२. वही, २।६–७। पाठान्तरमें ललाट, नासिका, वचन, स्तनसूत्र, नाभि, गुह्य, उरु, जानु, जंघा और चरण, ये दस स्थान क्रमशः ४,५,४,१३,१४,१२,२४,४,२४,४ अंगुल प्रमाण बताये गये हैं ।

३. वास्तुसारप्रकरण, २।९–२५

कान का विस्तार	३ भाग
कान की लौंडी	२½ भाग
कान का आधार	१ भाग
आँख की लम्बाई	४ भाग
आँख की चौड़ाई	१½ भाग
आंख की काली पुतली	१ भाग
भ्रकुटि	७ भाग
कपोल	६ अंगुल
नासिका का विस्तार	३ भाग
नासिका का उदय	२ भाग
नासिकाग्र की मोटाई	१ भाग
नासिका शिखा	½ भाग
अधर की दीर्घता	५ भाग
अधर का विस्तार	१ अंगुल
श्रीवत्स का उदय	५ भाग
श्रीवत्स का विस्तार	४ भाग
स्तनवटिका का विस्तार	१½ अंगुल
नाभि का विस्तार	१ भाग
श्रीवत्स और स्तन का अन्तर	६ भाग
स्तनवटिका और कक्ष का अन्तर	५ भाग
स्कंध	८ भाग
कुहनी	७ अंगुल
मणिबंध	४ अंगुल
जंघा	१२ भाग
जानु	८ भाग
एड़ी	४ भाग
स्तनसूत्र से नीचे भुजा	१२ भाग
स्तनसूत्र से ऊपर स्कंध	६ भाग
हाथ और पेट का अन्तर	१ अंगुल
उत्संग का विस्तार	४ अंगुल
उत्संग की लम्बाई	९ अंगुल

एड़ी से मध्य अंगुली तक	१५ अंगल
एडी से अंगूठे तक	१६ अंगुल
एड़ी से कनिष्ठिका तक	१४ अंगुल
चरण की दीर्घता	१६ अंगुल
चरण का विस्तार	८ अंगुल
चरण का उदय	४ अंगुल

जिनप्रतिमा के सिंहासन और परिकर के मान का भी ठक्कर फेरु ने विवरण दिया है। प्रतिमा की अपेक्षा सिंहासन दीर्घता मे डेवढ़ा, विस्तार में आधा और मोटाई मे चतुर्थांश होना चाहिये। उस पर गज, सिंह आदि नौ या सात रूपक होते है। सिंहासन के दोनो ओर यक्ष-यक्षिणी, एक-एक सिंह, एक-एक गज, एक-एक चामरधारी और उनके बीच मे चक्रधारिणी चक्रेश्वरी देवी बनाने का विधान है। इनका मान इस प्रकार है :—

दायें ओर यक्ष	१४ भाग
बाये ओर यक्षी	१४ भाग
सिंह	१२-१२ भाग
गज	१०-१० भाग
चामरधारी	३—३ भाग
चक्रेश्वरी	६ भाग

तदनुसार सिंहासन की कुल लम्बाई ८४ भाग।[1] चक्रेश्वरी देवी के नीचे धर्मचक्र, और उसके दोनो ओर एक—एक हरिण तथा मध्यभागमे तीर्थंकर का चिह्न बनाया जाता है।[2]

परिकर के पखवाड़े का उदय कुल ५१ भाग होता है।[3] उसमे आठ भाग चामरधारी का पादपीठ, ३१ भाग चामरधारी और तदुपरि १२ भाग तोरण के शिर तक। चामरधारी देवेन्द्रो की दृष्टि मूलनायक प्रतिमा के स्तनसूत्र के बराबर होनी है। परिकर के छत्रवटा मे, १० भाग अर्धछत्र, १ भाग कमल-नाल, १३ भाग मालाधारी, २ भाग स्तंभिका, ८ भाग दुदुंभिवादक, (तिलक

१. वास्तुसारप्रकरण, २/२७
२. वही, २/२८
३. वही, २/३०

के मध्य में घण्टा), २ भाग स्तंभिका, ६ भाग मकरमुख, इस प्रकार एक ओर ४२ भाग होने से दोनों तरफ का छत्रवटा ८४ भाग होता है।[1]

छत्र २४ भाग होता है। तदुपरि छत्रत्रय का उदय १२ भाग, तदुपरि शंखधारी ८ भाग, तदुपरि वंशपत्रादि ६ भाग। इस प्रकार छत्रवटा का उदय ५० भाग का होता है।[2] छत्रत्रय का विस्तार २० अंगुल, निर्गम दस भाग, भामण्डल का विस्तार २२ भाग और प्रसार ८ भाग।[3] दोनों ओर के मालाधारी १६--१६ भाग के, तदुपरि हाथी १८--१८ भाग के।

हाथी पर हरिनैगमेष, उनके सम्मुख दुन्दुभिवादक और मध्य में छत्रोपरि शंख फूकने वाला होता है।[4]

परिकर के पखवाड़े में दोनों चामरधारियों और वंशी--वीणाधारियों के स्थान पर कायोत्सर्ग जिन प्रतिमाएं स्थितकर परिकर मे पंचतीर्थी की योजना की जा सकती है।[5]

आचार दिनकर में सिंहासन और परिकर का स्वरूप इस प्रकार बताया गया है। जिन विम्ब के सिंहासन पर गज, सिंह, कीचक का अंकन, दोनों पार्श्व में चामरधारी और उनके बाह्य की ओर अञ्जलिधारी। मस्तक के ऊपर छत्रत्रय, छत्रत्रय के दोनों ओर सूंड में स्वर्णकलश लिये श्वेतगज, तदुपरि झांझ बजाते पुरुष, तदुपरि मालाधारी, शिखर पर शँख फूंकने वाला और तदुपरि कलश।[6] आचार दिनकर कार ने सिंहासन के मध्य भाग में दो हरिणों के बीच धर्मचक्र और धर्मचक्र के दोनों ओर ग्रहों की प्रतिमाएं बनाने का भी मत प्रकट किया है।[7]

नेमिचन्द्र, वसुनन्दि तथा अन्य दिगम्बर लेखकों ने[8] भी जिनप्रतिमा के साथ सिंहासन, दिव्यध्वनि, चामरेन्द्र, भामण्डल, अशोकवृक्ष, छत्रत्रय, दुंदुभि

१. वास्तुसार प्रकरण, २/३२--३३
२. वही, ३/३४
३. वही, २/३५
४. वही, २।३६
५. वही, २।३८
६. आचार दिनकर, उदय ३३
७. वही, उदय ३३
८. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५।७४--७५; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ५७६--५८१

श्रौर पुष्पवृष्टि इन आठ प्रातिहार्यों की योजना किये जाने का उल्लेख किया है। प्रातिहार्य योजना का निर्देश अपराजितपृच्छा[1] और रूपमण्डन[2] में भी मिलता है। रूपमण्डन के अनुसार जिन की प्रतिमाएं छत्रत्रय और त्रिरथिका से युक्त होती हैं। वे अशोक द्रुमपत्र दुन्दुभिवादक देवों, सिंहासन, असुरादि, गज, सिंह से विभूषित होती हैं। मध्य में कर्मचक्र (धर्मचक्र) होता है और दोनों पार्श्वों में यक्ष–यक्षिणी। परिकर का बाह्य विस्तार दो ताल और दीर्घता मूल प्रतिमा के बराबर बनाना चाहिये। इनके ऊपर तोरण होना चाहिये। बाह्य पक्षमें गोसिंहादि से अलंकृत वाहिकाएं और द्वारशाखा से युक्त प्रतिमा बनानी चाहिये तथा उसमें विभिन्न देवताओं की मूर्तियां बनी होना चाहिये। रथिकाओं के नाम रूपमण्डनकार ने ललित, चेतिकाकार, त्रिरथ, बलितोदर, श्रीपुञ्ज, पञ्चरथिक और आनन्दवर्धन ये सात दिये हैं। रूपमण्डन के अनुसार रथिका में ब्रह्मा, विष्णु, ईश, चण्डिका, जिन, गौरी, गणेश, अपने-अपने स्थान पर होते हैं।[3]

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव ।।

१. २२१/५७
२. ६/२७
३. रूपमण्डन, ६/३३-३९

चतुर्थ अध्याय

चतुर्विंशति तीर्थंकर

आचार्य हेमचन्द्र ने अभिधान चिन्तामणि के प्रथम काण्ड को देवाधिदेवकाण्ड नाम दिया है और उसमें वर्तमान अवसर्पिणी कालके चतुर्विंशति तीर्थंकरों के नाम, उनके कुल, माता-पिता, लाछन, वर्ण आदि का विवरण दिया है।

जैन सिद्धान्त की मान्यता है कि संसारी जीव अपने कर्मबंधनके कारण देव, मनुष्य, तिर्यंच और नरक इन चार गतियों में भ्रमण करता रहता है। कर्मबंधन से सर्वथा मुक्त होने पर जीवात्मा सिद्ध अवस्था प्राप्त करती है और लोक के अग्रतम भाग में जाकर स्थिर हो जाती है। तब उसे संसार में पुनः नहीं आना पडता। इन सिद्ध आत्माओं की संख्या अनन्तानन्त है। सभी सिद्ध आत्माएँ मनुष्य योनि से ही सिद्ध अवस्था को प्राप्त करती है। तीर्थंकर भी उसी प्रकार सिद्ध अवस्था प्राप्त करते है। वे देवजातिके नहीं होते पर क्योंकि मानव शरीर धारण करते हुये भी वे देवताओं द्वारा पूजित होते है, इसलिये उन्हे देवाधिदेव कहा गया है।

कालरचना

जैन मान्यता के अनुसार संसार अनादि और अनन्त है। अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी रूप से कालका चक्र घूमता रहता है और तदनुसार ह्रास एवं वृद्धि होती है। यह क्रम केवल भरत और ऐरावत क्षेत्र में चलता है अन्यत्र एक सा युग रहता है।

अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी में प्रत्येक के छह-छह आरे हुआ करते है। अवसर्पिणीके आरों के नाम है, सुषमासुषमा, सुषमा, सुषमादुषमा दुषमासुषमा दुषमा और दुषमादुषमा।[1] उत्सर्पिणीके आरे विपरीत क्रमसे होते है--अर्थात् दुषमादुषमा, दुषमा, दुषमासुषमा सुषमादुषमा, सुषमा और सुषमासुषमा। इस समय अवसर्पिणी कालका पंचम आरा दुषमा चल रहा है।

१ तिलोयपण्णत्ती, ४/३१६-१९

अवसर्पिणी के प्रथम तीन आरों में उत्तम, मध्यम और जघन्य भोग-भूमि की रचना होती है। भोगभूमि में मनुष्य अपनी अन्नवस्त्र आदिकी आवश्यकताएं कल्पवृक्षों से पूरी करते है। वे कृषि, उद्योग, व्यवसाय आदि से अनभिज्ञ होते है। कल्पवृक्ष न तो वनस्पति होते है और न कोई देव। वे पृथिवीरूप होते हुए भी जीवों को उनके पुण्य का फल देते है।[1] कल्पवृक्ष दस प्रकार के होते है, तेजाँग, तूर्यांग, भूषणाँग, वस्त्रांग, भोजनाँग, आलयांग, दीपांग भाजनांग, मालांग और तेजाँग।[2]

सुषमादुषमा नामक तीसरे आरे के अंतिम भाग मे भोगभूमि की व्यवस्था समाप्त होकर कर्मभूमि की रचना होने लगती है। उस समय क्रमशः चौदह कुलकर होते है जो मनुष्यो को कर्मभूमि संबंधी बाते समझाते है।

चौदह कुलकर

वर्तमान काल के चौदह कुलकरों के नाम ये बताये गये है—प्रतिश्रुति, सन्मति, क्षेमंकर, क्षेमंधर, सीमंकर, सीमंधर, विमलवाहन, चक्षुष्मान, यशस्वी, अभिचन्द्र, चन्द्राभ, मरुदेव, प्रसेनजित्, और नाभि। प्रथम कुलकर के समय मे तेजांग नामक कल्पवृक्षो की किरणे मन्द पड़ी और इस कारण चन्द्र-सूर्य के दर्शन होने लगे। द्वितीय कुलकर के समय मे तेजांग कल्पवृक्ष सर्वथा नष्ट हुये और उसस ग्रह, नक्षत्र, तारागण भी दिखाई पड़ने लगे। तृतीय कुलकर क्षेमंकर के समय मे व्याघ्रादिक पशुओं मे क्रूर भाव उत्पन्न होने लगे। चौथे कुलकर के समय तक वे मनुष्य तथा अन्य प्राणियो का भक्षण करने लगे थ। पाचवे कुलकर के समय मे कल्पवृक्षो से सम्पूर्ण आवश्यकताएं पूरी नहीं होती थी। वे सीमित मात्रा मे ही आवश्यकताएं पूरी कर पाते थे। इसलिये मनुष्यो मे लोभ उत्पन्न हुआ, व झगडने लगे। तब सीमंकर नामक पंचम कुलकर ने वस्तुएं प्राप्त करने की सीमा बाधी। सीमा का उल्लंघन करने वाला के लिये 'हा' दण्ड की व्यवस्था की गयी। छठे कुलकर के समय म कल्पवृक्ष विरल होते गये। फल भी अल्प प्राप्त होता था, इसलिये भिन्न-भिन्न लोगों के लिये भिन्न-भिन्न वृक्षसमूहादि निश्चित कर उन्हे ही चिह्न मान कर सीमा नियत की गई। सप्तम कुलकर के समय मे लोगों ने गमनागमन के लिये गज आदि का प्रयोग करना सीखा। आठवे और नौवे कुलकरो के समय मे पुत्रजन्म, नामकरण,

---

१. तिलोयपण्णत्ता, ४।३५४

२. वही, ४।३४२

बालकों के रुदन का कारण और रोकने का उपाय आदि सीखा गया। दसवें कुलकर के समय तक 'हा' के अलावा 'मा' दण्ड भी चल चुका था।

ग्यारहवें कुलकर के समय में शीत तुषार वायु चलने लगी थी। बारहवें कुलकर के समय तक बिजली चमकने लगी, मेघ गरजने लगे। उस समय मनुष्य ने नौका और छत्र का उपयोग सीखा। तेरहवें कुलकर के समय में बालक वर्तिपटल (जरायु) से वेष्टित जन्मने लगे। चौदहवें कुलकर नाभि थे। उनके समय में बालकों का नाभिनाल लम्बा होने लगा था। उन्होंने उसे काटने का उपदेश दिया। नाभि अन्तिम कुलकर थे।[1] उन्होंने ही लोगों को धान्य खाने और आजीविका के तरीके सिखाये। नाभि की पत्नी का नाम मरुदेवी था। प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ इन्हीं के पुत्र थे।

त्रिषष्टि शलाका पुरुष

चौबीस तीर्थंकर, द्वादश चक्रवर्ती, नव बलराम, नव नारायण, और नव प्रतिनारायण, इन त्रेसठ विशिष्ट पुरुषों की गणना शलाका पुरुषों में की जाती है। इन शलाकापुरुषों ने अपने विशिष्ट कार्यों द्वारा महत्त्व का स्थान प्राप्त किया था।

तीर्थंकरों के संबंध में हम आगे विवरण देंगे। वर्तमान अवसर्पिणी के चतुर्थकाल में हुये बारह चक्रवर्ती ये हैं–भरत, सगर, मघवा, सनत्कुमार, शान्ति, कुन्थु, अर, सुभौम, पद्म, हरिषेण, जयसेन और ब्रह्मदत्त।[2] चक्रवर्ती षट्खण्ड भरतक्षेत्र के अधिपति होते है। उन्हें चौदह रत्न और नवनिधि का लाभ होता है। सेनापति, गृहपति, पुरोहित, गज, तुरग, वर्धकि, स्त्री, चक्र, छत्र, चर्म, मणि, काकिनी, खड्ग और दण्ड ये चतुर्दश रत्न बताये गये हैं। काल, महाकाल पाण्डु, माणवक, शंख, पद्म, नैसर्प, पिंगल और नानारत्न ये नव निधि है।[3] प्रथम चक्रवर्ती भरत आदि तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्र थे। उनका अपने भ्राता बाहुबली से युद्ध हुआ था जिसमें बाहुबली विजयी हुये पर इस घटना से उन्हें

---

१. आगे आने वाले उत्सर्पिणी काल में जो कुलकर होंगे उनके नाम तिलोयपण्णत्ती ४/१५७०–७१ में दिये गये हैं।

२. तिलोयपण्णत्ती, ४।५१५–१६

३. वही ४।७३९

संसार के प्रति वैराग्य हो गया और वे साधु हो गये ।[1] शान्ति कुन्थु और अर ये तीन चक्रवर्ती तीर्थंकर भी हुये हैं ।

बलराम नारायण के ज्येष्ठ भ्राता होते हैं । वर्तमान अवसर्पिणी में विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नन्दो, नन्दिमित्र, राम, और पद्म ये नौ बलराम या बलदेव हुये ।[2] इनमें से अन्तिम दो सुप्रसिद्ध हैं ।

नारायण को विष्णु भी कहा गया है । वर्तमानकाल के नौ नारायण ये हैं, त्रिपृष्ठ, द्विपृष्ठ, स्वयंभू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुरुषपुण्डरीक, पुरुषदत्त, नारायण और कृष्ण[3]। इनमें से अष्टम नारायण को लक्ष्मण भी कहा जाता है ।

प्रतिनारायण नारायण के विरोधी हुआ करते हैं । उनकी सूची इस प्रकार है, अश्वग्रीव, तारक, मेरक, मधुकैटभ, निशुम्भ, बलि, प्रहरण या प्रहलाद, रावण और जरासंध ।[4] किन्हीं–किन्हीं ग्रन्थों में प्रतिनारायणों की गणना शलाकापुरुषों की सूची में नहीं की गयी है ।

उपर्युक्त महापुरुषों के अतिरिक्त एकादश रुद्रों और नव नारदों का भी विवरण जैन ग्रन्थों में मिलता है । भीमावलि, जितशत्रु, रुद्र, विश्वानल, सुप्रतिष्ठ, अचल, पुण्डरीक, अजितंधर, अजितनाभि, पीठ और सात्यकीपुत्र ये एकादश रुद्र[5] तथा भीम, महाभीम, रुद्र, महारुद्र, काल, महाकाल, दुर्मुख, नरकमुख और अधोमुख, ये नव नारद हैं ।[6]

तीर्थंकर

तीर्थंकरों समेत सभी शलाकापुरुष चतुर्थ काल में हुआ करते हैं, यह ऊपर बताया गया है किन्तु वर्तमान अवसर्पिणी हुण्डा अवसर्पिणी होने के कारण

---

१. बाहुबली की प्रतिमाएं बनायी जाती हैं । कर्नाटक की सुप्रसिद्ध गोम्मटेश्वर प्रतिमा बाहुबली की है ।

२. तिलोयपण्णत्ती, ४।५१७ । एक अन्य सूची में अचल, विचल, भद्र, सुप्रम, सुदर्शन, आनन्द, नन्दन, पद्म और राम ये नाम मिलते हैं ।

३. वही, ४।५१८

४. तिलोयपण्णत्ती, ४/५१९

५. वही, ४/५२०–२१

६. वही, ४/१४६९

इसमें कुछ अपवाद भी हुये। इसके तृतीय काल (सुषमादुषमा) के चौरासी लाख पूर्व, तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्षके शेष रहने पर प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव का जन्म हुआ। ऋषभनाथ के निर्वाणके पश्चात् तीन वर्ष और साढ़े तीन मास का समय व्यतीत होने पर चतुर्थ काल दुषमासुषमा प्रविष्ट हुआ।[1] अन्य तेईस तीर्थंकर चतुर्थकाल में ही हुये। अंतिम तीर्थंकर महावीर-स्वामी के निर्वाण के पश्चात् तीन वर्ष और साढ़े आठ मास का समय और बीत जाने पर पंचमकाल (दुषमा) प्रारंभ हुआ[2] जो अभी चल रहा है। पंचम और षष्ठ काल में भी तीर्थंकर नहीं होते।

अतीत उत्सर्पिणी और अनागत उत्सर्पिणी में हुये और होने वाले २४-२४ तीर्थंकरों की सूची जैन ग्रन्थों में मिलती है।[3] वर्तमान अवसर्पिणी के २४ तीर्थंकरों को जोड़कर ७२ तीर्थंकर होते हैं। जैन ग्रन्थों मे अक्सर ७२ जिनालयों या जिनबिम्बों का उल्लेख मिलता है। इन बहत्तर तीर्थंकरों की जैन मंदिरों मे नित्य पूजा-अर्चा की जाती है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, ये भरतक्षेत्र के तीर्थंकर हैं। भरत, ऐरावत और विदेह क्षेत्र में कर्मभूमिया होती है। अन्य क्षेत्रों में कुरु भूमि—देवकुरु और उत्तरकुरु-होने से वहाँ तीर्थंकर नहीं होते। विदेह क्षेत्र में सदैव कर्मभूमिकी रचना रहने के कारण वहा तीर्थंकर सदैव विद्यमान रहते है। विदेह क्षेत्रके विद्यमान २० तीर्थंकरों की पूजा भी जैनमंदिरों में नित्य की जाती है।

पंच कल्याणक

तीर्थंकरों के जीवन की पांच मुख्य घटनाओं को पंचकल्याणक कहा जाता है। वे हैं, तीर्थंकर के जीव का माता के गर्भ में आना, तीर्थंकर का जन्म होना, तीर्थंकर द्वारा गृह त्यागकर तपग्रहण करना, चार घातिया कर्मो का क्षय करके केवलज्ञान प्राप्त करना और अन्तमें शेष चार अघातिया कर्मो का भी सम्पूर्ण रूपसे क्षय करके निर्वाण प्राप्त करना। इस प्रकार गर्भकल्याणक, जन्मकल्याणक, तपकल्याणक, ज्ञान–कल्याणक और निर्वाणकल्याणक ये पंच-कल्याणक होते है। इन कल्याणकों के अवसर पर देवताओं द्वारा उत्सव मनाये

---

१. तिलोयपण्णत्ती ४/१२७६

२, वही, ४/१४७४

३. तिलोयपण्णत्ती महाधिकार ४; प्रवचनसारोद्धार द्वार ७, गाथा २९०-९२, २९५-९७ तथा अन्य अनेक ग्रन्थ।

जाते हैं। भगवान् की गर्भावस्था में रुचक वासिनी छप्पन देवियां तीर्थंकर-जननी की सेवा किया करती हैं। जन्मकल्याणक के अवसर पर इन्द्रों द्वारा भगवान् का जन्माभिषेक किया जाता है। तपकल्याणक के समय स्वयंबुद्ध प्रभु की स्तुति लौकान्तिक देव करते हैं। ज्ञानकल्याणक के समय धनपति द्वारा समवशरणकी रचना की जाती है। निर्वाणकल्याणक का समारोह भी सभी प्रकार के देवों द्वारा आयोजित किया जाता है।

वर्तमान अवसर्पिणी के तीर्थंकर

वर्तमान अवसर्पिणी में जो चौबीस तीर्थंकर हुये हैं उनके नाम ये हैं :—

१.	ऋषभ	२.	अजित	३.	संभव
४.	अभिनंदन	५.	सुमति	६.	पद्मप्रभ
७,	सुपार्श्व	८.	चन्द्रप्रभ	९.	पुष्पदन्त
१०.	शीतल	११.	श्रेयास	१२.	वासुपूज्य
१३.	विमल	१४.	अनंत	१५.	धर्म
१६.	शान्ति	१७.	कुन्थु	१८.	अर
१९.	मल्लि	२०.	मुनिसुव्रत	२१.	नमि
२२.	नेमि	२३.	पार्श्व	२४.	महावीर

इन नामों के साथ अक्सर 'नाथ' पद लगाया जाता है। ऋषभनाथ को वृषभनाथ और आदिनाथ भी कहा जाता है। अनंतनाथ को अनंनजित्, पुष्पदन्त को सुविधिनाथ, मुनिसुव्रत को सुव्रत, नेमिनाथ को अरिष्टनेमि और महावीर को वर्धमान, वीर, अतिवीर, सन्मति, चरमतीर्थंकर, ज्ञातृनन्दन, नाथपुत्त, देवार्य आदि कई नामों से स्मरण करते हैं।[1]

तीर्थंकरों के कुल

अभिधानचिन्तामणि के अनुसार मुनिसुव्रत और नेमिनाथ हरिवंश में उत्पन्न हुये थे, शेष तीर्थंकर इक्ष्वाकु कुलमें।[2] नेमिचन्द्र ने मुनिसुव्रत और नेमिनाथ को गौतम गोत्र का तथा अन्य को काश्यपगोत्रीय बताया है।[3]

---

१. अभिधानचिन्तामणि, १/२९-३०

२. वही, १/३५

३. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३८६।

तिलोयपण्णत्ती ने शान्ति, कुन्थु और अर का वंश कुरु, मुनिसुव्रत और नेमि का वंश यादव या हरि, पार्श्वनाथ का उग्र, महावीर का नाथ (ज्ञातृ) और शेष तीर्थकरो का वंश इक्ष्वाकु बताया है।

तीर्थंकरों के वर्ण

अभिधानचिन्तामणि[1] के अनुसार, पद्मप्रभ और वासुपूज्य रक्तवर्ण, चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त शुक्लवर्ण, मुनिसुव्रत और नेमि कृष्णवर्ण, मल्लि और पार्श्वनाथ नीलवर्ण तथा शेष तीर्थंकर स्वर्ण के समान पीते वर्ण के थे। तिलोयपण्णत्ती मे, पद्मप्रभ और वासुपूज्य को मूगे के समान रक्तवर्ण सुपार्श्व और पार्श्व को हरित् वर्ण, चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त को श्वेतवर्ण, मुनिसुव्रत और नेमि को नीलवर्ण तथा अन्य सभी को स्वर्ण वर्ण बताया गया है। आशाधर[2] के अनुसार मुनिसुव्रत और नेमि श्यामल एवं सुपार्श्व और पार्श्व मरकतमणि के समान प्रभावाले है। वसुनन्दि[3] ने पद्मप्रभ को पद्म के समान, वासुपूज्य को विद्रुम के समान, सुपार्श्व और पार्श्व को हरित्प्रभ तथा मुनिसुव्रत और नेमि को मरकतसदृश कहा है। अपराजितपृच्छा[4] मे पद्मप्रभ और धर्मनाथ लाल कमल के समान, सुपार्श्व और पार्श्व हरित्, नेमि श्याम और मल्लि नील वर्ण है। वर्णो की योजना अक्सर चित्रकर्म मे की जाती है। चन्देरी के जैनमदिर की चौबीसी प्रतिमाएं तीर्थंकरो के वर्णो के अनुसार निर्मित करवाकर प्रतिष्ठित की गयी है।

तीर्थंकरों के माता-पिता

चतुर्विंशति तीर्थंकरो के माता-पिता के नाम जैन ग्रन्थो मे निम्न प्रकार मिलते है।[5]

	तीर्थंकर	माता	पिता
१	ऋषभनाथ	मरुदेवी	नाभि
२	अजितनाथ	विजया	जितशत्रु

१. १/४६
२. प्रतिष्ठासारोद्धार, १/८०-८१.
३. प्रतिष्ठासारसग्रह, ५/६६-७०
४. २२१/५-६
५. अभिधानचिन्तामणि, १/३६-४१ तथा तिलोयपण्णत्ती, निर्वाणकलिका, प्रतिष्ठासारोद्धार, प्रतिष्ठातिलक आदि के आधार पर।

	तीर्थंकर	माता	पिता
३	संभवनाथ	सुषेणा या सेना	जितारि
४	अभिनंदननाथ	सिद्धार्था	संवर
५	सुमतिनाथ	मंगला या सुमंगला	मेघ या मेघप्रभ
६	पद्मप्रभ	सुसीमा	धरण
७	सुपार्श्वनाथ	वसुंधरा या पृथिवी	सुप्रतिष्ठ
८	चन्द्रप्रभ	लक्ष्मणा	महासेन
९	पुष्पदन्त	रामा	सुग्रीव
१०	शीतलनाथ	सुनन्दा या नन्दा	दृढ़रथ
११	श्रेयांसनाथ	विष्णुश्री या वेणुदेवी	विष्णु
१२	वासुपूज्य	विजया या जया	वसुपूज्य
१३	विमलनाथ	सुशर्मलक्ष्मी या श्यामा	कृतवर्मा
१४	अनन्तनाथ	सुयशा या सर्वयशा	सिंहसेन
१५	धर्मनाथ	सुव्रता या सुप्रभा	भानु
१६	शान्तिनाथ	ऐरा या अचिरा	विश्वसेन
१७	कुन्थुनाथ	श्रीमतीदेवी	सूर या सूर्यसेन
१८	अरनाथ	मित्रा या देवी	सुदर्शन
१९	मल्लिनाथ	प्रभावती	कुम्भ
२०	मुनिसुव्रतनाथ	पद्मा या प्रभावती	सुमित्र
२१	नमिनाथ	वप्रा	विजय
२२	नेमिनाथ	शिवा	समुद्रविजय
२३	पार्श्वनाथ	वामा या ब्राह्मिला	अश्वसेन
२४	महावीर	त्रिशला या प्रियकारिणी	सिद्धार्थ

जैनग्रन्थों मे, तीर्थंकरो के माता के गर्भ मे आने की तिथि, नक्षत्र, जिस स्वर्ग विमान से च्युत होकर आये उसका नाम, जन्म का तिथि, जन्मनक्षत्र जन्मराशि आदि के विवरण भी उपलब्ध है। किन्तु उनका उल्लेख यहा नही किया जा रहा है।

जिनमाता के स्वप्न

तीर्थंकर के माताके गर्भ में आनेके समय जिनेन्द्रजननी कुछ स्वप्न देखती हैं। दिगम्बर परम्पराके अनुसार वे सोलह हैं और श्वेताम्बर परम्पराके

अनुसार चौदह। इन स्वप्नों का अंकन शिल्पकृतियों में भी मिलता है। खजुराहो के जैन मंदिरों में गर्भगृह के प्रवेशद्वार पर ही ऊपर माता के स्वप्नों का शिल्पांकन है। स्वप्न ये हैं :—

१.	ऐरावत हस्ती	२.	वृषभ	३.	सिंह
४.	गजलक्ष्मी	५.	मालायुग्म	६.	चन्द्र
७.	सूर्य	८.	मीनयुग्म	९.	पूर्णकुम्भयुग्म
१०.	कमल	११.	सागर	१२,	सिंहासन
१३.	देवविमान	१४.	नागविमान	१५.	रत्नराशि
१६.	निर्धूम अग्नि।[१]				

श्वेताम्बर परम्परा में मीनयुग्मके स्थान पर महाध्वज तथा सिंहासन और नागविमान ये दो स्वप्न कम होते हैं।[२] पद्मानन्द महाकाव्य के सप्तम सर्ग में वृषभ, गज, सिंह, गजलक्ष्मी, माला, चन्द्र, सूर्य, ध्वज, कुम्भ, सरोवर, सागर, देवविमान, रत्नपुञ्ज और अग्नि, इस प्रकार क्रम बताया गया है। यही क्रम त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित में भी मिलता है। स्वप्नदर्शन के पश्चात् तीर्थंकर का जीव माता के वदनमें प्रवेश करता है।

तीर्थंकरों के जन्मस्थान

तिलोयपण्णत्ती में तीर्थंकरों के जन्मस्थानों की सूची निम्न प्रकार दी गयी है।—

१.	ऋषभनाथ	अयोध्या
२.	अजितनाथ	अयोध्या
३.	संभवनाथ	श्रावस्ती
४.	अभिनंदननाथ	अयोध्या
५.	सुमतिनाथ	अयोध्या

१. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३९३-४०३।

२. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग ११, १९-२१; उत्तरपुराण, पर्व ४८; सकलचन्द्र कृत प्रतिष्ठाकल्प, पन्ना २४ आदि।

६.	पद्मप्रभ	कौशाम्बी
७.	सुपार्श्वनाथ	वाराणसी
८.	चन्द्रप्रभ	चन्द्रपुरी
९.	पुष्पदन्त	काकन्दी
१०.	शीतलनाथ	भद्दलपुर
११.	श्रेयांसनाथ	सिंहपुरी
१२.	वासुपूज्य	चम्पापुरी
१३.	विमलनाथ	कंपिल्लपुर
१४.	अनंतनाथ	अयोध्या
१५.	धर्मनाथ	रत्नपुर
१६.	शान्तिनाथ	हस्तिनागपुर
१७.	कुन्थुनाथ	हस्तिनागपुर
१८.	अरनाथ	हस्तिनागपुर
१९.	मल्लिनाथ	मिथिला
२०.	मुनिमुव्रतनाथ	राजगृह कुशाग्रपुर
२१.	नमिनाथ	मिथिला
२२.	नेमिनाथ	शौरीपुर
२३.	पार्श्वनाथ	वाराणसी
२४.	महावीर	कुण्डलपुर

तीर्थंकरों के लांछन

प्रारम्भ में तीर्थंकरों की प्रतिमाओं पर उनके अलग अलग लांछन या चिह्न नहीं बनाये जाते थे। उन प्रतिमाओं पर उत्कीर्ण किये लेखों से ही तीर्थंकरों की पहचान होती थी। मथुरा की कुषाण कालीन प्रतिमाओं पर तीर्थंकरों के चिह्न नहीं मिलते हैं। इतना अवश्य है कि कुछेक तीर्थंकर प्रतिमाएँ अपने विशेष स्वरूप के कारण भी पहचानी जाती थी। ऋषभनाथ की प्रतिमाएँ जटामुकुटरूपशेखर से या कन्धों पर लहराते केशगुच्छसे[1], सुपार्श्वनाथ की प्रतिमाएं पञ्चफण सर्प से और पार्श्वनाथ की प्रतिमाएं सप्तफण सर्पके छत्रसे पहचान ली जाती थी।

---

१. रविषेण कृत पद्मपुराण : वातोद्धूता जटास्तस्य रेजुराकुलमूर्तयः।
धूमालय इव ध्यानवह्निसक्तकर्मणः ॥

तिलोयपण्णत्ती ४/२३०

राजगृह के वैभार पर्वत की एक नेमिनाथ प्रतिमा[1] (जो चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समय की है) ऐसी सर्वप्राचीन प्रतिमा जान पड़ती है जिसपर कि तीर्थंकर का चिह्न भी प्राप्त हुआ है। इससे पूर्व की अभी तक प्राप्त प्रतिमाओं पर चिह्न परिलक्षित नहीं किये जा सके हैं।

वसुविन्दु (जयसेन) ने उल्लेख किया है कि चिह्न तीर्थंकरों के सुख-पूर्वक पहचान लिये जाने और अचेतनमें संव्यवहार सिद्धि के लिये स्थापित किये जाते है।[2] तिलोयपण्णत्ती[3] की सूची के अनुसार चतुर्विंशति तीर्थंकरों के चिह्न निम्न प्रकार है :—

१.	ऋषभनाथ	वृष
२.	अजितनाथ	गज
३.	संभवनाथ	अश्व
४.	अभिनन्दननाथ	वानर
५.	सुमतिनाथ	क्रोक
६.	पद्मप्रभ	पद्म
७.	सुपार्श्वनाथ	नंद्यावर्त
८.	चन्द्रप्रभ	अर्धचन्द्र
९.	पुष्पदन्त	मकर
१०	शीतलनाथ	स्वस्तिक
११.	श्रेयांसनाथ	गण्ड
१२.	वासुपूज्य	महिष
१३.	विमलनाथ	वराह
१४	अनंतनाथ	सेही
१५.	धर्मनाथ	वज्र
१६.	शान्तिनाथ	हरिण
१७.	कुन्थुनाथ	छाग
१८.	अरनाथ	तगरकुसुम (मत्स्य ?)

१. आर्क० सर्वे आफ इण्डिया, वार्षिक प्रतिवेदन, १९२५-२६, पृष्ठ १२५ इत्यादि।

२. प्रतिष्ठापाठ, ३४७

३ ४/६०४-६०५

१९.	मल्लिनाथ	कलश
२०.	मुनिसुव्रतनाथ	कूर्म
२१.	नमिनाथ	उत्पल
२२.	नेमिनाथ	शंख
२३.	पार्श्वनाथ	अहि
२४.	वर्धमान	सिंह

तिलोयपण्णत्ती ने उपर्युक्त प्रकार सातवें तीर्थंकर का चिह्न नन्द्यावर्त और दसवें तीर्थंकर का चिह्न स्वस्तिक बताया है जबकि दिगम्बर परम्परा के पश्चात्कालीन ग्रन्थों में[1] सातवें तीर्थंकर का चिह्न स्वस्तिक और दसवें तीर्थंकर का चिह्न श्रीवृक्ष मिलता है। तिलोयपण्णत्ती में अठारहवें तीर्थंकर का चिह्न तगरकुसुम कहा है जिसका अर्थ हिन्दी टीकाकार ने मीन लिया है। नेमिचन्द्र ने अठारहवें तीर्थंकर का चिह्न तगर, वसुनन्दि ने पाठोण और जयसेन ने कुसुम बताया है।

अभिधानचिन्तामणि[2] मे सातवें तीर्थंकर का चिह्न दिगम्बरों के समान स्वस्तिक, दसवें तीर्थंकर का चिह्न श्रीवत्स, ग्यारहवें का खड्गी (रूपमण्डन में खड्गीश, अन्यत्र गण्डक), चौदहवे तीर्थंकर का श्येन और अठारहवें तीर्थंकर का चिह्न नन्द्यावर्त कहा गया है।

दीक्षा और दीक्षावृक्ष

दिगम्बर परम्परा के अनुसार वासुपूज्य, मल्लि, नेमि, पार्श्व और महावीर इन पाँच तीर्थंकरों ने कुमार अवस्थामें ही तप ग्रहण कर लिया था।[3] श्वेताम्बर सम्प्रदाय की मान्यता है कि महावीर ने विवाह किया था।[4] नेमिनाथ ने द्वारावती (द्वारिका) में जिनदीक्षा ग्रहण की पर अन्य सभी तीर्थंकरो ने अपने अपने जन्मस्थान मे ही तप ग्रहण किया था।[5] चौबीस

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/७२-७४; प्रतिष्ठापाठ, ३४६-४७; प्रतिष्ठा-सारोद्धार, १/७८-७९; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ५८१-८२ तथा अन्य।

२. १/४७-४८

३. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ५०३; तिलोय० ४/६७०.

४. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरितमें उन्हें कृतोद्वाह किन्तु अकृतराज कहा है।

५. तिलोयपण्णत्ती, ४/६४३

तीर्थंकरों मे से शान्ति, कुन्थु और अर ये तीन चक्रवर्ती सम्राट् थे [१] वासुपूज्य, मल्लि, नेमि, पार्श्व और महावीर इन्होने राज्य नही किया, अन्यों ने किया था।

जिन वृक्षो के नीचे तीर्थंकरों ने दीक्षा ग्रहण की थी अथवा जिन वृक्षों के नीचे तपस्या करते हुए उन्हे केवलज्ञान प्राप्त हुआ, वे दीक्षावृक्ष और केवल-वृक्ष कहे जाते है। इन वृक्षो को जैन प्रतिमाशास्त्र मे महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। तिलोयपण्णत्तीकार ने बताया है कि ऋषभादि तीर्थंकरों को जिन वृक्षों के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था वे ही अशोकवृक्ष हैं।[२] इसलिए तीर्थंकर प्रतिमाओं के साथ अशोकवृक्ष बनाने की परम्परा है, भले ही तीर्थकर ने किसी भी जाति के वृक्ष के नीचे केवलज्ञान प्राप्त किया हो।

वृक्षों की सूची निम्नप्रकार है[३] :—

१. न्यग्रोध	२. सप्तपर्ण	३. शाल
४. सरल	५. प्रियंगु	६. प्रियंगु
७. शिरीष	८. नाग	९. अक्ष (बहेडा)
१०. धूली (मालि)	११ पलाश	१२. तेंदू
१३ पाटल	१४. पिप्पल	१५ दधिपर्ण
१६ नन्दी	१७. तिलक	१८. आम्र
१९. कंकेलि (अशोक)	२०. चम्पा	२१. बकुल
२२. मेषशृंग	२३. धव	२४. साल

जयसेन[४] और नेमिचन्द्र[५] द्वारा दी गयी सूचिया भी प्राय: उपर्युक्त प्रकार की है।

समवशरण

तीर्थंकर नामक कर्म प्रकृति के उदय से अर्हत् अवस्था में भगवान् जीवमात्र के कल्याण हेतु उपदेश दिया करते है। उपदेश सभा या समवशरण

१. तिलोयपण्णत्ती, ४/६०६
२. ४/९१५
३. तिलोयपण्णत्ती, ४/९१६–९१८
४. प्रतिष्ठापाठ, ८३५।
५. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ५१२

की व्यवस्था देवों द्वारा की जाती है। सौधर्मेन्द्र के आदेश से धनपति अपनी विक्रिया के द्वारा समवशरण की रचना करता है।[1] समवशरण सभा के १२ कोष्ठों में सभी प्रकार के प्राणियों के बैठने की व्यवस्था होती है। मध्य में गंधकुटी होती है। गंधकुटी में स्थित सिंहासन पर तीर्थंकर अंतरीक्ष विराजमान होते हैं। उनके मस्तक पर त्रिछत्र होता है। अर्हत् अवस्था में तीर्थंकर के चौदह अतिशय होते हैं।[2] अशोकतरु, चामरधारी, देवदुंदुभि,, देवताओं द्वारा पुष्पवृष्टि, प्रभामण्डल, आदि का अंकन तीर्थंकर प्रतिमा में पाया जाता है।

समवशरण के प्रतीहार

जिनेन्द्र पूजा विधान के अवसर पर मण्डप के रक्षक प्रतीहारों की स्थापना की जाती है। जिनपूजामण्डप वस्तुतः समवशरण की प्रतिकृति होता है जिसकी रक्षा व्यन्तर जाति के देव किया करते हैं।

प्रतीहार देवताओं में से जया, विजया, अजिता और अपराजिता ये चार देवियां क्रमशः पूर्वादि द्वारों की प्रतीहारिणी होती हैं। इन देवियों के चार-चार हाथ बताये गये हैं। उन हाथों के आयुध, पाश, अंकुश, अभय और मुद्गर हैं। जंभा, मोहा, स्तंभा और स्तंभिनी, ये देवियां विदिशाओं में स्थित होती है।[3] इसी प्रकार प्रभा, पद्मा, मेघमालिनी, मनोहरा, चंद्रमाला, सुप्रभा जया, विजया और व्यक्तांतरा ये देवियां अपने अपने वर्ण की अर्थात अरुण, कृष्ण, श्वेत आदिक ध्वजाएं ग्रहण करती हैं।[4]

मंडप के द्वारपालों का कार्य कुमुद, अंजन, वामन और पुष्पदन्त, ये चार प्रतीहार करते है। कुमुद पूर्व द्वार पर स्थित होता है, अंजन दक्षिण द्वार पर, वामन पश्चिम द्वार पर और पुष्पदन्त उत्तर द्वार पर स्थित होता है।[5] कुमुद पंचमुख होता है, उसका आसन स्वस्तिक है। कुमुद हाथ में हेमदण्ड धारण करता है।[6]

---

१. तिलोयपण्णत्ती, ४/७१०.

२. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ५७८-५७९ तथा अन्य

३. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/२१६-२२५

४. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/२०८–२०९; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २०९–११

५. प्रतिष्ठासारोद्धार, २/१३९–१४२

६. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ६५८

उपर्युक्त प्रकार विजय, वैजयंत, जयंत और अपराजित ये चार देव भी क्रमशः प्राची, अपाची, प्रतीची और उदीची दिशाओं में स्थित होते है।[1] ये देव व्यन्तर निकाय के हैं। वे जम्बूद्वीप की चार दिशाओं मे स्थित इन्हीं नाम के द्वारों के रक्षक हैं। द्वारों के नाम पर ही इनके नाम पड़े हैं।[2] अनावृत और तुम्बरु नामक यक्षों के संबंध में आगे विवरण दिया जावेगा।

जया, विजया, जयन्ती और अपराजिता का विवरण विष्णुधर्मोत्तर[3] मे भी मिलता है। वहां ये देवियां चतुर्वक्त्रा और द्विभुजा बतायी गयी है। प्रत्येक के बायें हाथ मे कपाल किन्तु जया के दायें हाथ में दण्ड, विजया के दायें हाथ में खड्ग, जयन्ती के दायें हाथ में अक्षमाला और अपराजिता के दायें हाथ में भिन्दिपाल बताया गया है। जया का वाहन नर, विजया का कौशिक, जयन्ती का तुरग और अपराजिता का मेघ। जया का वर्ण श्वेत, विजया का रक्त, जयन्ती का पीत और अपराजिता का कृष्ण है। इन्हें मातृ कहा गया है। इनके बीच मे महादेव तुम्बरु (श्वेतवर्ण) स्थित होते है जो चतुर्मुख और वृषारूढ़ है। जया और विजया की स्थिति तुम्बरु के दक्षिण ओर तथा जयन्ती और अपराजिता की उनके वाम ओर कही गई है। हेमचन्द्र आचार्य ने तुम्बरु को समवशरण के अन्त्य वप्र के प्रतिद्वार मे स्थित बताया है। वह जटामुकुटयुक्त, खट्वांगी और नरमुण्डमालाधारी होता है।[4]

रूपमण्डन[5] मे इन्द्र, इन्द्रजय, माहेन्द्र, विजय, धरणेन्द्र, पद्मक, सुनाभ और सुरदुन्दुभि ये आठ वीतराग जिनेन्द्रदेव के प्रतीहार कहे गये है। इन्द्र और इन्द्रजय के आयुध फल. वज्र अंकुश और दण्ड, माहेन्द्र और विजय के दो हाथो मे वज्र, और दो मे फल और दण्ड, सुनाभ और दुन्दुभि निधिहस्त तथा धरणेन्द्र और पद्मक त्रिफण या पचफण सर्पछत्रधारी है।

तीर्थंकरों की निर्वाणभूमियां

आयु कर्म के उदय की अवधि समाप्त होने पर तीर्थंकर सभी प्रकार के अघातिया कर्मो से भी मुक्त होकर सिद्ध अवस्था प्राप्त करते है। ऋषभनाथ,

---

१ प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१९८–१९९
२. जंबूदीवपण्णत्तिसंगहो, १/३८–३९,४२; तिलोयप० ४/४१–४२,७५
३. तृतीय खण्ड, अध्याय ६६, ५—११.
४. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १ सर्ग १
५. ६/२८–३२

नेमिनाथ और महावीर पद्मासन मुद्रा में स्थित अवस्था से मुक्त हुये, शेष सभी तीर्थंकरों ने कायोत्सर्ग आसन से निर्वाण प्राप्त किया।[1] तीर्थंकरों के निर्वाण स्थलों की वंदना-पूजा जैन लोग किया करते हैं। वे निर्वाण भूमियां निम्न प्रकार हैं :—

ऋषभनाथ	कैलाश या अष्टापद
वासुपूज्य	चम्पापुरी
नेमिनाथ	ऊर्जयन्तगिरि
महावीर	पावापुरी
अन्य तीर्थंकर	सम्मेद शिखर

नव देवताराधन

नेमिचन्द्र[2] आदि ग्रंथकारों ने नवदेवताराधन का एकत्र उल्लेख किया है। तदनुसार अष्टदलकमल की आकृति का निर्माण कर उसके मध्य की कर्णिका पर अर्हत् परमेष्ठी की स्थापना की जाती है और चारों दिशाओं में स्थित पत्रों पर सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु इन चार परमेष्ठियों की तथा कोणस्थ दलों पर जिनधर्म, जिनागम, जिनबिम्बों और जिनमंदिरों की स्थापना करके पूजा की जाती है। वस्तुतः जैन लोग इन्हीं नौ की अष्टद्रव्य से सम्पूर्ण पूजा किया करते हैं। यक्षादि की अष्टद्रव्य पूजा नहीं की जाती। उन्हें पूजा का अंश भेंट किया जाता है। जिनमंदिरों और जिनबिम्बों की पूजा में कृत्रिम और अकृत्रिम जिनालयों, नंदीश्वरद्वीप के ५२ जिनालयों, ज्योतिष्क, व्यन्तर और भवनवासी देवों के प्रासादों में प्रतिष्ठित जिनालयों, पंचमेरु स्थित, कुलपर्वतों पर स्थित, जंबूवृक्ष, शाल्मलिवृक्ष और चैत्यवृक्षों पर स्थित, वक्षारपर्वतादि में, इष्वाकार गिरि में और कुण्डलद्वीप आदि में स्थित जिनालयों और जिनबिम्बों की पूजा जैनमंदिरों में हुआ करती है।

विशिष्ट शिल्पांकन

बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ और तेईसवे तीर्थंकर पार्श्वनाथ के जीवन-काल से संबंधित दो घटनाओं का अंकन भी शिल्प में किया जाता

१. तिलोयपण्णत्ती में ऋषभ, वासुपूज्य, और महावीर का पल्यंकबद्ध आसन (पद्मासन) से मुक्त होना बताया गया है।

२. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ७३

हैं। अरिष्टनेमि के विवाह की पूरी तैयारियां हो चुकी थीं। वे बारात लेकर पहुंच भी गये थे कि पशुओं के बंधन देखकर उन्हें संसार से वैराग्य हो गया। तीर्थंकर पार्श्वनाथ की तप अवस्था में पूर्व बैर वश कमठ नामक देव ने उन पर भीषण उपसर्ग किया था।

ऋषभदेव के पुत्र बाहुबली की प्रतिमाएं भी निर्मित की जाती है। उनमें उन्हें कठोर तपस्या में रत दिखाया जाता है। बाहुबली की प्रतिमाएं केवल कायोत्सर्ग आसन की होती हैं।

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम्।
इह मनुजकृतानां देवराजार्जितानां
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ।।

अष्ट प्रातिहार्य

सिंहासन, दिव्यध्वनि, चामरेन्द्र, भामण्डल, अशोकवृक्ष, छत्रत्रय, दुंदुभि और पुष्पवृष्टि ये अष्ट प्रातिहार्य हैं।

अष्ट मंगलद्रव्य

श्वेतछत्र, दर्पण, ध्वज, चामर, तोरणमाला, तालवृन्त (बीजना), नंद्यावर्त और प्रदीप ये अष्ट मंगलद्रव्य हैं।[१] इनकी स्थापना जिनपूजा विधान में की जाती है। मथुरा के आयागपट्टों पर इनकी प्रतिकृतियां उपलब्ध हुयी हैं। तिलोयपण्णत्ती में[२] भृंगार, कलश, दर्पण, ध्वज, चामर, छत्र, बीजन और सुप्रतिष्ठ ये आठ मंगलद्रव्य गिनाये गये है।

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ६/३५-३६; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३६६
२. ३/५६

पंचम अध्याय

चतुर्निकाय देव

जैन परम्परा में लोक के तीन भाग बताये गये हैं, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। मध्यलोक में हम निवास करते हैं। यह पृथ्वी गोलाकार है और असंख्य द्वीप समूहों से वेष्टित है। बीच में जम्बू नामक द्वीप है। उसे वलयाकृति लवणसमुद्र वेष्टित किये हुये है।

जम्बूद्वीप में छह कुलपर्वत होने से उसके सात क्षेत्र बन गये हैं। दक्षिण से क्रमशः हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी ये छह कुलाचल हैं। क्षेत्रों के नाम हैं भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत। विदेह क्षेत्र के मध्य में मेरुपर्वत स्थित है।

भरतक्षेत्र के बहुमध्य भाग में विजयार्ध पर्वत है। हिमवान् पर्वत से निकलनेवाली पूर्वगामिनी गंगा और पश्चिमगामिनी सिन्धु नदियों तथा विजयार्ध के कारण भरतक्षेत्र के छह खण्ड हो गये हैं। विजयार्ध पर्वत के कूटों पर व्यन्तर जाति के देवों के प्रासाद हैं। उनके नाम भरत, नृत्यमाल, माणिभद्र, वैताढ्य, पूर्णभद्र, कृनमाल, भरत और वैश्रवण हैं। गंगानदी के मणिभद्रकूट के दिव्य भवन में बला नामक व्यंतर देवी का और सिन्धु के बीच अवना या लवणा व्यंतर देवी का निवास है। उत्तर भरत के मध्यखण्ड के वृषभ गिरि पर वृषभ नामक व्यंतर रहता है

जम्बूद्वीप के चारों ओर चार गोपुर द्वार हैं। उनके नाम विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित है। ये नाम क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा में स्थित द्वारों के हैं।[1] इन द्वारों के अधिपति व्यन्तर देव हैं। द्वारों के जो नाम हैं, वे ही नाम उन देवों के हैं।[2]

मध्यलोक से सात राजु ऊपर का क्षेत्र ऊर्ध्वलोक है। मध्यलोक से नीचे अधोलोक है। ऊर्ध्वलोक में सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारों की स्थिति है। उनके ऊपर स्वर्ग, ग्रैवेयक और अनुत्तर विमान हैं जिनमें देवों का निवास है। अधोलोक में भी देवों का निवास है।

१. जंबूदीवपण्णत्तिसंगहो, १/३८–३९; तिलोयपण्णत्ती, ४/४१–४२
२. वही, १/४२; वही ४/७५

देव चार प्रकार के माने गये हैं। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और कल्पभव। ये चतुर्निकाय देव कहे जाते हैं। इन देवों में इन्द्र, सामानिक त्रायस्त्रिंशत्, पारिषद्, आत्मरक्ष, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, अभियोग्य और किल्विषिक ये उत्तरोत्तर हीन पद होते हैं। (व्यंतर देवों में त्रायस्त्रिंशत् और लोकपाल नहीं होते) भवनवासी और व्यन्तर देवों में दो-दो इन्द्र होते हैं।

भवनवासी देव

मध्यलोक मे नीचे अधोलोक में रत्नप्रभा नामक पृथ्वी के खर और पंकबहुलभाग में भवनवासी देवों के प्रासाद हैं।[1] भवनवासी देवों के दस दस विकल्प हैं। वे भवनों में रहते हैं अतएव भवनवासी कहलाते हैं। उनकी जातियों के नाम असुर, नाग विद्युत्, सुवर्ण, अग्नि, वात, स्तनित, उदधि, द्वीप और दिक् हैं। इनमें से प्रत्येक के साथ कुमार पद लगा रहता है यथा दिक्कुमार। भवनवासी देवों के वर्ण और मुकुट चिह्न निम्न प्रकार बताये गये हे :[2]—

नाम	वर्ण	मुकुटो में चिह्न
असुरकुमार	कृष्ण	चूडामणि
नागकुमार	कालश्यामल	सर्प
विद्युत्कुमार	विद्युत्	वज्र
सुपर्णकुमार	श्यामल	गरुड
अग्निकुमार	अग्निज्वाल	कलश
वातकुमार	नीलकमल	तुरग
स्तनितकुमार	कालश्यामल	वर्धमान (स्वस्तिक)
उदधिकुमार	कालश्यामल	मकर
द्वीपकुमार	श्यामल	हस्ती
दिक्कुमार	श्यामल	सिंह

भवनवासी देवों के इन्द्र अणिमादिक ऋद्धियों से युक्त एवं मणिमय कुण्डलो से अलंकृत होते हैं। इन्द्रों का किरीटमकुट और प्रतीन्द्रों का साधारण

---

१. पंकबहुल भाग में राक्षसों और असुरकुमारों के। खरभाग में शेष व्यन्तरों और भवनवासी देवों के।

२. तिलोयपण्णत्ती, ३/८–९; ३/११९–१२१

मुकुट होता है।[1] प्रत्येक इन्द्र के पूर्वादिक दिशाओं के रक्षक सोम, यम, वरुण और धनद, ये चार–चार लोकपाल होते हैं।[2] भवनवासी देवों के इन्द्रों के नाम तिलोयपण्णत्ती[3] में ये बताये गये हैं :—

	दक्षिण इन्द्र	उत्तर इन्द्र
असुर कुमार	चमर	वैरोचन
नागकुमार	भूतानंद	धरणानंद
सुपर्णकुमार	वेणु	वेणुधारक
द्वीपकुमार	पूर्ण	वशिष्ट
उदधिकुमार	जलप्रभ	जलकान्त
स्तनितकुमार	घोष	महाघोष
विद्युत्कुमार	हरिषेण	हरिकान्त
दिक्कुमार	अमितगति	अमितवाहन
अग्निकुमार	अग्निशिखी	अग्निवाहन
वायुकुमार	वेलम्ब	प्रभंजन

अश्वत्थ, सप्तपर्ण, शाल्मलि, जामुन, वेत, कदंब, प्रियंगु, शिरीष, पलाश और राजद्रुम, ये दस चैत्यवृक्ष क्रमशः इन भवनवासी देवों के कुलचिह्न होते हैं।[4] असुरकुमार देवों के सिकतानन आदि अनेक भेद होते हैं। वे अधोलोक में तीसरी पृथ्वी (बालुकाप्रभा) तक जाकर नारकी जीवों को लड़ाते रहते हैं और उससे मन में संतुष्ट होते हैं।[5]

आशाधर[6] और नेमिचन्द्र[7] ने भवनवासी देवों के इन्द्रों के वाहन, मुकुट

---

२. वही, ३।७१.

३. वही, ३।१३–१६

४. वही, ३।१३६

५. वही, २।३५०

६. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३।८६–६२

७. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३०१–०४

चिह्न अस्त्र और सेना आदि के संबंध में निम्नप्रकार विवरण दिया है:—

इन्द्र	वाहन	मुकुट चिह्न	अस्त्र	सेना
असुरेन्द्र	लुलाय	चूडामणि	मुद्गर	महिषादि सप्तानीक
नागकुमारेन्द्र	कमठ	नागफण	नागपाश	नागादि सप्तानीक
सुपर्णकुमारेन्द्र	द्विरद	सुपर्ण	दण्ड	सुपर्णादि सप्तानीक
द्वीपकुमारेन्द्र	तुरंग	द्विप		द्विपादि
उदधिकुमारेन्द्र	वारीभ	मकर	वडिदण्ड	मकरादि
स्तनितकुमारेन्द्र	मृगेन्द्र	वज्र	खड्ग	खड्गादि
विद्युत्कुमारेन्द्र	वराह	स्वस्तिक	तडित्	करभादि
दिक्कमारेन्द्र	दिक्कुंजर	सिंह	परिघा	सिंहादि
अग्निकुमारेन्द्र	महास्तंभ	कुंभ	उल्का	शिबिकादि
वातकुमारेन्द्र	तुरंग	तुरंग	वृक्ष	तुरंगादि

भैरवपद्मावतीकल्प में आठ प्रकार के नाग बताये गये हैं; अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोट,पदम, महासरोज, शंखपाल और कुलिक । वासुकि और शंख को क्षत्रियकल का तथा रक्तवर्ण एवं धराविष कहा गया है । कर्कोटक और पद्म शूद्रकुल के, कृष्णवर्ण एवं अब्धिविष हैं । अनन्त और कुलिक का कुल विप्र और वर्ण चन्द्रकान्त के समान है, वे अग्निविष हैं । तक्षक और महासरोज वैश्य हैं, पीतवर्ण एवं मरुद् विष हैं । धराविष से गुरुता और जड़ता आती है, देह में सन्निपात होता है । अब्धिविष से लालाकण्ठ निरोध होता है, दंशस्थान गलता है । वह्निविष के दोष से गंडोद्गम और दृष्टि अपटु होती है । मरुद् विष के दोष से आस्यशोषण बताया गया है । पद्मावती कर्कोट नाग पर आसीन होती हैं ।

व्यन्तर देव

व्यन्तर देवो के आठ विकल्प बताये गये है ।[1] उनके भी क्रमशः दस, दस, दस, दस, बारह, सात, सात और चौदह भेद होते है ।[2] जैसाकि ऊपर कहा जा चुका है, व्यन्तर देव मध्य लोक में भी रहते हैं और अधोलोक की प्रथम पृथ्वी के भाग में भी । जम्बूद्वीप के चार गोपुरद्वारों के रक्षक विजय, वैजयन्त. जयन्त और अपराजित व्यन्तरों के संबंध में ऊपर कहा जा चुका है ।

१. तिलोयपण्णत्ती, ६।२५

२. वही ६/३३--५०

व्यंतर देवों के किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत और पिशाच ये आठ विकल्प हैं। इनके इन्द्रों के वाहन और आयुधों का विवरण नेमिचन्द्र ने प्रतिष्ठातिलक में दिया है।[1] जैसे किन्नरेन्द्र का वाहन अष्टापद और आयुध नागपाश; राक्षसेन्द्र का वाहन सिंह और आयुध भाला।

स्वर्गीय डाक्टर हीरालाल जी जैन ने इन जातियों के संबंध में लिखा है—

"राक्षस, भूत, पिशाच आदि चाहे मनुष्य रहे हों अथवा और किसी प्रकार के प्राणी, किन्तु देश के किन्ही वर्गों में इनकी कुछ न कुछ मान्यता थी जिसका आदर करते हुए जैनियों ने इन्हें एक जाति के देव स्वीकार किया है।"[2]

यहां यक्षों के द्वादश भेद बता देना आवश्यक है, वे हैं माणिभद्र, पूर्णभद्र, शैलभद्र, मनोभद्र, भद्रक, सुभद्र, सर्वभद्र, मानुष, धनपाल, स्वरूपयक्ष, यक्षोत्तम और मनोहरण। इनके माणिभद्र और पूर्णभद्र नामक दो-दो इन्द्र और उन इन्द्रों के कुन्दा, बहुपुत्रा, तारा और उत्तमा नामक देवियां होती हैं।[3] उल्लेखनीय है कि पूर्णभद्र, मणिभद्र, शालिभद्र, सुमनभद्र, लक्षरक्ष, पूर्णरक्ष, सर्वण, आदि यक्षों का उल्लेख भगवतीसूत्र (३–७) में भी मिलता है।

ज्योतिष्क देव

इन्हें पटलिक भी कहते हैं। इनके पांच समूह हैं, चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्णक तारे।[4] चन्द्र इन्द्र है और सूर्य प्रतीन्द्र। प्रत्येक चन्द्र के अठासी ग्रह हैं, उनमें से प्रथम पांच बुध, शुक्र, बृहस्पति, मंगल और शनि है।[5] प्रत्येक चन्द्र के अट्ठाईस नक्षत्र हैं[6] जिनकी सूची वही है जो सामान्यतया अन्य ग्रन्थों में मिलती है। नक्षत्रों का आकार निम्न प्रकार बताया गया है।

बीजना, गाड़ी की उद्धिका, हिरण का मस्तक, दीप, तोरण, छत्र, वल्मीक, गोमूत्र, शरयुग, हस्त, उत्पल, दीप, अधिकरण, हार, वीणा, सींग, बिच्छू, दुष्कृतवापी, सिंह का मस्तक, हाथी का मस्तक, मुरज, गिरता पक्षी, सेना, हाथी का पूर्व शरीर, हाथी का ऊपरी शरीर, नौका, घोड़े का सिर, चूल्हा।[7]

१. पृष्ठ ३०६ स ३०८।
२. भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान, पृष्ठ ५।
३. तिलोयपण्णत्ती, ६/४२–४३
४. वही, ७/७
५. वही, ७/१४–२२
६. वही, ७/२५–२८
७. वही, ७/४६५–६७

प्रत्येक चन्द्र की चन्द्रला, सुसीमा, प्रभंकरा और अर्चिमालिनी ये चार[1] और प्रत्येक सूर्य की द्युतिरुचि, प्रभंकरा, सूर्यप्रभा और अर्चिमालिनी ये चार अग्रमहिषी[2] हुआ करती हैं ।

वैमानिक देव

इनके मुख्य भेद दो हैं, कल्पोपपन्न और कल्पातीत । तिलोयपण्णत्ती (८/१२–१७) में कुल त्रेसठ इन्द्रक विमान बतलाये गये हैं । उनमें से बावन कल्प और ग्यारह कल्पातीत । कल्पवासी देवों में इन्द्र, सामानिक आदि दस उत्तरोत्तर हीन पद रूप कल्प होते हैं । तिलोयपण्णत्ती (८/११५) में कहा गया है कि कोई बारह कल्प और कोई सोलह कल्प (स्वर्ग) मानते हैं । इसी भेद के कारण श्वेताम्बरों ने कुल इन्द्रों की संख्या ६४ और दिगम्बरों ने १०० बतायी है ।

दिगम्बरों में सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, ये सोलह स्वर्ग माने गये हैं । उनमें से ब्रह्मोत्तर, कापिष्ठ, महाशुक्र, और शतार कम कर देने से वह संख्या द्वादश हो जाती है । इन स्वर्गों तक कल्प हैं । इनके ऊपर कल्पातीत पटल हैं; नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश और पांच प्रकार के अनुत्तर विमान ।

जैन प्रतिमाशास्त्र में मुख्यतः सौधर्म और ईशान स्वर्ग के इन्द्रों का प्रसंग आता है । लौकान्तिक देव केवल तीर्थंकर के वैराग्य (तपकल्याणक) के समय पृथ्वी पर आते हैं । उनके नाम सारस्वत, आदित्य, वह्नि, अरुण, गर्दतोय, तुषित, अव्याबाध और अरिष्ट हैं । तीर्थंकर के जन्मकल्याणक के समय सौधर्मेन्द्र भगवान को गोद में लेता है, ईशानेन्द्र छत्र धारण करता है, सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग के इन्द्र चंवर ढौंरते हैं । शेष इन्द्र जय जय शब्द का उच्चारण करते हैं । सौधर्मेन्द्र और ईशानेन्द्र ही भगवान् का अभिषेक करते हैं तथा धनपति को सेवार्थ नियुक्त करते हैं ।

---

१. तिलोयपण्णत्ती, ७/५८

२. वही, ७/७७

आचारदिनकर (उदय ३३, पत्रा १५५) में सौधर्मेन्द्र और ईशानेन्द्र का स्वरूप निम्न प्रकार बताया गया है—

	सौधर्मेन्द्र	ईशानेन्द्र
वर्ण	काञ्चनवर्ण	श्वेतवर्ण
भुजाएं	चतुर्भुज	चतुर्भुज
वाहन	गजवाहन	वृषभवाहन
वस्त्र	पंचवर्णवस्त्राभरण	नीललोहितवस्त्र, जटाधारी
आयुध	दो हाथ अंजलिबद्ध	दा हाथ अंजलिबद्ध
	एक हाथ अभयमुद्रा में	एक हाथ म शूल
	एक हाथ में वज्र	एक हाथ में चाप

पद्मा, शिवा, सुलसा, शची, अंजु, कालिंदी, श्यामा और भानु, ये आठ सौधर्मेन्द्र की अग्रदेवियां[1] और श्रीमती, सुसीमा, वसुमित्रा, वसुन्धरा, ध्रुवसेना, जयसेना, सुषेणा और प्रभावती ये आठ ईशानेन्द्र की अग्रदेवियां[2] बतायी गयी हैं।

तिलोयपण्णत्ती,[3] जंबूदीवपण्णत्तिसंगहो[4] और त्रिलोकसार[5] के अनुसार सोलह स्वर्गों के इन्द्रों के वाहन, आयुध और मौलिचिह्न का विवरण नीचे दिया जा रहा है—

	वाहन			आयुध	मौलिचिह्न
	जंबू०	तिलोय०	त्रिलो०		
१. सौधर्मेन्द्र	गज	गज	गज	वज्र	शूकर
२. ईशानेन्द्र	वृषभ	गज	अश्व	त्रिशूल	मृग
३. सनत्कुमारेन्द्र	सिंह	सिह	सिंह	तलवार	महिष
४. माहेन्द्रेन्द्र	अश्व	अश्व	वृषभ	परशु	मत्स्य

१. जंबूदीवपण्णत्तिसंगहो, ११/२५७
२. वही, ११/३१३
३. ५/८५–८७
४. ५/९३ आदि
५. गाथा ४८६, ४८७, ९७४, ९७५

५. ब्रह्मेन्द्र	हंस	हंस	सारस	मणिदण्ड	कूर्म
६. ब्रह्मोत्तरेन्द्र	वानर	क्रौंच	सारस	पाश	दर्दुर
७. लान्तवेन्द्र	सारस	सारस	पिक	धनुर्दण्ड	तुरग
८. कापिष्ठेन्द्र	मकर	मकर	पिक	कमल	कुञ्जर
९. शुक्रेन्द्र	चक्रवाक	चक्रवाक	हंस	पूगफलगुच्छ	चन्द्र
१०. महाशुक्रेन्द्र	पुष्पक	तोता	हस	गदा	सर्प
११. शतारेन्द्र	कोयल	कोयल	कोक	तोमर	—
१२. सहस्रारेन्द्र	गरुड	गरुड	कोक	हलमूसल	गेंडा
१३. आनतेन्द्र	—	गरुड	गरुड	श्वेतपुष्पों की माला	छगल
१४. प्राणतेन्द्र	कमल	कमल	मकर	कमलमाला	वृषभ
१५. आरणेन्द्र	नलिन	कुमुद	मयूर	चम्पकमाला	कल्पतरु
१६. अच्युतेन्द्र	कुमुद	मयूर	पुष्पक	मुक्तामाला	कल्पतरु

षष्ठ अध्याय

विद्यादेवियां

श्रुतदेवता सरस्वती

तिलोयपण्णत्ती में अनेक स्थलों पर श्रुतदेवी (सरस्वती) के रूप (प्रतिमाओं) का उल्लेख मिलता है।[1] मथुरा के जैन शिल्प में प्राचीनतम सरस्वती प्रतिमा प्राप्त हुई है जो लेखयुक्त है। बीकानेर तथा अन्य कई स्थानों की जन सरस्वती प्रतिमाएँ सुप्रसिद्ध हैं।

श्रुतदेवता या सरस्वती की प्रतिमाओं के निर्माण और उनकी पूजा की परम्परा जैनों में अति प्राचीन कालसे चली आ रही है। सरस्वती द्वादशांग श्रुतदेव की अधिदेवता है। भगवान् जिनेन्द्र के वस्तुतत्त्वनिरूपण को उनके गणधरों ने बारह अंगों में संग्रहीत किया था जिसे द्वादशाग आगम या श्रुत कहा जाता है। जिनेन्द्र की वाणी होने के कारण श्रुत जिनेन्द्र के समकक्ष प्रामाणिक और पूज्य माना जाता है। इसलिये श्रुत को भी देव की संज्ञा प्राप्त हो गयी। कालान्तर मे श्रुत की अधिदेवता के रूपमें श्रुतदेवता या सरस्वती के मूर्त रूप की कल्पना हुयी। सरस्वती को भारती, वाणी आदि अनेक नामों से स्मरण किया जाता है।

जैनों की सरस्वती प्रतिमा जैनेतरों की सरस्वती प्रतिमा से विशेष भिन्न प्रकार की नही होती। प्राचीन कालमे भारत के सभी धर्मावलम्बियों में सरस्वती की एक समान प्रतिष्ठा थी। मल्लिषेण ने अपने भारतीकल्प[2] में सरस्वतीवन्दना करते हुये लिखा है कि हे देवि, साङ्ख्य, चार्वाक, मीमांसक, सौगत तथा अन्य मत-मतान्तरों को मानने वाले भी ज्ञानप्राप्ति के हेतु तेरा ध्यान करते है। मल्लिषेण ने वाणी (सरस्वती) को त्रिनेत्रा और जटाभालेन्दु-मण्डिता कहा है। वर्ण श्वेत होता है और वह सरोजविष्टर पर आसीन होती है। सरस्वती के चार हाथों मे से एक हाथ अभय मुद्रा में होता है और दूसरा हाथ ज्ञानमुद्रामें। शेष दो हाथों के आयुध क्रमश: अक्षमाला और पुस्तक हैं।[3]

१. ४/१८८१ तथा अन्यत्र।

२. जैन सिद्धान्त भवन आरा का हस्तलिखित ग्रन्थ क्रमांक भ/८०

३. वही

सरस्वती की स्तुतिमें अनेक जैन आचार्यों और पंडितों ने कल्प, स्तोत्र और स्तवन रचे हैं। मल्लिषेण की रचना का उल्लेख ऊपर किया गया है। बप्पभट्टि का सरस्वतीकल्प, साध्वी शिवार्या का पठितसिद्धसारस्वतस्तव, जिनप्रभसूरि का शारदास्तवन और विजयकीर्ति के शिष्य मलयकीर्ति का सरस्वतीकल्प कुछेक प्रसिद्ध रचनाओं में से हैं। मलयकीर्ति ने सरस्वती को कलापिगमना और पुण्डरीकासना बताया है।[1] उन्होंने भी सरस्वती को त्रिनयना और चतुर्भुजा कहा है। आचारदिनकर में[2] श्रुतदेवता को श्वेतवर्णा, श्वेतवस्त्रधारिणी, हंसवाहना, श्वेतसिंहासनासीना, भामण्डलालंकृता और चतुर्भुजा बताया गया है। देवी के बायें हाथों में श्वेतकमल और वीणा तथा दायें हाथों में पुस्तक और मुक्ताक्षमाला का विधान किया गया है किन्तु आचारदिनकर के ही सरस्वती स्तोत्रमें देवी के बायें हाथों के आयुध वीणा और पुस्तक तथा दायें हाथों के आयुध माला और कमल कहे गये हैं। निर्वाणकलिका में भी सरस्वती के रूप का वर्णन मिलता है। इस ग्रन्थ के बिम्बप्रतिष्ठाविधि स्थलमें सरस्वती को द्वादशांग श्रुतदेव की अधिदेवता कहा गया है।[3] निर्वाणकलिका के अनुसार श्रुतदेवता के दायें हाथों में से एक हाथ वरद मुद्रा में होता है और दूसरे हाथ में कमल होता है। बायें हाथों के आयुध पुस्तक और अक्षमाला बताये गये हैं।[4]

विद्या देवियां

अभिधानचिन्तामणिमें[5] विद्यादेवियों के नामों का उल्लेख करते हुये उन्हें वाक्, ब्राह्मी, भारती, गो, गी, वाणी, भाषा, सरस्वती, श्रुतदेवी, वचन, व्याहार, भाषित और वचस् भी कहा गया है। इससे प्रतीत होता है कि जैनों की विद्यादेवियां वस्तुत: अपने नामके अनुसार वाणी की विभिन्न प्रकृतियों के कल्पित मूर्त रूप हैं। विद्यादेवियों का स्वरूप बताते समय प्राय: सभी ग्रन्थोमें उन्हें ज्ञान से संयुक्त कहा गया है।

१. सरस्वतीकल्प, जैनसिद्धान्त भवन आरा का हस्तलिखित ग्रन्थ क्रमांक ख/२३९।
२. उदय ३३, पन्ना १५५।
३. निर्वाणकलिका, पन्ना १७
४. वही, पन्ना ३७
५. देवकाण्ड (द्वितीय)

विद्यादेवियां सोलह मानी गयी हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं, १. रोहिणी, २. प्रज्ञप्ति, ३. वज्रश्रृंखला, ४ वज्रांकुशा, ५. जाम्बूनदा, ६. पुरुषदत्ता, ७. काली, ८. महाकाली, ९. गौरी, १० गांधारी, ११. ज्वाला-मालिनी, १२. मानवी, १३. वैरोटी, १४. अच्युता, १५ मानसी और १६. महामानसी। यह सूची दिगम्बर परम्परा के अनुसार है। श्वेताम्बर परम्परा में पांचवीं विद्यादेवी अप्रतिचक्रा या चक्रेश्वरी कही गयी है। अभिधानचिन्तामणि में[1] चक्रेश्वरी नामसे और पद्मानन्द महाकाव्य[2] में अप्रतिचक्रा नामसे उसका उल्लेख मिलता है। आठवी विद्यादेवी का नाम हेमचन्द्र ने महापरा बताया है[3] किन्तु श्वेताम्बर परम्परा के अन्य ग्रन्थ उसे महाकाली ही कहते हैं।[4] ज्वालामालिनी का उल्लेख श्वेताम्बर ग्रन्थों में ज्वाला नाम से मिलता है।[5] उन्ही ग्रन्थों में वैरोटी को वैरोट्या और अच्युता को अच्छुप्ता कहा गया है।

विद्यादेवियों की सूची का शासन देवताओं की सूची से मिलान करने पर विदित होगा कि इन देवियों मे से प्राय: सभी को शासन यक्षियों की सूची मे स्थान प्राप्त है यद्यपि शासन यक्षी के रूप में इनके आयुध, वाहन आदि भिन्न प्रकार के होते हैं। गौरी, वज्राकुशी, वज्रशृंखला, वज्रगांधारी, प्रज्ञा-पारमिता, विद्युज्ज्वालाकराली जैसी देवियो की मान्यता बौद्ध परम्परा में भी रही है। वस्तुत: वज्रशृंखला और वज्राकुशा जैसे नाम बौद्धो की तांत्रिक परम्परा से अधिक प्रभावित जान पड़ते है।

रोहिणी

षोडश विद्यादेवियों मे रोहिणी प्रथम है। यद्यपि दिगम्बर और श्वेता-म्बर दोनों परम्पराओं में इसकी इसी नाम से मान्यता है, पर दोनों परम्पराओ

१. देवकाण्ड (द्वितीय)।
२. १/८३–८४।
३. अभिधानचिन्तामणि, देवकाण्ड / आचारदिनकर (उदय ३३) में भी महापरा नाम मिलता है।
४. निर्वाणकलिका, पन्ना ३७।
५. दिगम्बर परम्परा के विद्वानों द्वारा भी ज्वालिनीकल्प नाम से रचनाएं की गयी हैं।

में देवी के वर्ण, वाहन और आयुधों के संबंध में मतवैषम्य है। दिगम्बरों के अनुसार रोहिणी स्वर्ण के समान पीत वर्ण की है[1] जबकि श्वेताम्बर ग्रन्थों में उसे धवल वर्ण कहा गया है।[2] दिगम्बरों के अनुसार यह विद्यादेवी कमलासना है[3] पर श्वेताम्बर परम्परा गोवाहना कहती है।[4] रोहिणी चतुर्भुजा है। दिगम्बर ग्रन्थों में उसके हाथों के आयुध कलश, शंख, कमल और बीजपूर बताये गये हैं।[5] इसके विपरीत श्वेताम्बर परम्परा की रोहिणी दायें हाथों में अक्षसूत्र और बाण तथा बांये हाथों में शंख और धनुष धारण किये रहती है।[6] आचारदिनकर ने इस देवी को 'गीतवरप्रभावा' कहा है। दिगम्बर परम्परा में द्वितीय तीर्थंकर अजितनाथ की शासन यक्षी का नाम भी रोहिणी है पर वह लोहासना होती है और उसके आयुध शंख, चक्र, अभय और वरद होते हैं।

प्रज्ञप्ति

द्वितीय विद्या देवी का नाम प्रज्ञप्ति है। इसे दिगम्बर ग्रन्थ श्याम वर्ण की[7] और श्वेताम्बर ग्रन्थ कमलपत्र के समान अथवा धवल वर्ण की बताते हैं।[8] दिगम्बरों के अनुसार इसका वाहन अश्व[9] पर श्वेताम्बरों के अनुसार मयूर है।[10] दिगम्बर परम्पराके ग्रन्थों में प्रज्ञप्ति के चार हाथ बताये गये हैं जबकि श्वेताम्बर परम्परा के आचारदिनकर के अनुसार, वह द्विभुजा और निर्वाणकलिका के अनुसार चतुर्भुजा है। आचार दिनकर ने शक्ति और कमल ये दो आयुध कहे है[11] किन्तु निर्वाणकलिका के वर्णन के अनुसार प्रज्ञप्ति के दायें हाथों में से एक तो वरद मुद्रा में होता है और दूसरे हाथ में शक्ति होती है तथा बायें हाथों में वह मातुलिंग और पुनः शक्ति धारण करती है।[12] दिगम्बर परम्परा में प्रज्ञप्ति के चक्र,

१ ३.५ आशाधर, ३/३७; नामचन्द्र, पृष्ट २८४.

२.४.६. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२; निर्वाणकलिका, पन्ना ३७।

७. वसुनन्दि/६

८. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२; निर्वाणकलिका, पन्ना ३७।

९. आशाधर

१०. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२; निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

११. उदय ३३, पन्ना १६२

१२. पन्ना ३७

खड्ग, कमल और फल, ये चार आयुध बताये गये है।[1] दिगम्बरों ने तीसरे तीर्थंकर की यक्षी का नाम भी प्रज्ञप्ति कहा है किन्तु वह यक्षी पक्षीवाहना और षड्भुजा होती है।

वज्रश्रृंखला

तृतीय विद्यादेवी वज्रश्रृंखला का वर्ण सोने के समान पीत है। दिगम्बर ग्रन्थों में उसका वाहन हाथी कहा गया है पर श्वेताम्बरों के अनुसार वह पद्मवाहना है। आचार दिनकर में वज्रश्रृंखला के केवल दो आयुधो का नामोल्लेख किया गया है, वे हैं श्रृंखला और गदा[2] किन्तु निर्वाणकलिका[3] के अनुसार देवी के चार हाथों मे से उपरले दोनों हाथो में श्रृंखला होती है और निचला दाया हाथ वरद मुद्रा में तथा निचला बायां हाथ पद्म धारण किये होता है। दिगम्बर परम्परा के प्रतिष्ठातिलक के वर्णनके अनुसार, वज्रश्रृंखला, शंख, कमल और बीजपूर ये चार वज्रश्रृंखला विद्यादेवीके आयुध है।[4] आशाधर ने वज्र और श्रृंखला इन दोनों को भिन्न भिन्न आयुध बताया है। वसुनन्दि ने श्रृंखला का तो नामोल्लेख किया है पर अन्य आयुधो का विवरण नही दिया। केवल यह सूचित किया है कि देवी चतुर्भुजा होती है। दिगम्बर परम्परा म चतुर्थ तीर्थंकर की यक्षी का नाम भी वज्रश्रृंखला है किन्तु उस यक्षी का स्वरूप भिन्न है।

वज्रांकुशा

चतुर्थ विद्यादेवी का यह नाम भी बौद्धो से प्रभावित प्रतीत होता है। वसुनन्दि न वज्रांकुशा का वर्ण अंजन के समान काला बताया है पर अन्यत्र उसे सोने के समान पीतवर्णवाली कहा गया है।[5] दिगम्बर परम्परा के अनुसार इस देवी का वाहन पुष्पयान है किन्तु श्वेताम्बर परम्परा म वह गज माना गया है।[6] वज्रांकुशा के चार हाथ होते है। दिगम्बर ग्रन्थकारो मे से न तो वसुनन्दि ने, न आशाधर ने और न ही नेमिचन्द्र ने सभी आयुधो के नाम लिये है।

१. नेमिचन्द्र, पृष्ठ ३८४
२. उदय ३३, पन्ना १६२
३. पन्ना ३७
४. नेमिचन्द्र, पृष्ठ २८५
५. निर्वाणकलिका, पन्ना ३७; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२
६, वही

वसुनन्दि ने देवी को अंतुजाहस्ता कहा है। आशाधर ने एक हाथ का आयुध वीणा बताया है, शेष आयुध नही बताये। नेमिचन्द्र ने अंकुश, कमल और बीजपूर इन तीन आयुधों का नामोल्लेख किया है।[1] चौथे आयुध का उल्लेख नही किया। यदि नेमिचन्द्र द्वारा गिनाये गये तीन आयुधों में आशाधर द्वारा बताया गया चतुर्थ आयुध वीणा जोड़ दिया जावे तो दिगम्बर परम्परा के अनुसार वज्रांकुशा के चारों हाथों में क्रमशः वीणा, अंकुश, कमल और बीजपूर ये चार आयुध होना चाहिये। निर्वाणकलिकाकार ने दायें हाथों के आयुध वरद और वज्र तथा बायें हाथों के आयुध मातुलिंग और अंकुश कहे हैं।[2] आचार दिनकर में[3] खड्ग, वज्र, फलक (ढाल) और कुन्त (भाला) ये चार आयुध बताये गये हैं।

जाम्बूनदा/अप्रतिचक्रा

पंचम विद्यादेवी का नाम दिगम्बर परम्परा में जाम्बूनदा और श्वेताम्बर परम्परा में अप्रतिचक्रा या चक्रेश्वरी मिलता है। अप्रतिचक्रा को प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ की शासनदेवता भी माना गया है। पद्मानन्द महाकाव्य (१/८३-८४) मे कहा है कि चक्रेश्वरी सभी देवताओं में अधिदेवता है और वही देवी विद्यादेवियों में अप्रतिचक्रा के नाम से प्रसिद्ध है।

जाम्बूनदा और अप्रतिचक्रा दोनों का ही वर्ण स्वर्ण के समान पीत बताया गया है। जाम्बूनदा का वाहन मयूर है और अप्रतिचक्रा का गरुड। अप्रतिचक्रा के चारों हाथों में चक्र होते हैं।[4] जाम्बूनदा के आयुध खड्ग, कुन्त, कमल और बीजपूर हैं।[5]

पुरुषदत्ता

छठी विद्यादेवी पुरुषदत्ता को दिगम्बर ग्रन्थ श्वेतवर्णा की और श्वेताम्बर ग्रन्थ पीतवर्णा वाली कहते हैं। दिगम्बरों के अनुसार उसका वाहन कोक है[6] और श्वेताम्बरों के अनुसार महिषी (भेंस)।[7] दिगम्बर परम्परा के अनु-

१. प्रातिष्ठातिलक, पृष्ठ २८५।
२. निर्वाणकलिका, पन्ना ३७।
३. उदय ३३, पन्ना १६२।
४. निर्वाणकलिका, पन्ना ३७।
५. नेमिचन्द्र, पृष्ठ २८५।
६. आशाधर/३–४२
७. निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

सार यह विद्यादेवी चतुर्भुजा है किन्तु श्वेताम्बर परम्परा के आचारदिनकर और निर्बाणकलिका में देवी की भुजाओं की संख्या के विषय में भिन्न मत प्रकट किये गये हैं । आचारदिनकर के कथनानुसार पुरुषदत्ता द्विभुजा है[1] किन्तु निर्वाणकलिकाकार उसे दिगम्बरों के समान चतुर्भुजा ही कहते हैं। आचारदिनकर में खड्ग और ढाल इन दो आयुधों का उल्लेख है जबकि निर्वाणकलिका के अनुसार इस देवी के दायें हाथों में से एक वरदमुद्रा में होता हैं और दूसरे हाथ में तलवार तथा बायें हाथों में मातुलिंग और खेटक होते हैं ।[2] दिगम्बर परम्परा में वज्र, कमल, शंख और फल ये चार आयुध बताये गये हैं ।[3] दिगम्बर परम्परा में ही पुरुषदत्ता पंचम तीर्थंकर की यक्षी का भी नाम बताया गया है किन्तु उसका स्वरूप भिन्न प्रकार का है ।

काली

सप्तम विद्यादेवी काली का वर्ण श्वेताम्बरों के अनुसार कृष्ण और दिगम्बरों के अनुसार पीत है । दिगम्बरों के अनुसार इसका वाहन हरिण है पर श्वेताम्बर कमल पर आसीन कहते हैं । देवी चतुर्भुजा होती है । आचार दिनकर ने गदा और वज्र ये दो ही आयुध बताये हैं[4] पर निर्वाणकलिका में दायें हाथों में अक्षसूत्र और गदा का तथा बायें हाथों में वज्र और अभय का विधान है ।[5] नेमिचन्द्र ने मुशल, तलवार, कमल और फल, ये चार आयुध कहे हैं ।[6] श्वेताम्बरों की सूची में चतुर्थ तीर्थंकर की और दिगम्बरों की सूची में सप्तम तीर्थंकर की यक्षी का नाम भी काली है किन्तु उनके लक्षण इस विद्यादेवी से भिन्न प्रकार के हैं ।

महाकाली

अष्टम विद्यादेवी महाकाली को अभिधानचिन्तामणि में महापरा तथा आचारदिनकर में महापरा और कालिका दोनों कहा गया है । यह संभवत:

१. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

२. निर्बाणकलिका, पन्ना ३७ ।

३. नेमिचन्द्र, पृष्ठ २८६ ।

४. उदय ३३, पन्ना १६२ ।

५. पन्ना ३७ ।

६. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८७ ।

सप्तम विद्यादेवी काली के साथ 'महा' पद जोड़े जाने का निर्देश है। दिगम्बर आम्नाय में महाकाली का वर्ण श्याम या नील माना जाता है जबकि आचार दिनकरकार ने उसे चन्द्रकान्त मणि के समान उज्ज्वल वर्ण की और निर्वाण-कलिकाकार ने तमाल वर्ण की बताया है। दिगम्बर परम्परा के अनुसार महाकाली की सवारी शरभ है पर श्वेताम्बर परम्परा में इस विद्यादेवी को नरवाहना माना गया है। देवी की चार भुजाएं हैं। आशाधर और नेमिचन्द्र ने धनुष, खड्ग, फल और वाण ये चार आयुध बताये हैं।[1] वसुनन्दि ने देवी को वज्रहस्ता और चतुर्भुजा कहा है[2] पर अन्य आयुधों का नामोल्लेख नहीं किया। निर्वाणकलिका में[3] देवी के दायें हाथों में अक्षसूत्र और वज्र का तथा बायें हाथों में से एक में घण्टा और दूसरा अभय मुद्रा में होने का विधान है। आचार दिनकर[4] के अनुसार तीन हाथों में अक्षसूत्र, घण्टिका और वज्र तो होते हैं किन्तु चौथा हाथ अभयमुद्रा में न होकर फल धारण किये होता है। शोभन मुनि की चतुर्विंशतिका में भी इस देवी के वज्र, फल,अक्षमाला और घण्टा यही चार आयुध बताये गये हैं। महाकाली नाम तीर्थंकरों की यक्षियों की सूची में भी मिलता है। श्वेताम्बरों की सूची में वह पंचम तीर्थंकर की और दिगम्बरों की सूची में नवम तीर्थंकर की यक्षी है किन्तु वहां यक्षी के आयुध, वाहन आदि भिन्न प्रकार के बताये गये हैं।

गौरी

नौवीं विद्यादेवी गौरी को श्वेताम्बरों ने गौर वर्ण और दिगम्बरों ने पीत वर्ण बताया है। निर्वाणकलिकाकार ने इसे कनकगौरी कहा है। गौरी का वाहन गोधा है। चार भुजाओं वाली इस विद्यादेवी का मुख्य आयुध कमल है। वसुनन्दि ने इसे चतुर्भुजा और पद्महस्ता कहा है। उनका वर्णन अपूर्ण है। आचार दिनकर में भी सहस्रपत्र (कमल) मात्र का नामोल्लेख है, अन्य आयुधों का नहीं। पर निर्वाणकलिका में चारों हाथों के आयुध कहे है। तदनुसार गौरी के दायें हाथों में से एक वरदमुद्रा में, दूसरे में मूसल तथा बायें हाथों में अक्ष—

१. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८६
२. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ६
३. पन्ना ३७
४. उदय ३३, पन्ना १६२

माला और कुवलय (कमल) होते है ।[1] गौरी का नाम शासन देवताओं की सूची मे भी है। दिगम्बरों के अनुसार ग्यारहवें तीर्थंकर की यक्षी का नाम गौरी या गोमेधकी है किन्तु वह मृगवाहना होती है।

गांधारी

दसवी विद्यादेवी गांधारी है जिसे दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनो ही आम्नाय भ्रमर और अंजन के समान कृष्ण वर्ण की मानते है। दिगम्बर आम्नाय मे गांधारी को कच्छपासीन किन्तु श्वेताम्बर आम्नाय मे उसे कमलासीन माना गया है। यद्यपि आचार दिनकर मे इस देवी के केवल दो आयुधों-मूसल और वज्र--का नामोल्लेख है किन्तु निर्वाण कलिका मे चारो हाथों के आयुध गिनाये गये हे।[2] वे इस प्रकार है, दाये ओर का एक हाथ वरदमुद्रा मे, दूसरे हाथ मे मूसल, बाये ओर का एक हाथ अभयमुद्रा मे और दूसरे हाथ मे वज्र। दिगंबर परम्परा मे भी गाधारी को चतुर्भुजा कहा गया है। वसुनन्दि ने केवल एक आयुध, चक्र, का उल्लेख किया है पर चतुर्भुजा कहा है। आशाधर और नेमिचन्द्र[3] ने चक्र और खड्ग, इन दो आयुधो के नाम बताये हैं, शेष दो के नही।

गाधारी का नाम भी शासन देवियो की सूची मे मिलता है। दिगम्बर परम्परा मे बारहवे तीर्थंकर की यक्षी का नाम गाधारी है। कुछ ग्रन्थो के अनुसार वह सत्रहवे तीर्थंकर की यक्षी है। श्वेताम्बर परम्परा मे इक्कीसवे तीर्थंकर की यक्षी का नाम गाधारी बताया गया है किन्तु वह यक्षी हसवाहना होती है।

ज्वालामालिनी / ज्वाला

दिगम्बरो मे ज्वालामालिनी के नाम से और श्वताम्बरो मे ज्वाला के नाम से मान्य ग्यारहवीं विद्यादेवी का श्वतवर्ण का माना गया है। इसक वाहन क संबध म मतवैषम्य ह। शोभन मुनि कृत चतुर्विंशतिका मे वरालक, आचारदिनकर मे मार्जार, निर्वाणकलिका मे वराह, प्रतिष्ठासारोद्धार मे महिष और नमिचन्द्र क प्रतिष्ठातिलक मे लुलाय वाहन का उल्लेख है। दिगम्बर ग्रन्थ इस देवी की अष्टभुजा बताते है। निर्वाणकलिका न असंख्यभुजा कहा है पर आयुधो के नाम नही गिनाये। आचारदिनकर के अनुसार

---

१. पन्ना ३७।

२. पन्ना ३७-३८

३. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८७।

यह देवी दो हाथों में ज्वाला धारण करती है।[1] वसुनन्दि इसके अष्टभुजा होने का उल्लेख तो करते हैं पर केवल चार आयुध, धनुष, खड्ग, बाण और खेट गिनाकर छोड़ देते हैं।[2] नेमिचन्द्र ने धनुष और बाण इन दो आयुधों का उल्लेख किया है, शेष छह का नहीं।[3] आशाधर ने भी धनुष, खेट, खड्ग और चक्र इन चार का उल्लेख कर आदि आदि कहा है। वसुनन्दि की सूची में बाण है जो नेमिचन्द्र की सूची में नहीं है। वह मिला देने से पांच आयुधों की निश्चित जानकारी संभव है। इनके अलावा एक-एक हाथ अभय और वरदमुद्रा में भी हो सकते हैं। ज्वालामालिनी को दिगम्बर परम्परा में अष्टम तीर्थंकर की यक्षी भी माना गया है। वह्निदेवी के नाम से ज्ञात इस विद्यादेवी को यक्षी के रूप में भी श्वेतवर्णवाली, महिषवाहना और अष्टभुजा कहा गया है। ज्वालामालिनी यक्षी के जो आयुध आशाधर और नेमिचन्द्र ने बताये हैं, वे इस प्रकार हैं, दायें हाथों में त्रिशूल, बाण, मत्स्य और खड्ग; बायें हाथों में चक्र, धनुष, पाश और ढाल। वसुनन्दि ने दो आयुध तो नही बताये पर शेष छः आयुधों का उल्लेख किया है जिनमें से एक वज्र भी है। बाकी पांच बाण, त्रिशूल, पाश ,धनुष और मत्स्य ये हैं। ज्वालामालिनी कल्प में खडग और ढाल के बदले फल और वरद का विधान है।

मानवी

बारहवी विद्यादेवी का वर्ण नील माना गया है। केवल निर्वाणकलिकाकार ने उसे श्याम वर्ण कहा है जो नीले के लिये भी प्रयुक्त होता है। दिग—म्बरों के अनुसार मानवी शूकरवाहना है, किन्तु श्वेताम्बर ग्रन्थों में उसे नील सरोज(कही साधारण सरोज)पर आसीन बताया गया है। दोनों परम्पराओं में मानवी को चतुर्भुजा माना गया है पर वसुनन्दि ने केवल एक आयुध-त्रिशूल का, आशाधर ने त्रिशूल और मत्स्य का, मिचन्द्र ने मत्स्य, त्रिशूल, और खड्ग इन आयुधों का नाम बताया है। चौथे आयुध का उल्लेख नेमिचन्द्र ने भी नहीं किया।[4] आचारदिनकर ने देवी के हाथ में वृक्ष बताया है। चारों हाथों के आयुधों का विवरण निर्वाणकलिका में उपलब्ध है। उसके अनुसार बायें हाथ में अक्षसूत्र और वृक्ष तथा दायें हाथों में से एक हाथ में पाश और दूसरा हाथ

१. उदय ३३, पन्ना १६२।
२. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ६।
३. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८७।
४. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८८।

वरद मुद्रा में ।[१] यक्षियों की सूचियों में मानवी का नाम दिगम्बर परम्परा में सातवें और दसवें दोनों तीर्थंकरों के साथ मिलता है किन्तु कहीं कहीं उन तीर्थंकरों की यक्षियां क्रमशः काली और चामुण्डा भी कही गयी हैं। श्वेताम्बर परम्परा में ग्यारहवें तीर्थंकर की यक्षी का नाम मानवी बताया गया हैं ।

वैरोटी / वैरोट्या

तेरहवीं विद्यादेवी का नाम दिगम्बरों में वैरोटी और श्वेताम्बरों में वैरोट्या प्रचलित है । उसका वर्ण नेमिचन्द्र ने स्वर्ण के समान बताया है किन्तु अन्य दिगम्बर ग्रन्थकार नील वर्ण बताते हैं । श्वेताम्बर परम्परा के ग्रन्थों में से निर्वाणकलिका में इस विद्यादेवी का वर्ण श्याम किन्तु आचार दिनकर में गौर कहा गया है । दिगम्बरों के अनुसार वैरोटी का वाहन सिंह है । आचार दिनकर कार भी वैरोट्या का वाहन सिंह बताते है किन्तु निर्वाणकलिका के अनुसार वह अजगरवाहना है ।[१] वैरोटी और वैरोट्या दोनों ही रूप में यह विद्या देवी चतुर्भुजा है । वसुनन्दि ने इसे सर्पहस्ता कहा है, अन्य आयुधों का उल्लेख नहीं किया । नेमिचन्द्र ने भी सर्प का ही उल्लेख किया है ।[२] निर्वाण कलिका के अनुसार दायें हाथो में खड्ग और सर्प तथा बायें हाथों में खेटक और सर्प होते है ।[३] आचार दिनकर के विवरण से प्रतीत होता हैं कि देवी के उपरले दोनों हाथों में खड्ग और ढाल तथा निचले हाथों में से एक हाथ में सर्प और दूसरा हाथ वरद मुद्रा में होता है ।[४] वैरोटी यक्षी का नाम दिगम्बर परम्परा में तेरहवें तीर्थंकर के साथ और वैरोट्या का नाम श्वेताम्बर परम्परा में उन्नीसवें तीर्थंकर के साथ मिलता है। उन शासन यक्षियों के लक्षण इन विद्यादेवियों से भिन्न प्रकार के बताये गये हैं ।

अच्युता / अच्छुप्ता

चौदहवीं विद्यादेवी का नाम दिगम्बर परम्परामें अच्युता और श्वेताम्बर परम्परामें अच्छुप्ता मिलता है । वर्ण दोनों का ही स्वर्ण या विद्युत् के समान बताया गया है । दोनों विग्रहों में यह विद्यादेवी अश्ववाहना और चतुर्भुजा है । खड्ग इस देवी की खास पहचान है ।

१. निर्वाणकलिका, पन्ना ३८ ।

२. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना २८८ ।

३. पन्ना ३८ ।

४. उदय ३३, पन्ना १६३

वसुनन्दि ने अच्युता को वज्रहस्ता कहा है। आशाधर ने उसके दो हाथों को नमस्कार मुद्रा में बताया है। नेमिचन्द्र ने एक आयुध खड्ग कहा है।[1] इस प्रकार दो हाथ नमस्कार मुद्रामे, एक हाथमे खड्ग और चौथे हाथ मे वज्र, यह अच्युता देवी का रूप प्रतीत होता है। निर्वाणकलिका मे देवीके चार आयुध इस प्रकार बताये गये हैं, दाये हाथो मे खड्ग और बाण तथा बाये हाथो मे खेटक और सर्प।[2] आचारदिनकर के अनुसार दाये हाथो मे बाण और खड्ग तथा बाये हाथो मे धनुष और ढाल इस प्रकार चार आयुध होते हैं।

श्वेताम्बर परम्परामे छठे तीर्थकर की यक्षी का भी नाम अच्युता है। प्रवचनसारोद्धार मे वही नाम सत्रहवे तीर्थंकर की यक्षी का बताया गया है।

मानसी

पद्रहवी विद्यादेवी मानसी है। उसका वर्ण आशाधर और नेमिचन्द्र ने लाल, वसुनन्दि ने रत्नप्रभ, आचारदिनकर ने जाम्बूनदप्रभ और निर्वाणकलिका ने धवल बताया है। दिगम्बरो के अनुसार मानसीका वाहन सर्प है किन्तु आचारदिनकर मे वह हसवाहना बतायी गयी है।[3] निर्वाणकलिका के विवरण के अनुसार[4] मानसी का दाये ओर का एक हाथ वरद मुद्रा मे और उसके दूसरे हाथ मे वज्र होता है। देवीके बाये हाथो मे अक्षवलय और अशनि होने का उल्लेख मिलता है। दिगम्बर परम्परा के वसुनन्दि और नेमिचन्द्र ने इस विद्या-देवी को नमस्कार मुद्रा युक्त तो बताया है[5] किन्तु अन्य दो हाथो के आयुधो की सूचना नही दी है। दिगम्बर परम्परामे पद्रहवे तीर्थकर की यक्षी का नाम भी मानसी है।

महामानसी

सोलहवी विद्यादेवी महामानसी को दिगम्बर परम्परा के ग्रन्थ रक्तवर्ण और श्वेताम्बर परम्पराके ग्रन्थ धवलवर्ण बताते हैं। दिगम्बरो के अनुसार महामानसी हसवाहना है। श्वेताम्बर परम्पराके आचारदिनकर मे इसे मकर-वाहना[6] और निर्वाणकलिका मे सिहवाहना कहा गया है।[7] यह विद्यादेवी चतुर्भुजा

१. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८८।
२. निर्वाणकलिका, पन्ना ३८।
३ उदय ३३, पन्ना १६३।
४. पन्ना ३८।
५. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ६; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८९।
६. उदय ३३, पन्ना १६३
७. पन्ना ३८

है। दिगम्बर परम्परा के वसुनन्दि ने इसे प्रणाममुद्रायुक्त कहा है किंतु आशाधर और नेमिचन्द्र[1] ने अक्षमाला, वरद, माला और अंकुश ये चार आयुध बताये हैं। आचारदिनकरकार ने खड्ग और वरद इन दो आयुधों का उल्लेख किया है। निर्वाणकलिका ने दायें हाथों में से एक को वरद मुद्रा में स्थित और दूसरे में तलवार तथा बायें हाथों में कमण्डलु और ढाल, इस प्रकार चार आयुध बताये हैं।[2] दिगम्बर परम्परा में सोलहवें तीर्थंकर की यक्षी का नाम भी महामानसी है।

१. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ २८९।
२. निर्वाणकलिका, पन्ना ३८।

सप्तम अध्याय

शासनदेवता

चौबीस यक्षों और उतनी ही यक्षियों की गणना शासन देवताओं के समूह में की गयी है। ये यक्ष-यक्षी तीर्थंकरों के रक्षक कहे गये हैं। प्रत्येक तीर्थंकर से एक यक्ष और एक यक्षी संबद्ध है। तीर्थंकर प्रतिमा के दायें ओर यक्ष की और बायें ओर यक्षी की प्रतिमा बनाये जाने का विधान है।[1] पश्चात् काल में स्वतंत्र रूप से भी यक्ष-यक्षियों की प्रतिमाएं बनाई जाने लगी थीं। यद्यपि तांत्रिक युग के प्रभाव से विवश होकर जैनों को इन देवों की कल्पना करनी पड़ी थी किन्तु इन्हें जैन परंपरा में सेवक या रक्षक का ही दरजा मिला, न कि उपास्य देव का। आशाधर पंडित ने सागारधर्मामृत में लिखा है कि आपदाओं से आकुलित होकर भी दार्शनिक श्रावक उनकी निवृत्ति के लिये शासन देवताओं को नहीं भजता, पाक्षिक श्रावक ऐसा किया करते हैं। सोमदेव सूरि ने स्पष्ट किया है कि तीनों लोकों के द्रष्टा जिनेन्द्रदेव और व्यन्तरादिक देवताओं को जो पूजाविधान में समान रूप से देखता है, वह नरक में जाता हैं।[2] उन्होंने स्वीकार किया है कि परमागम में, शासन की रक्षा के लिये शासन देवताओं की कल्पना की गयी है।

यक्ष यक्षियों की प्रतिमाएं सर्वांगसुन्दर, सभी प्रकार के अलंकारों से भूषित और अपने अपने वाहनों तथा आयुधों से युक्त बनाने का विधान है।[3] वे करण्ड मुकुट और पत्रकुण्डल धारण किये प्रायः ललितासन में बनायी जाती हैं।

चतुर्विंशति यक्ष

शासन-यक्षों का सूचियां तिलोयपण्णत्ती, प्रवचनसारोद्धार, अभिधान-चिन्तामणि, प्रतिष्ठासारसंग्रह, प्रतिष्ठासारोद्धार, प्रतिष्ठातिलक, निर्वाणकलिका, आचारदिनकर आदि आदि जैन ग्रन्थों में तथा अपराजितपृच्छा और रूपमण्डन जैसे अन्य वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में मिलती हैं। तिलोयपण्णत्ती, प्रतिष्ठासारसंग्रह, अभिधान चिन्तामणि और अपराजितपृच्छा में वर्णित सूचियां यहां दी जा रही है।

१. वसुनान्द, ५/१२

२. उपासकाध्ययन, ध्यान प्रकरण, श्लोक ६६७–६९९।

३. वसुनन्दि, ४/७१

मांक	तिलोयप०	प्रतिष्ठासारसं०	अभि०चि०	अप०पृ०	तीर्थंकर
१	गोवदन	गोमुख	गोमुख	गोमुख	ऋषभ
२	महायक्ष	महायक्ष	महायक्ष	महायक्ष	अजित
३	त्रिमुख	त्रिमुख	त्रिमुख	त्रिमुख	संभव
४	यक्षेश्वर	यक्षेश्वर	यक्षनायक[1]	चतुरानन	अभिनंदन
५	तुबर	तुवर[2]	तुम्बरु	तुम्बरु	सुमति
६	मातंग	पुष्प	सुमुख[3]	कुसुम	पद्मप्रभ
७	विजय	मातंग	मातंग	मातग	सुपार्श्व
८	अजित	श्याम	विजय	विजय	चन्द्रप्रभ
९	ब्रह्म	अजित	अजित	जय	पुष्पदन्त
१०	ब्रह्मेश्वर	ब्रह्म[4]	ब्रह्म	ब्रह्मा	शीतल
११	कुमार	ईश्वर	यक्षेश्वर[5]	किनरेश	श्रेयांस
१२	षण्मुख	कुमार	कुमार	कुमार	वासुपूज्य
१३	पाताल	चतुर्मुख[6]	षण्मुख	षण्मुख	विमल
१४	किनर	पाताल	पाताल	पाताल	अनंत
१५	किंपुरुष	किनर	किनर	किनर	धर्म
१६	गरुड	गरुड	गरुड	गरुड	शान्ति
१७	गंधर्व	गंधर्व[7]	गंधर्व[8]	गधर्व	कुन्थ

१ त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित और अमरकाव्य म यक्षेश्वर तथा प्रवचनसारोद्धार और निर्वाणकलिका में ईश्वर नाम कहा है।

२. नेमिचन्द्र ने तुंबरु लिखा है।

३ हेमचन्द्र के ही त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र मे तथा अन्य सभी श्वेताम्बर ग्रन्थो मे कुसुम नाम मिलता है।

४ आशाधर ने ब्रह्मा कहा है। आचार दिनकर मे भी ब्रह्मा नाम है।

५. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र मे ईश्वर और आचार दिनकर मे यक्षराज नाम मिलता है।

६ नेमिचन्द्र ने प्रतिष्ठातिलक मे षण्मुख नाम बताया है।

७. नेमिचन्द्र ने गंधर्वयक्षेश्वर कहा है।

८. आचारदिनकर मे गंधर्वराज और निर्वाणकलिका मे गंधर्वयक्ष।

१८	कुबेर	खेन्द्र	यक्षेन्द्र	यक्षेश	अर
१९	वरुण	कुबेर	कुबेर	कुबेर	मल्लि
२०	भृकुटि	वरुण	वरुण	वरुण	मुनिमुव्रत
२१	गोमेध	भृकुटि	भृकुटि	भृकुटि	नमि
२२	पार्श्व	गोमेद[1]	गोमेध	गोमेध	नेमि
२३	मातंग	धरण	पार्श्व[2]	पार्श्व	पार्श्व
२४	गुह्यक	मातंग	मातंग	मातंग	महावीर

तिलोयपण्णत्ती और प्रतिष्ठासारसंग्रह की सूचिया दिगम्बरों द्वारा मान्य हैं। अभिधानचिन्तामणि की सूची श्वेताम्बर परम्परा की सूची है। अपराजित-पृच्छा ने चतुरानन और जय जैसे नये नाम जोड़ दिये है। तिलोयपण्णती की सूची मे क्रमांक ५ के पश्चात् एक नाम छूट जाने से क्रमभेद हो गया है और उसके कारण मातंग यक्ष चौबीसवें के बजाय तेईसवे स्थान पर आ गया है। चौबीस की सूची पूरी करने के लिये तिलोयपण्णत्ती मे गुह्यक को अंतिम यक्ष कल्पित किया गया। गुह्यक के नाम के पश्चात् इदि एदे जक्खा चउवीस उसभपहुदीण का उल्लेख होने से गुह्यक एक नाम ही प्रतीत होता है न कि यक्ष का पर्यायवाची। दिगम्बरो और श्वेताम्बरो की मान्यता मे यक्षों के नामो के संबंध मे जो भेद है, वह संक्षेप मे निम्न प्रकार है :—

चौथे तीर्थंकर के यक्ष का नाम तिलोयपण्णत्ती में यक्षेश्वर किन्तु प्रवचन-सारोद्धार मे ईश्वर बताया गया है। अपराजितपृच्छा मे दिये गये चतुरानन नामका आधार अज्ञात है। छठे यक्ष का नाम दिगम्बर परम्परा मे पुष्प और श्वेताम्बर परम्परा मे कुसुम प्रसिद्ध है। अभिधानचिन्तामणि मे सुमुख नाम होने पर भी उसके रचयिता आचार्य हेमचन्द्र ने त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र मे कुसुम नाम बताया है। आठवे यक्ष का नाम दिगम्बरो मे श्याम और श्वेताम्बरों मे विजय प्रचलित है। ग्यारहवें यक्ष को दिगम्बर लोग ईश्वर किन्तु श्वेताम्बर यक्षेश्वर कहते है। अठारहवे यक्ष का नाम दिगम्बर ग्रन्थों मे खेन्द्र पर श्वेताम्बर ग्रन्थों में यक्षेन्द्र मिलता है। गोमेद नाम दिगम्बरों मे अधिक प्रचलित है

१. नामचन्द्र ने गोमेध नाम दिया है। प्रतिष्ठासारसंग्रह मे चूक से नाम रह गया है किन्तु आशाधर के प्रतिष्ठासारोद्धार मे गोमेद नाम का उल्लेख है।

२. प्रवचनसारोद्धार में वामन नाम मिलता है।

किन्तु श्वेताम्बर ग्रन्थो मे सर्वत्र गोमेध नाम ही मिलता है। तेईसवे तीर्थंकर पार्श्वनाथ के यक्ष का नाम दिगम्बर परम्परा मे धरण या धरणेन्द्र है किन्तु श्वेताम्बर परम्परा मे पार्श्व। श्वेताम्बर परम्परा के प्रवचनसारोद्धार मे उसे वामन कहा गया है। उपर्युक्त चतुर्विंशति यक्षो के आसन, वाहन, आयुध आदि का प्रतिमाशास्त्रीय विवरण दोनो परम्पराओ के ग्रन्थों के अनुसार नीचे दिया जा रहा है।

गोमुख

प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ के शासन यक्ष गोमुख का वर्ण स्वर्ण जैसा पीत है[1]। दिगम्बर परम्परा म इस यक्ष को वृषवाहन और श्वेताम्बर परम्परा मे गजवाहन माना गया है। आचारदिनकर मे इसे वृषवाहन के साथ द्विरदगोयुक्त और अपराजितपृच्छा म वृषवाहन कहा गया है। दिगम्बर परम्परा मे गोमुख को यथानाम तथास्वरूप अर्थात् वृषमुख या गोवक्त्रक बताया जाता है। दिगम्बर परम्परा के अनुसार इसके मस्तक पर धर्मचक्र होता है।[2] रूपमण्डन मे यह यक्ष गजानन है[3] पर अपराजितपृच्छाकार वृषमुख बताते है।[4]

यक्ष गोमुख चतुर्भुज है। श्वेताम्बरो के अनुसार उसके दाये हाथो मे से एक वरद मुद्रा मे होता है और दूसरा अक्षमालायुक्त। बाये हाथो के आयुध मातुलिंग और पाश होते है।[5] अपराजितपृच्छा और रूपमण्डन म भी यही आयुध बताये गये है किन्तु वहा दाये और बाये हाथो का अलग अलग उल्लेख नही किया गया है। वसुनन्दि ने अलग अलग हाथो के आयुधो का उल्लेख न करते हुये परशु, बीजपूर, अक्षसूत्र और वरद, ये चार आयुध बताये है।[6] आशाधर[7] और नेमिचन्द्र[8] ने उपरले बाये हाथ मे परशु, उपरले दाये हाथ म अक्षसूत्र,

---

१. अपराजितपृच्छा म स्वर्णवर्ण बताया है, वह भूल है।
२. आशाधर ने वृषचक्रशीर्षम् और नेमिचन्द्र ने मूर्धनिधृतधर्मचक्रम् कहा है। जान पड़ता है कि गोमुख को धर्म (वृष) का रूप दिया गया है जो वृषमुख हुआ करता है।
३. ६/१७
४. २२१/४३.
५. आचारदिनकर, निर्वाणकलिका, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र आदि मे।
६. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/१३-१४.
७, प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१२९
८. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३१।

निचले बायें हाथमें बीजपूर फल और निचले दायें हाथको वरदमुद्रा में स्थित बताया है।

महायक्ष

द्वितीय तीर्थंकर अजितनाथ के महायक्ष नामक यक्ष का वर्ण दिगम्बर परम्परा मे सोने जैसा पीत पर श्वेताम्बर परम्परा मे श्याम बताया गया है। दोनों परम्पराएं इस यक्ष को चतुर्मुख, अष्टभुज और गजवाहन मानती हैं, केवल आयुधों के विषय मे मतभेद है। वसुनन्दि ने आयुधों का नामोल्लेख नहीं किया है। नेमिचन्द्र ने चक्र, त्रिशूल, कमल, अंकुश, खड्ग, दण्ड, परशु और प्रदान (वरद) ये आयुध बताये हैं।[1] आशाधर ने चक्र, त्रिशूल, कमल और अंकुश को बायें हाथों के आयुध तथा खड्ग, दण्ड, परशु और वरद इन्हें दायें हाथों का आयुध कहा है।[2] श्वेताम्बर परम्परा के आचार दिनकर, निर्वाणकलिका आदि ने बायें हाथों में अभय, मातुलिंग, अंकुश और शक्ति तथा दायें हाथों में मुद्गर, वरद, पाश और अक्षसूत्र इन आयुधों का होना बतलाया है।[3] अपराजितपृच्छा में श्वेताम्बर परम्परा का अनुसरण किया है और तदनुसार आठों आयुध गिनाये हैं किन्तु दायें-बायें हाथों के आयुध अलग अलग नहीं कहे।[4]

त्रिमुख

तृतीय तीर्थंकर संभवनाथ का त्रिमुख नामक यक्ष यथानाम तथारूप अर्थात् तीन मुख वाला है। उसके प्रत्येक मुख मे तीन आंखे होने के कारण आचार दिनकर में उसे नवाक्ष भी कहा गया हैं। त्रिमुख का वर्ण श्याम, वाहन मयूर और भुजाएं छह है। दिगम्बर परम्परा में, इस यक्ष के बायें हाथों मे चक्र, तलवार और अंकुश तथा दायें हाथों में दण्ड, त्रिशूल और सितकर्तिका ये आयुध बताये गये है।[5] श्वेताम्बर परम्परा में, बायें हाथों के आयुध मातुलिंग, नाग और अक्षसूत्र तथा दायें हाथों के आयुध नकुल, गदा और अभय है।[6] त्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित्र में बायें हाथों के आयुधों में नाग के स्थान पर दाम (माला) का

१. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३१३।
२, प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३।
३. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४; निर्वाणकलिका, पन्ना ३४।
४ अपराजितपृच्छा, २२१/४४.।
५. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३१; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३२
६. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४; निर्वाणकलिका, पन्ना ३४।

उल्लेख मिलता है। अपराजितपृच्छा (२२१/४५) मे परशु, अक्ष, गदा, चक्र, शंख और वरद, इन आयुधो का विधान है किन्तु अपराजितपृच्छा का आधार कौन सी परम्परा है, यह समझ मे नही आता।

यक्षेश्वर

चतुर्थ तीर्थंकर अभिनन्दननाथ के यक्षका नाम यक्षेश्वर है। प्रवचनसारोद्धार और निर्वाणकलिकामे उसे मात्र ईश्वर कहा गया है। अपराजितपृच्छा मे चतुरानन नाम बताया गया है पर उसकी किसी अन्य ग्रन्थ से पुष्टि नही होती। यक्षेश्वर का वर्ण श्याम, वाहन गज[1] और भुजाएँ चार है। दिगम्बर परम्परा मे इस यक्षके दाये हाथो मे बाण और तलवार तथा बाये हाथों मे धनुष और ढाल, ये आयुध कहे गये है।[2] श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार वह दायें हाथो मे मातुलिग और अक्षसूत्र तथा बाये हाथो मे अंकुश और नकुल धारण करता है।[3] अपराजितपृच्छा द्वारा नाग, पाश, वज्र और अकुश इन चार आयुधो का विधान किया गया है किन्तु वह न तो श्वेताम्बर मान्यता के अनुसार है और न दिगम्बर मान्यता के।

तुम्बरु

पंचम तीर्थंकर सुमतिनाथ का यक्ष तुम्बरु है। कही कही इसे तुम्बर भी कहा गया है। तिलोयपण्णत्ती ने तम्बरव नाम से इसका उल्लेख किया है। तुम्बरु का वर्ण दिगम्बरो के अनुसार श्याम और श्वेताम्बरो के अनुसार श्वेत है। इसका वाहन गरुड बताया गया है और भुजाएँ चार। दिगम्बर परपरा के ग्रन्थो मे तुम्बरु यक्ष को सर्पयज्ञापवीतधारी कहा है। आयुधविचार मे, दिगम्बर परम्परा इस यक्ष के दोनो उपरले हाथो मे सर्प, नीचे के एक हाथ को वरदमुद्रायुक्त और दूसरे हाथ मे फल (बीजपूर) मानती है[4] जबकि श्वेताम्बर परम्पराके अनुसार इसके दाये हाथो के आयुध वरद और शक्ति तथा बाये

१ अपराजितपृच्छा मे हंसवाहन।

२. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३२; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३२।

३. आचारदिनकर, उदय ३३, पत्ना १७४; निर्वाणकलिका पत्ना ३४।

४ प्रतिष्ठासारसग्रह, ५/२३–२४; प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३३; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३२।

हाथों के आयुध गदा और पाश हैं।[1] प्रवचनसारोद्धार और आचारदिनकर मे[2] पाश के स्थान पर नागपाश का, एवं निर्वाणकलिकामें[3] बायें हाथो के आयुधों में नाग और पाश का अलग अलग उल्लेख किया गया है। अपराजितपृच्छाने आयुधविचार मे दिगम्बर परम्परा का अनुसरण किया है।

पुष्प। कुसुम

छठे तीर्थंकर पद्मप्रभ के यक्ष का नाम दिगम्बर लोग पुष्प बताते है और श्वेताम्बर लोग कुसुम। अभिधानचिन्तामणि में इसे सुमुख कहा है परन्तु त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरितमें कुसुम नाम से ही वर्णन है। वर्ण विचार मे दिग-म्बर ग्रन्थों में श्याम और श्वेताम्बर ग्रन्थोंमें नीलवर्ण होने का उल्लेख है। इस यक्षका वाहन मृग है।[4] वसुनन्दि और अपराजितपृच्छाकार ने इसे द्विभुज कहा है किन्तु दिगम्बर परम्पराके ही आशाधर और नेमिचन्द्र ने श्वेताम्बरों के समान इस यक्ष को चतुर्भुज माना है। वसुनन्दि ने आयुधों का उल्लेख नही किया। अपराजितपृच्छा में गदा और अक्षसूत्र ये दो आयुध कहे गये हैं। आशाधर और नेमिचन्द्र ने दायें हाथों के आयुध कुन्त और वरद तथा बायें हाथो के आयुध खेट और अभय बताये है।[5] श्वेताम्बर परम्परामें फल और अभय दायें हाथो के तथा नकुल और अक्षसूत्र बायें हाथों के आयुध है।[6]

मातंग

सप्तम तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ के यक्ष मातंग को दिगम्बर कृष्ण वर्ण का और श्वेताम्बर नील वर्ण का बताते है। वसुनन्दि ने इसे वक्रतुण्ड तथा आशा-धर और नेमिचन्द्र ने कुटिलानन या कुटिलाननोग्र कहा है। अर्थात् इस यक्ष का मुख वराह जैसा होता है। दिगम्बर इस यक्षको सिंहवाहन और श्वेताम्बर गजवाहन कहते है। अपराजितपृच्छामें मेषवाहन बताया गया है। दिगम्बरों

१. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित के अनुसार।
२. उदय ३३, पन्ना १७४।
३. पन्ना ३५।
४. आचारदिनकर की मुद्रित प्रति मे तुरंग है किन्तु वह संभवतः कुरंग (मृग) के स्थान पर मुद्रण की भूल है।
५. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३४; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३३।
६. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४; निर्वाणकलिका, पन्ना ३५।

के अनुसार मातंग यक्ष द्विभुज है। अपराजितपृच्छा ने भी इसे द्विभुज कहा है पर श्वेताम्बर चतुर्भुज कहते हैं। दिगम्बरों के अनुसार मातंगके दाये हाथ में शूल और बाये हाथमे दण्ड होता है।[1] श्वेताम्बर ग्रन्थो मे चार आयुध गिनाये गये है। त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित और प्रवचनसारोद्धार मे दाये हाथों के आयुध बिल्व और पाश तथा बायें हाथो के आयुध नकुल और अंकुश कहे गये है। निर्वाणकलिका मे भी इन्ही का उल्लेख है[2] किन्तु आचारदिनकर मे पाश के स्थान पर नागपाश का और नकुल के स्थान पर वज्र का विधान है[3] जो विशिष्ट बात है।

श्याम । विजय

अष्टम तीर्थकर चन्द्रप्रभ के यक्ष का नाम दिगम्बरो मे श्याम और श्वेताम्बरो में विजय प्रचलित है। विजय नामक यक्ष का नाम तिलोयपण्णत्ती मे भी मिलता है। यद्यपि वह यक्ष सप्तम क्रमाक पर है तो भी इतना तो ज्ञात होता ही है कि पूर्व मे विजय यक्ष का नाम दिगम्बरो की सूची मे भी था। श्वेताम्बर बिजय यक्ष का वर्ण श्याम या हरित बताते है। दिगम्बरो का यक्ष भी श्यामवर्ण है। सभव है कि श्यामवर्ण होने के कारण यक्ष का नाम ही वैसा प्रचलित हो गया हो। श्याम यक्ष कपातवाहन होता है पर विजय का वाहन हस है। श्याम चतुर्भुज है पर विजय द्विभुज।[4] दोनो ही भिन्न है।

वसुनन्दि ने श्याम के आयुध फल, अक्षसूत्र, परशु और वरद कहे है।[5] आशाधर और नेमिचन्द्र ने दाये और बाये हाथो के अलग-अलग आयुध बताये हैं। दाये हाथो मे अक्षमाला और वरद तथा बायेह ाथो मे परशु और फल।[6] अपराजितपृच्छा मे परशु, पाश, अभय और वरद, ये आयुध कहे गये है।

१ प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३५; प्रतिष्ठातिलक पृष्ठ ३३३।

२. पन्ना ३५।

३ उदय ३३, पन्ना १७४।

४. प्रवचनसारोद्धार मे चतुर्भुज।

५. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/३०

६. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३६; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३३

प्रवचनसारोद्धार मे दो चक्र और दो मुद्गर। किन्तु अन्य श्वेताम्बर ग्रंथो मे दाये हाथ मे चक्र और बाये हाथ मे मुद्गर होने का उल्लेख मिलता है।[1] पद्मानंद महाकाव्य मे दाये हाथ का आयुध खड्ग बताया गया है।[2]

अजित

नौवे तीर्थंकर पुष्पदन्त या सुविधिनाथ के यक्ष या नाम अजित है। अपराजितपृच्छा मे उसका वर्णन जय नाम से किया गया है। अजित का वर्ण श्वेत, वाहन कूर्म और भुजाएं चार है। दिगम्बरो के अनुसार अजित यक्ष के दाये हाथ अक्षमाला और वरदमुद्रा मे युक्त होते है तथा बाये हाथो मे शक्ति और फल होते है।[3] श्वेताम्बरो के अनुसार अजित के दाये हाथो मे मातुलिंग और अक्षसूत्र तथा बायें हाथो मे नकुल और कुन्त (भाला) होते है। आचार दिनकर ने अक्षसूत्र के स्थान पर परिमलयुक्त मुक्तामाला का उल्लेख किया है।[4] अपराजितपृच्छा के आयुध विचार मे दिगम्बर ग्रंथो का अनुसरण किया गया है पर दाये और बाये हाथो के आयुध अलग नही कहे गये है।

ब्रह्म

दसवे तीर्थंकर शीतलनाथ का यक्ष ब्रह्म श्वेतवर्ण, कमलासन[5] अष्टबाहु और चतुर्मुख है। श्वेताम्बर ग्रंथो मे उसके द्वादशाक्ष होने का उल्लेख है। आशाधर[6] और नेमिचन्द्र[7] ने उसके दाये हाथो के आयुध शर, परशु, खड्ग और वरद तथा बाये हाथो के आयुध धनुष, दण्ड, खेट, और वज्र बताये है। श्वेताम्बर ग्रंथो मे मातुलिंग, अभय, पाश और मुद्गर ये दाये हाथो के तथा गदा, अंकुश, नकुल और अक्षसूत्र ये बाये हाथो के आयुध कहे गये हैं।[8]

१. निर्वाणकलिका, पन्ना ३५; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४; त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र।
२. अभिजिनचरित्र, १७।
३. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३७; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३३।
४, उदय ३३, पन्ना १७४।
५. अपराजितपृच्छा मे हंसवाहन।
६ प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१३८
७, प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३४।
८. निर्वाणकलिका, पन्ना ३५; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४; त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित इत्यादि।

ईश्वर

ग्यारहवें तीर्थंकर श्रेयांसनाथ का यक्ष ईश्वर या यक्षेश्वर है। हेमचन्द्र आचार्य ने अभिधानचिन्तामणि में यक्षेश्वर नाम से और त्रिषष्टिशलाकापुरुष-चरित में ईश्वर नाम से इस यक्ष का उल्लेख किया है। आचार दिनकर ने यक्षराज और अपराजितपृच्छा ने किन्नरेश नाम बताया है।

ईश्वर या यक्षेश्वर का वर्ण श्वेत और वाहन वृष है। वह त्रिनेत्र एवं चतुर्भुज है। दिगम्बर परम्परा का यक्ष दायें हाथों में अक्षसूत्र और फल तथा बायें हाथों में त्रिशूल और दण्ड धारण करता है।[1] श्वेताम्बर परम्परा में यक्ष के दायें हाथों मे मातुलिंग और गदा तथा बायें हाथों मे नकुल और अक्षसूत्र होते हैं।[2] अपराजितपृच्छा में त्रिशूल, अक्षसूत्र, फल और वरद, ये आयुध बताये गये है।

कुमार

बारहवे तीर्थंकर वासुपूज्य का यक्ष कुमार श्वेत वर्ण का है।[3] उसका वाहन हंस है।[4] दिगम्बरों के अनुसार इस यक्ष के तीन मुख और छह भुजाएं होती है किन्तु श्वेताम्बरो ने इसे चतुर्भुज ही कहा है। अपराजितपृच्छा में भी कुमार यक्ष को चतुर्भुज बताया गया है। षड्भुज की योजना में इसके दायें हाथों के आयुध बाण, गदा और वरद तथा बायें हाथों के आयुध धनुष, नकुल और फल होते है।[5] अपराजितपृच्छा में धनुष, बाण, फल और वरद का विधान है पर श्वेताम्बर ग्रंथो मे दाये हाथों के आयुध मातुलिंग और बाण तथा बाये हाथो के आयुध नकुल और धनुष बताये गये है।[6]

षण्मुख /चतुर्मुख

तेरहवे तीर्थंकर विमलनाथ के यक्ष का नाम तिलोयपण्णत्ती मे षण्मुख बताया गया है। श्वेताम्बर परम्परा मे भी उसका नाम षण्मुख मिलता है। दिगम्बर परम्परा के नेमिचन्द्र ने षण्मुख नाम से तथा वसुनन्दि और आशाधर

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३–१३९; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३४
२. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५; निर्वाणकलिका ३५
३. अमरचन्द्र के काव्य मे श्यामवर्ण बताया गया है।
४. अपराजितपृच्छा में शिखिवाहन।
५. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४०; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३४।
६. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५; निर्वाणकलिका पन्ना ३५

ने चतुर्मुख नाम से इसका वर्णन किया है। श्वेताम्बरों ने षण्मुख का वर्ण श्वेत बताया है किन्तु आशाधर चतुर्मुख को हरित वर्ण कहते हैं। यक्ष का वाहन मयूर है और भुजाएं द्वादश।[1] मुखों की योजना में वसुनन्दि और आशाधर ने चतुर्मुख पर नेमिचन्द्र ने षण्मुख बताया है अर्थात् जिस ग्रन्थकार ने यक्ष का जो नाम बताया तदनुसार मुखयों ना भी बतायी। आचारदिनकर मे द्वादशाक्ष होने के उल्लेख से वह षण्मुख ज्ञात होता है। वसुनन्दि ने आयुधों का विवरण नहीं दिया। आशाधर और नेमिचन्द्र ऊपरले आठ हाथो में परशु बताते है और शेष चार हाथों मे क्रमश: तलवार, अक्षमाला, खेटक और दण्ड।[2] श्वेताम्बर परम्परा मे दाये हाथो के आयुध फल, चक्र, बाण, खड्ग, पाश और अक्षसूत्र तथा बायें हाथो के आयुध नकुल, चक्र, धनुष, ढाल, अंकुश और अभय बताये गये है।[3] अपराजितपृच्छा मे वज्र, धनुष, बाण, फल और वरद इन पाच आयुधो का नामोल्लेख किया गया है।

पाताल

चौदहवे तीर्थंकर अनन्तनाथ के यक्ष पाताल का वर्ण लाल है।[4] वाहन मकर है और तीन मुख होते है। दिगम्बर आम्नाय मे इसके मस्तक पर त्रिफण नाग का होना बताया गया है किन्तु आचारदिनकर न षट्वागयुक्त कहा है। पाताल की छह भुजाए है। दिगम्बर परम्परा के अनुसार दाये ओर की तीन भुजाओ मे अकुश, शूल, और कमल तथा बाये ओर की भुजाओ म चाबुक, हल, और फल ये आयुध होते है।[5] अपराजितपृच्छा मे वज्र, अकुश, धनुष, बाण, फल और वरद इस प्रकार छह आयुध बताये है। श्वताम्बर परम्परा के ग्रथों म दाये हाथो के आयुध कमल, खड्ग और पाश तथा बाये हाथों के आयुध नकुल, ढाल और अक्षसूत्र कहे गये है।[6]

१. अपराजितपृच्छा षड्भुज कहती है। आशाधर अष्टपाणि बताते है पर वसुनन्दि ने द्वादशभुज लिखा है।

२ प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४१; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३५

३ त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र। निर्वाणकलिका। आचारदिनकर आदि।

४. अमरचन्द्र के महाकाव्य मे ताम्रवर्ण बताया है।

५ प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४२; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३५।

६ आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १७५; निर्वाणकलिका, पत्रा ३६; त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र आदि।

किन्नर

पंद्रहवें तीर्थंकर धर्मनाथ का यक्ष किन्नर है। उसके शरीर का वर्ण लाल है जिसे वसुनन्दि ने पद्मरागमणि के समान और आशाधर ने प्रवाल जैसा बताया है। श्वेताम्बर ग्रन्थों में भी अरुण वर्ण का उल्लेख है। दिगम्बर परंपरा के अनुसार किन्नर का वाहन मीन है किन्तु श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार वह कूर्म है। किन्नर के मुख तीन[1] और भुजाएं छह हैं। दिगम्बरों के अनुसार उसके दायें हाथों के आयुध मुद्गर, अक्षमाला और वरद तथा बायें हाथों के आयुध चक्र, वज्र और अंकुश है।[2] श्वेताम्बरों ने दायें हाथों मे अभय, बीजपूर और गदा तथा बाये हाथों मे कमल, अक्षमाला और नकुल ये आयुध बताये है।[3] अपराजितपृच्छा के अनुसार यह यक्ष पाश, अंकुश, धनुष, बाण, फल और वरद इस प्रकार छह आयुध धारण करता है।

गरुड़

सोलहवे तीर्थंकर शान्तिनाथ के यक्ष गरुड़ का वर्ण श्याम है। उसका मुख वराह जैसा है। उसका वाहन भी वराह माना गया है किन्तु हेमचन्द्र के अनुसार वह गजवाहन और अपराजितपृच्छाकार के अनुसार शुकवाहन है। दोनों परम्पराओं के अनुसार गरुड़ यक्ष चतुर्भुज है किन्तु दिगम्बर लोग उसके दायें हाथो मे वज्र और चक्र तथा बायें हाथों में कमल और फल ये आयुध बताते है[4] जबकि श्वेताम्बरों के अनुसार गरुड यक्ष के दायें हाथों मे बीजपूर और कमल तथा बाये हाथो मे नकुल और अक्षसूत्र ये चार आयुध होते है।[5] अपराजितपृच्छा मे पाश, अंकुश, फल और वरद इस प्रकार आयुध कहे गये है।

गंधर्व

सत्रहवे तीर्थंकर कुन्थुनाथ का यक्ष गंधर्व है। उसे गंधर्वयक्षेश्वर, गंधर्वराज आदि भी कहा जाता है। गंधर्व का वर्ण श्याम है। वसुनन्दि और आशा-

१. आचारदिनकरकार षण्नयन का भी अन्यत्र मे उल्लेख करते है।

२. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४३; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३५।

३. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, निर्वाणकलिका, आचारदिनकर आदि आदि।

४. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४४; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३६

५. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५; निर्वाणकलिका, पन्ना ३६; त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र आदि आदि।

धर के अनुसार गंधर्व यक्ष पक्षियानसमारूढ है किन्तु श्वेताम्बर ग्रन्थो मे उसका वाहन हंस बताया गया है। अपराजितपृच्छाकार के अनुसार गंधर्व का वाहन शुक है।

यह यक्ष चतुर्भुज है। अपराजितपृच्छा ने इसके आयुध कमल, अंकुश, फल और वरद ये चार कहे हैं। दिगम्बर परंपरा के ग्रन्थो में उपरले दोनो हाथो में नागपाश और नीचे के दोनो हाथों मे धनुष और बाण होने का उल्लेख है।[1] श्वेताम्बरो के अनुसार गंधर्व यक्ष के दायें हाथो मे से एक हाथ वरद मुद्रा मे होता है, दूसरे मे पाश होता है तथा बायें ओर के हाथो मे मातुलिंग और अंकुश ये दो आयुध हुआ करते हैं।[2]

खेन्द्र / यक्षेन्द्र

अठारहवे तीर्थंकर अरनाथ के यक्ष को दिगम्बर परम्परा वाले खेन्द्र कहते है और श्वेताम्बर परम्परा वाले यक्षेन्द्र। उसका वर्ण श्याम और वाहन शंख है। अपराजितपृच्छाकार ने इस यक्ष को खरवाहन बताया है जो ठीक जान पडता है। इस यक्ष के छह मुख, अठारह आखे और बारह भुजाए है। अपराजितपृच्छा मे केवल षड्भुज कहा गया है। दिगम्बर ग्रन्थो मे इस यक्ष के दाये हाथो के आयुध बाण, कमल, फल, माला, अक्षसूत्र और अभय तथा बाये हाथो के आयुध धनुष, वज्र, पाश, मुद्गर, अंकुश और वरद कहे गये है।[3] श्वेताम्बर ग्रन्थो में दायें हाथो के आयुध मातुलिंग, बाण, खड्ग, मुद्गर, पाश और अभय बताये गये है। बाये हाथो के आयुधो के संबंध मे उनमे किञ्चत् मतवैषम्य लक्षित होता है। आचारदिनकर और निर्वाणकलिका के अनुसार वे आयुध नकुल, धनुष, ढाल, शूल, अंकुश और अक्षसूत्र है।[4] त्रिषष्टि शलाकापुरुषचरित्र मे भी वही आयुध बताये गये है किन्तु अमरचंद्र के महाकाव्य मे नकुल नही, चक्र कहा गया है।[5]

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४५; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३६

२ त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र आदि।

३. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४६; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३६।

४. आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १७५; निर्वाणकलिका, पत्रा ३६।

५ अरजिनचरित्र, १७–१८।

कुबेर

उन्नीसवें तीर्थंकर मल्लिनाथ का यक्ष कुबेर है। प्रवचनसारोद्धार में इसे कूबर कहा गया है। दिगम्बरों के अनुसार कुबेर इन्द्रधनुष के समान चित्रवर्ण का है। हेमचन्द्र ने भी इसका वर्ण इन्द्रधनुष सा ही कहा है किन्तु आचारदिनकर ने इस यक्ष का वर्ण नील बताया है। कुबेर का वाहन गज है।[1] इसकी भुजाएं आठ और मुख चार हैं। निर्वाणकलिका ने इसके मुखों का आकार भी गरुड जैसा बताया है। आशाधार और नेमिचन्द्र के अनुसार इस यक्षके दाये हाथो मे खड्ग, बाण, पाश और वरद ये आयुध तथा बाये हाथो मे ढाल, धनुष, दण्ड और कमल होते है।[2] श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार दाये हाथो म वरद, परशु, शूल और अभय तथा बाये हाथो म मुद्गर, अक्षसूत्र, बीजपूर और शक्ति है।[3] निर्वाणकलिका मे दाये आयुधो म परशु के स्थान पर पाश कहा गया है।[4]

वरुण

बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ का यक्ष वरुण श्वेतवर्ण एव वृषभवाहन है। आशाधर ने इस यक्षको महाकाय कहा है। निर्वाणकलिका, प्रतिष्ठासारोद्धार और प्रतिष्ठातिलक के अनुसार वरुण जटाजूटधारी है। श्वेताम्बरो के अनुसार वरुण के चार मुख और दिगम्बरो के अनुसार आठ मुख होते है। क्योंकि इस यक्ष को त्रिनेत्र बताया गया है इसलिए आचारदिनकर ने और स्पष्ट करने के लिए द्वादशलोचन भी कहा है। दिगम्बर परम्परा म वरुण के चार हाथ माने गये है पर श्वेताम्बरो के अनुसार यह यक्ष अष्टभुज है। आशाधर और नेमिचन्द्र ने इसकी दायी भुजाओ के आयुध खेट और खड्ग कहे है।[5] आचार दिनकर[6] और निर्वाणकलिका[7] के अनुसार दाये हाथो मे गदा, बाण, शक्ति और बीजपूर तथा बाये हाथो म धनुष, कमल, परशु और नकुल होते है। त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र और अमरकाव्य म पद्म के स्थान पर अक्षमाला का होना बताया

१ अपराजितपृच्छा मे सिह।
२. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३-१४७, प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३७।
३. आचारदिनकर, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित आदि।
४. निर्वाणकलिका, पन्ना ३६।
५. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३।१४८, प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३७।
६. उदय ३३, पन्ना १७५।
७. पन्ना ३६।

गया है। अपराजितपच्छा म पाश, अंकुश, धनु, बाण, सर्प और वज्र केवल ये ही आयुध गिनाये गये है, जिससे प्रतीत होता है कि उस ग्रन्थ के अनुसार यक्ष षडभुज है।

भृकुटि

इक्कीसवे तीर्थंकर नमिनाथ का यक्ष भृकुटि है जो कही भृकुटिराज, कही भृकुट और कहीं भृकुटी भी कहा गया है। इसका वर्ण सोने के समान है। यक्ष का वाहन वृषभ है और मुख चार। श्वेताम्बरो द्वारा इस त्रिनयन माने जाने के कारण आचार दिनकर ने द्वादशाक्ष कहा है। दिगम्बर परम्परा के आशाधर और नेमिचन्द्र तथा श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार भृकुटि की आठ भुजाएं होती है किन्तु वसुनन्दि उसे चतर्भुज कहते है। वसुनन्दि न केवल तीन ही आयुधो का उल्लेख किया है, खेट, खड्ग और फल[1] किन्तु आशाधर और नेमिचन्द्र न अँकुश, कमल, चक्र, वरद, खेट, असि, धनुष और बाण ये आठ आयुध गिनाये है।[2] अपराजितपृच्छा मे शूल, शक्ति, वज्र, खेट और डमरू इनका विधान है। श्वेताम्बरो के अनुसार इस यक्ष के दाये हाथो मे मातुलिंग, शक्ति, मुद्गर और अभय तथा बाये हाथो म नकुल, परशु, वज्र और अक्षसूत्र होते है।[3] अमरकाव्य म परशु के स्थान पर पाश बताया गया है।

गोमेध

बाईसवे तीर्थंकर नेमिनाथ के यक्ष का नाम गोमेध है जिसे कही कही गोमेद भी कहा गया है। गोमेध का वर्ण श्याम है। श्वेताम्बरो ने इसे नृवाहन माना है पर दिगम्बर, नृवाहन के साथ पुष्पयान भी बताते है। नेमिचन्द्र ने केवल पुष्पकवाहन, आशाधर ने नृवाहन और पुष्पयान तथा वसुनन्दि ने पुष्पयान के साथ मकरवाहन भी कहा है। गोमेध त्रिमुख है। उसकी छह भुजाएं है। वसुनन्दि इसके षड्भुज होने का उल्लेख करते है किन्तु उन्होने अक्षसूत्र और यष्टि केवल इन दो आयुधो का ही नामोल्लेख किया है। आशाधर और नेमिचन्द्र ने दाये हाथो मे फल, वज्र और वरद तथा बाये हाथो मे द्रुघण (मुदगर), कुठार और दण्ड बताये है।[4]

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/५६
२. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१४६; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३७,
३ आचारदिनकर और निर्वाणकलिका
४. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१५० और प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३७

श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार यक्ष के दाय हाथों मे मातुलिंग, परशु और चक्र तथा बांये हाथों में नकुल, शूल और शक्ति ये आयुध हैं।[1] जैन ग्रन्थों में सर्वाह्न या सर्वानुभूति नामक एक यक्ष का उल्लेख बहुत मिलता है। वह गोमेध से अभिन्न हो सकता है। इस संबंध में आगे विचार किया जावेगा।

धरण/पार्श्व

तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के यक्ष को दिगम्बर परम्परा वाले धरण या धरणेन्द्र और श्वेताम्बर परम्परा वाले पार्श्व यक्ष कहते है। प्रवचन–सारोद्धार में इस यक्ष का नाम वामन बताया गया है। भैरवपद्मावतीकल्प (जो दिगम्बरों में भी मान्य है) मे पार्श्वनाथ के यक्ष को पार्श्व यक्ष कहा गया है।[2] उस ग्रन्थ मे इस यक्ष को न्यग्रोधमूलवार्मा, श्यामांग और त्रिनयन बताया गया है। तिलोयपण्णत्ती में भी पार्श्व नामक यक्ष का उल्लेख है।[3]

धरण और पार्श्व दोनों ही रूपमें इस यक्ष का वर्ण श्याम, वाहन कूर्म और भुजाएं चार है।[4] श्वेताम्बर परम्परा में पार्श्वयक्ष का गजमुख माना गया है। रूपमण्डन में भी उसी प्रकार उल्लेख है। अपराजित पृच्छा में वह सर्परूप है जो दिगम्बरोंके अनुकूल है। दिगम्बरों के अनुसार धरण के मौलि में वासुकि (सर्प) का चिह्न होता है। आचारदिनकर तथा अन्य श्वेताम्बर ग्रन्थों में भी पार्श्वयक्ष के मस्तक पर सर्पफण का छत्र बनाया है। अपराजितपृच्छा मे पार्श्व यक्ष के आयुध धनुष, बाण, भृण्डि, मुद्गर, फल और वरद कहे गये हैं दिगम्बरो के अनुसार धरण के उपरले दानों हाथो में वासुकि (सर्प), निचला दाया हाथ वरदमुद्रा में और निचले बायें हाथ मे नागपाश होता है।[5] श्वेताम्बरों के अनुसार पार्श्व यक्ष के बायें हाथों मे नकुल और सर्प होते हैं किन्तु दायें हाथों के आयुधों के संबंध में उनमे किञ्चित् मतभेद है। हेमचन्द्र और निर्वाणकलिकाकार दायें हाथों के

१. निर्वाणकलिका आदि।
२. भैरवपद्मावतीकल्प, ३/३८
३. तिलोयपण्णत्ती, ४,९३५
४. अपराजितपृच्छा मे छह किन्तु रूपमण्डन में चार।
५. प्रतिष्ठासारोद्धार, ६/१५१, प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ, ३३८।

आयुध बीजपूर और सर्प बताते है[1] जबकि आचारदिनकर और अमरकाव्य में सर्प के स्थान पर गदा का उल्लेख है।[2]

मातंग

अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामी का यक्ष मातंग है। दिगम्बर उसे मुद्ग (मूग) वर्ण और श्वेताम्बर श्याम वर्ण कहते है। उसका वाहन गज और भुजाएं दो है। मुख एक है पर दिगम्बरों के अनुसार यह यक्ष अपने मस्तक पर धर्म चक्र धारण किये होता है। आयुधविचार मे, वसुनन्दि ने वरद और मातुलिंग ये दो आयुध बताये है।[3] आशाधर और नेमिचन्द्र ने उनमे से दायें हाथ का आयुध वरद और बायें का फल (मातुलिंग) कहा है।[4] अपराजितपृच्छा ने भी यही विधान किया है। श्वेताम्बर परम्परा मे दायें हाथ मे नकुल और बाये हाथ मे बीजपूर माना गया है[5] जिसका अनुसरण रूपमण्डन ने किया है।

चतुर्विंशति यक्षियां

चौबीस शासनदेवियों या यक्षियों की सूचिया तिलोयपण्णत्ती, प्रवचन-सारोद्धार, अभिधानचिन्तामणि, प्रतिष्ठासारसंग्रह, प्रतिष्ठासारोद्धार, प्रतिष्ठा-तिलक, निर्वाणकलिका, आदि आदि जैन ग्रन्थों तथा अन्य वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में मिलती हैं। यहां पूर्व की भाति तिलोयपण्णत्ती, प्रतिष्ठासारसंग्रह, अभिधान चिन्तामणि और अपराजितपृच्छा मे वर्णित सूचिया उद्धृत की जा रही है।—

क्रमांक	तिलोयप०	प्रतिष्ठासारसंग्रह	अभि० चि०	अप० पृ०	तीर्थंकर
१.	चक्रेश्वरी	चक्रेश्वरी[6]	चक्रेश्वरी[7]	चक्रेश्वरी	ऋषभ
२.	रोहिणी	रोहिणी	अजितबला[8]	रोहिणी	अजित

१. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र। निर्वाणकलिका, पन्ना ३७।
२. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६। अमरकाव्य, ६२-६३
३. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५, ६५-६६
४. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३, १५२; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३३८।
५. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६; निर्वाणकलिका, पन्ना ३७; अमरकाव्य, २४७
६. अपर नाम चक्रा भी बताया है।
७. प्रवचनसारोद्धार में चक्रेश्वरी किन्तु त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, निर्वाणकलिका आदि में अप्रतिचक्रा नाम मिलता है।
८. प्रवचनसारोद्धार और निर्वाणकलिका में अजिता। वसुनन्दि ने भी अपर नाम अजिता बताया है।

क्र०	तिलोय०	प्रतिष्ठासार०	अभि०चि०	अपराजित०	तीर्थंकर
३.	प्रज्ञप्ति	प्रज्ञप्ति[1]	दुरितारि	प्रज्ञा	संभव
४.	वज्रशृंखला	वज्रशृंखला[2]	कालिका[3]	वज्रशृंखला	अभिनन्दन
५.	वज्राकुशा	पुरुषदत्ता[4]	महाकाली	नरदत्ता	सुमति
६.	अप्रतिचक्रेश्वरी	मनोवेगा	श्यामा[5]	मनोवेगा	पद्मप्रभ
७.	पुरुषदत्ता	काली[6]	शान्ता[7]	कालिका	सुपार्श्व
८.	मनवेगा	ज्वालिनी[8]	भृकुटि	ज्वालामालिका	चन्द्रप्रभ
९.	काली	महाकाली	सुतारका[9]	महाकाली	पुष्पदन्त
१०.	ज्वालामालिनी	मानवी	अशोका	मानवी	शीतल
११.	महाकाली	गौरी[10]	मानवी[11]	गौरी	श्रेयांस
१२.	गौरी	गाधारी	चण्डा[12]	गांधारिका	वासुपूज्य
१३.	गाधारी	वैरोटी[13]	विदिता[14]	विराटा	विमल
१४.	वैरोटी	अनंतमती	अंकुशा	तारिका	अनन्त
१५.	अनंतमती	मानसी	कन्दर्पा	अनंतागति	धर्म

१. अपर नाम नम्रा बताया है।
२. नेमिचन्द्र ने पविशृंखला। वसुनन्दि ने अपर नाम दुरितारि कहा है।
३. आचारदिनकर मे काली नाम मिलता है।
४. अपर नाम संसारी कहा गया है।
५. त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित, निर्वाणकलिका, आचारदिनकर, प्रवचन-सारोद्धार आदि ग्रन्थो मे अच्युता नाम है।
६. अपर नाम मानवी।
७. निर्वाणकलिका, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र आदि मे शान्ति नाम का उल्लेख है।
८. ज्वालामालिनी नाम भी है।
९. अन्य ग्रन्थों मे सुतारा नाम भी मिलता है।
१०. अपर नाम गोमेधकी।
११. प्रवचनसारोद्धार में श्रीवत्सा।
१२. प्रवचनसारोद्धार में प्रवरा, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र में चन्द्रा, आचारदिनकर और निर्वाणकलिका में प्रचण्डा।
१३. नेमिचन्द्र ने प्रतिष्ठातिलक में वरोटिका नाम कहा है।
१४. प्रवचनसारोद्धार में विजया नाम है।

क्र० तिलोय०	प्रतिष्ठासार०	अभि०चि०	अपराजित०	तीर्थंकर
१६. मानसी	महामानसी	निर्वाणी[1]	मानसी	शान्ति
१७. महामानसी	जयदेवी[2]	बला	महामानसी	कुन्थु
१८. जया	तारावती	धारिणी	जया	अर
१९. विजया	अपराजिता	धरणप्रिया[3]	विजया	मल्लि
२०. अपराजिता	बहुरूपिणी	नरदत्ता[4]	अपराजिता	मुनिसुव्रत
२१. बहुरूपिणी	चामुण्डा[5]	गांधारी	बहुरूपा	नमि
२२. कूष्मांडी	आम्रा[6]	अम्बिका[7]	अम्बिका	नेमि
२३, पद्मा	पद्मावती	पद्मावती	पद्मावती	पार्श्व
२४. सिद्धायिणी	सिद्धायिका[8]	सिद्धायिका[9]	सिद्धायिका	महावीर

उपर्युक्त सूची से प्रतीत होता है कि तिलोयपण्णत्ती की सूची में कोई एक नाम छूट जाने से पश्चात्काल में उसमें नया नाम जोड़ा गया है जिससे सूची में विसंगतता हो गयी। मूल ग्रन्थ में सोलसा अणंतमदी उल्लेख होने पर भी अनंतमती का क्रमांक पन्द्रहवां ही आता है, सोलहवां नहीं। इससे स्पष्ट है कि सूची में भूल है। प्रतिष्ठासारसंग्रह में वसुनन्दि ने इन शासनदेवताओं में से प्रत्येक के अपर नामों से भी मंत्रपद कहे हैं।

१. आचारदिनकर में निर्वाणा कहा गया है।

२. आशाधर और नेमिचन्द्र ने जया कहा है।

३. प्रवचनसारोद्धार में वैरोटी, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, निर्वाणकलिका आदि में वैरोट्या।

४. आचारदिनकर में अच्छुप्तिका—नृदत्ता।

५. अपर नाम कुसुममालिनी।

६. अपर नाम कूष्माण्डी बताया गया है।

७. प्रवचनसारोद्धार में अम्बा, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित में कूष्माण्डी और निर्वाणकलिका में कूष्माण्डी। शुभचन्द्र ने अम्बा के आम्रकूष्माण्डी, अंबिला, तारा, गौरी और वज्रा नाम भी बताये हैं।

८. अपर नाम सिद्धायिनी मिलता है।

९. प्रवचनसारोद्धार में सिद्धा नाम है।

यक्षियो की सूची के विकास के संबध म हम आगे चर्चा करेंगे। पर यहा इतना उल्लेख कर देना उचित होगा कि संभवत: विद्यादेवियो के नामों को लेकर ही यक्षिया का कल्पना विकसित हुयी। दिगम्बरो की सूची तो स्पष्ट रूपेण विद्यादेवियो से प्रभावित है। उस समय तक चक्रेश्वरी की मान्यता बढ चुकी थी इसलिये उसे यक्षिया मे प्रथम स्थान प्राप्त हो गया और तत्पश्चात् विद्यादेवियो के नाम वालो अन्य यक्षियो को स्थान दिया गया। किस प्रकार विद्यादेवियो को यक्षियो म स्थान मिला, इसका अनुमान नीचे दी गयी तालिका से ... सकता है :–

क्र०	विद्यादेवी का नाम	दिगम्बर आम्नाय म उसी नाम की यक्षा	श्वेताम्बर आम्नाय मे उसी नाम की यक्षो
१	रोहिणी	द्वितीय तीर्थंकर को यक्षी	—
२	प्रज्ञप्ति	तृतीय तीर्थंकर की यक्षी	—
३	वज्रशृंखला	चतुर्थ तीर्थंकर की यक्षी	—
४	वज्रांकुशा	—	चौदहवे तीर्थंकर की यक्षी अंकुशा
५	अप्रतिचक्रा या चक्रेश्वरी (श्वेताम्बर)	प्रथम तीर्थंकर की यक्षी	प्रथम तीर्थंकर का यक्षी
६	पुरुषदत्ता	पचम तीर्थंकर की यक्षी	बीसवे तीर्थंकर का यक्षी
७	काली	सप्तम तीर्थंकर की यक्षा	चतुर्थ तीर्थंकर की यक्षी
८	महाकाली (महापरा)	नौवे तीर्थंकर की यक्षी	पाचवे तीर्थंकर की यक्षी
९	गौरी	ग्यारहवे तीर्थंकर की यक्षी	—
१०	गाधारी	बारहवे तीर्थंकर की यक्षी	—
११	ज्वालामालिनी (ज्वाला)	आठवे तीर्थंकर की यक्षा	—
१२	मानवी	—	ग्यारहवे तीर्थंकर की यक्षी
१३	वैरोटी/वैरोट्या	तेरहवे तीर्थंकर की यक्षी	उन्नीसवे तीर्थंकर की यक्षी
१४	अच्युता	—	छठे तीर्थंकर की यक्षी
१५	मानसी	पंद्रहवें तीर्थंकर की यक्षी	—
१६	महामानसी	सोलहवे तीर्थंकर की यक्षी	—

हम ऊपर देख आये है कि यक्षो के नामों के संबंध मे दिगम्बर और श्वेताम्बर मान्यताओं मे अपेक्षाकृत कम मतभेद है, पर यक्षियों की सूची में

मतभेद अधिक विस्तृत हो गया है। दोनों परम्पराओं की यक्षियों के वर्ण, आसन, वाहन, आयुध आदि के संबंध में अलग अलग विवरण नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

चक्रेश्वरी

प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभनाथ की शासनदेवता चक्रेश्वरी को अप्रतिचक्रा भी कहा जाता है। पद्मानंद महाकाव्य (१/८३–८४) में उल्लेख है कि चक्रेश्वरी सभी देवताओं मे अधिदेवता है और वही देवी विद्यादेवियों में अप्रतिचक्रा के नाम से प्रसिद्ध है। चक्रेश्वरी को कहीं कही चक्रादेवी भी कहा गया है। चक्रेश्वरी देवी की स्तुति में स्वतंत्र रूप से अनेक स्तोत्रों की रचना हुयी है। श्री जिनदत्तसूरि महाराज ने भी चक्रेश्वरी स्तोत्र की रचना की है।

देवी चक्रेश्वरी का वर्ण स्वर्ण के समान पीत है। उसे श्वेताम्बर ग्रन्थों में गरुडवाहना कहा है किन्तु दिगम्बर ग्रन्थो में वह गरुडवाहना होने के साथ पद्मस्था भी है। अपराजितपृच्छा और रूपमण्डन में भी चक्रेश्वरी को गरुड और पद्म पर स्थित बताया गया है।

चक्रेश्वरी चतुर्भुजा, अष्टभुजा और द्वादशभुजा है। दिगम्बर परम्परा के अनुसार जब वह कमलासना होती है तब द्वादशभुजा तथा गरुडासन स्थिति मे चतुर्भुजा होती है। श्वेताम्बर सम्प्रदाय में प्राय: अष्टभुजा चक्रेश्वरी का वर्णन मिलता है। अपराजितपृच्छा में द्वादशभुजा का विधान है पर रूपमण्डन ने गरुडासीना देवी को तो अष्टभुजा किन्तु कमल अथवा गरुड पर आसीन अवस्थामें उसे द्वादशभुजावाली बताया है। अपराजितपृच्छा चक्रेश्वरी को षट्पाद कहती है।[1] किन्तु, इसकी पुष्टि किसी अन्य ग्रन्थ से नहीं होती। आचारदिनकर के अनुसार यह देवी सौम्य आशय वाली है; सच्चक्रा होने पर भी परचक्र का भंजन करती है। रूपमण्डनकार ने अष्टभुजा देवी के वर, बाण, चक्र और शूल ये आयुध बताये हैं किन्तु उनके अनुसार द्वादशभुजा अवस्था में वह दो वज्र, आठ चक्र, मातुलिंग और अभयमुद्रा धारण करती है। रूपमण्डन ने द्वादशभुजा देवी के आयुध अपराजितपृच्छा का अनुसरण करके बताये है। श्वेताम्बर परम्परा में चक्रेश्वरी के दायें हाथों में चक्र, पाश, बाण और वरद तथा बायें हाथों में चक्र, अंकुश, धनुष और वज्र, ये आयुध बताये

---

१. अपराजितपृच्छा, २२१/१५-१६

गये हैं।[1] आचारदिनकर मे बाये हाथों के आयुधोंमे चक्रके स्थान पर चाप कहा गया है[2] किन्तु वह भूल प्रतीत होती है क्योंकि बाये हाथों का एक आयुध धनुप वहीं अलग से गिनाया गया है। दिगम्बर परम्परा की कमलासना देवी दो हाथो मे वज्र, आठ हाथा मे चक्र और शेष दो हाथों में से एक हाथ मे (दायें) वरद तथा दूसरे (बायें) मे फल धारण करती है। गरुडासना देवी के दो हाथो मे वज्र, होते है और शेष दो हाथो मे से दाया हाथ वरदमुद्रामे तथा बाया हाथ फल धारण किये होता है।[3]

चक्रेश्वरी की स्वतंत्र प्रतिमाए अनेक स्थानों पर प्राप्त हुयी हैं। इससे उसकी मान्यता और प्रतिष्ठा का अनुमान होता है।

रोहिणी /अजिता /अजितबला

द्वितीय तीर्थंकर अजितनाथ की यक्षी का नाम दिगम्बर परम्परा के अनुसार रोहिणी है जो विद्यादेवियो की सूची मे भी उपलब्ध है। श्वेताम्बर लोग उसे अजितबला या अजिता कहते है। ध्यान देने की बात है कि दिगम्बर परम्परा के वसुनन्दि ने रोहिणी का पर्याय नाम अजिता बताकर उस नाम से मन्त्रपद कहा है। रोहिणी का वर्ण स्वर्ण सा पीत है पर अजितबला श्वेत वर्ण की बतायी गयी है। अपराजितपृच्छाकार ने रोहिणी को श्वेतवर्ण कहा है। दिगम्बर ग्रंथों मे रोहिणी को लोहासन पर स्थित बताया गया है। अपराजित-पृच्छा उसे लोहासन पर रथारूढ कहती है। श्वेताम्बर परम्परा के निर्वाणकलिका तथा अन्य ग्रन्थ भी अजितबला को लोहासना बताते हैं पर आचारदिनकर के अनुसार वह यक्षी गोगामिनी है। रोहिणी और अजितबला दोनो चतुर्भुजा है। अपराजितपृच्छा म अभय, वरद, शंख और चक्र आयुधों का विधान है जिन्हे देवी क्रमशः निचले और उपरले हाथो मे धारण करती है। वसुनन्दि, आशाधर और नेमिचन्द्र ने भी चारो आयुधो की स्थिति उपर्युक्त प्रकार बतायी है।[4]

1. निर्वाणकलिका, पन्ना ३८ तथा अन्य ग्रन्थ।
2. आचारदिनकर, उदय ३६, पन्ना १७५।
3. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/१५-१६; प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१५६ और नेमिचन्द्र, पृष्ठ ३४०।
4. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/१८; प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१५७, प्रतिष्ठा-तिलक, पृष्ठ ३४१।

श्वेताम्बरों की अजितबला के दाये हाथों में वरद और पाश तथा बाये हाथों मे बीजपूर और अंकुश होते हैं।[1]

प्रज्ञप्ति/दुरितारि

तृतीय तीर्थंकर संभवनाथ जी की यक्षी का नाम दिगम्बरों के अनुसार प्रज्ञप्ति और श्वेताम्बरो के अनुसार दुरितारि है। अपराजितपृच्छा मे इसे प्रज्ञा कहा गया है जबकि वसुनन्दि ने इस यक्षी का पर्याय नाम नम्रा भी बताया है। प्रज्ञप्ति विद्यादेवियों में भी द्वितीय स्थान पर है। वसुनन्दि के सिवाय अन्य सभी ग्रन्थकार इस यक्षी को गौर वर्ण कहते है। वसुनन्दि के अनुसार वह स्वर्ण वर्ण की है। दिगम्बरो ने प्रज्ञप्ति को पक्षिवाहना किन्तु श्वेताम्बरो ने दुरितारि को मेषवाहनगामिनी माना है, केवल आचारदिनकर मे उसे छागवाहना बताया गया है। प्रज्ञप्ति षड्भुजा है किन्तु दुरितारि चतुर्भुजा। अपराजितपृच्छा मे षड्भुजा का उल्लेख है। वसुनन्दि, आशाधर और नेमिचन्द्र ने देवी की छह भुजाओ मे क्रमश अर्धचन्द्र, परशु, फल, तलवार, कमण्डलु और वरद ये आयुध बताये है।[2] अपराजितपृच्छाकार की सूची भिन्न प्रकार की है। तदनुसार, अभय, वरद, फल, चन्द्र, परशु, और कमल, इन आयुधो का विधान है। श्वेताम्बर ग्रन्थो मे से निर्वाणकलिका और आचारदिनकर मे दाये हाथो मे वरद और अक्षसूत्र तथा बाये हाथो मे अभय और फल का विधान है[3] किन्तु त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र और अमरकाव्य में फल के स्थान पर सर्प का उल्लेख किया गया है।

वज्रश्रृंखला/कालिका

चतुर्थ तीर्थंकर अभिनन्दननाथ की यक्षी का नाम अपराजितपृच्छा में वज्रश्रृंखला है। वही नाम दिगम्बर परम्परा मे भी मिलता है किन्तु श्वेताम्बरो मे काली या कालिका नाम की देवी तृतीय तीर्थंकर की शासन देवता है। वसु-नन्दि ने वज्रश्रृंखला का पर्याय नाम दुरितारि बताया है जो संभवत: भूल है। वज्रश्रृंखला का वर्ण सोने जैसा है किन्तु कालिका काले वर्ण की है। दोनो के

---

१. निर्वाणकलिका, पन्ना ३४; आचारदिनकर, उदय ३३ पन्ना १७६।

२. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/२०; प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१५८ और नेमिचन्द्र पृष्ठ ३४१।

३. निर्वाणकलिका, पन्ना ३४; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६। निर्वाण कलिका मे अक्षसूत्र के स्थान पर मुक्तामाला बतायी गयी है।

वाहन भी भिन्न भिन्न हैं। वज्रशृंखला हंसवाहना है पर काली पद्मासना। भुजाएं दोनों की चार ही हैं। अपराजितपृच्छा में उनके आयुध नागपाश अक्षसूत्र, फलक (ढाल) और वरद बनाये गये हैं जबकि दिगम्बर ग्रन्थ फलक के स्थान पर फल कहते है[1] जो ठीक जान पड़ता है। श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार कालिका के दायें हाथों में वरद और पाश तथा बायें हाथों में नाग और अंकुश हुआ करते हैं।[2]

पुरुषदत्ता / महाकाली

पंचम तीर्थंकर सुमतिनाथ की शासनदेवी का नाम दिगम्बर पुरुषदत्ता और श्वेताम्बर महाकाली बताते है। वसुनन्दि ने पुरुषदत्ता का अपर नाम संसारी देवी कहा है। आशाधर ने खड्गवरा और मोहनी नामों का प्रयोग किया है। अपराजितपृच्छा में नरदत्ता नाम है। तिलोयपण्णत्ती में पंचम स्थान वज्रांकुशा का है और पुरुषदत्ता सप्तम स्थान पर है।

पुरुषदत्ता और महाकाली, दोनों का वर्ण स्वर्ण के समान पीत है। पुरुषदत्ता गजवाहना है और महाकाली पद्मासना। दोनों ही रूप में यक्षी चतुर्भुजा है। पुरुषदत्ता के दायें हाथों में चक्र और वरद तथा बायें हाथों में वज्र और फल होते हैं।[3] महाकाली के दायें हाथों में वरद और पाश तथा बायें हाथों में मातुलिंग और अंकुश बताये गये हैं।[4]

मनोवेगा / अच्युता

छठे तीर्थंकर पद्मप्रभ की यक्षी का नाम अभिधान-चिन्तामणि में श्यामा कहा गया है किन्तु हेमचन्द्र के ही त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र में वह अच्युता है। सामान्यतया दिगम्बरों के अनुसार मनोवेगा और श्वेताम्बरों के अनुसार अच्युता छठे तीर्थंकर की यक्षी है। वसुनन्दि ने मनोवेगा का अपर नाम मोहिनी भी बताया है।

---

१. वसुनन्दि, आशाधर और नेमिचन्द्र आदि।

२. निर्वाणकलिका, आचारदिनकर, अमरकाव्य और त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र।

३. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४२; प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६०; प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/२४-२५

४. निर्वाणकलिका, पन्ना ३५; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७; अमरकाव्य, सुमतिचरित्र, १९-२० आदि।

मनोवेगा का वर्ण स्वर्ण के समान है पर अच्युता श्याम है। मनोवेगा का वाहन अश्व है। अच्युता नरवाहना है। दोनों देवियां चतुर्भुजा हैं। अपराजितपृच्छा में वज्र, चक्र, फल और वरद, ये मनोवेगा के आयुध बताये गये हैं। नेमिचन्द्र ने ढाल, फल, तलवार और वरद ये चार आयुध कहे हैं।[१] निर्वाणकलिका में दायें हाथों में वरद और बाण तथा बायें हाथों में धनुष और अभय का क्रम है[२] किन्तु आचारदिनकर तथा अन्य ग्रन्थों में बाण के स्थान पर पाश का उल्लेख है।[३]

काली/शान्ता

सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथकी यक्षी दिगम्बरों के अनुसार काली और श्वेताम्बरों के अनुसार शान्ता है। वसुनन्दि ने काली का अपर नाम मानवी भी कहा है। त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र और निर्वाण कलिका में शान्ता को शान्तिदेवी कहा है। अपराजितपृच्छा के अनुसार कालिका कृष्ण वर्ण की है पर दिगम्बर ग्रन्थ उसे श्वेत कहते हैं। शान्ता देवी का वर्ण पीत है। दिगम्बरों ने काली को वृषवाहना किन्तु अपराजितपृच्छा ने उसे महिषवाहना कहा है जबकि शान्ता या शान्ति का वाहन गज है। अपराजितपृच्छा के अनुसार कालिकादेवी अष्टभुजा है और त्रिशूल, पाश, अंकुश, धनुष, बाण, चक्र, अभय और वरद इस प्रकार आयुध धारण करती है। नेमिचन्द्र के अनुसार उसके आयुध बायें उपरले हाथ से प्रारंभकर क्रमशः घण्टा, फल, शूल, और वरद ये चार हैं।[४] यही आयुध वसुनन्दि और आशाधर ने भी कहे हैं।[५] श्वेताम्बर परम्परा में दायें हाथों में वरद और अक्षसूत्र तथा बायें हाथों में शूल और अभय आयुध माने गये है।[६]

ज्वालामालिनी/भृकुटि

अष्टम तीर्थंकर चन्द्रप्रभ की यक्षी ज्वालामालिनी को तंत्र में बहुत प्रतिष्ठा प्राप्त रही। उसके ज्वालिनी, ज्वाला, ज्वालामालिका आदि अन्य नाम मिलते हैं। इन्द्रनन्दि के ज्वालिनीकल्प[७] मे उसे वह्निदेवी या शिखिमद्देवी भी

१. नेमिचन्द्र कृत प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४२।

२. निर्वाणकलिका, पन्ना ३५।

३. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७।

४. नेमिचन्द्र, पृष्ठ ३४२।

५. वसुनन्दि, ५/२९; आशाधर, ३/१६१।

६. निर्वाणकलिका, पन्ना ३५; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७। आचारदिनकर ने अक्षसूत्र के स्थान पर मुक्तामाला कहा है।

७, जैन सिद्धान्त भवन हस्तलिखित ग्रन्थ क्रमांक ८१/झ

कहा गया है । हेलाचार्य, मल्लिषण और अपराजितपृच्छाकार ने ज्वालामालिका नामका प्रयोग किया है । श्वेताम्बर परम्परा के प्रवचनसारोद्धार में भी ज्वाला नाम मिलता है पर अन्य श्वेताम्बर ग्रन्थों में अष्टम तीर्थंकर की यक्षी का नाम भृकुटि ही बताया जाता है ।

दिगम्बर ग्रन्थों में ज्वालादेवी को श्वेतवर्ण बताया गया है[1] जबकि अपराजितपृच्छा के अनुसार वह कृष्ण वर्ण है । भृकुटि का वर्ण पीत है । दिगम्बर लोग ज्वाला यक्षी को महिषवाहना मानते हैं ।[2] अपराजितपृच्छा ने उसे पद्मासना और वृषारूढ़ा कहा है । भृकुटि के वाहन के बिषय में श्वेताम्बर ग्रन्थों में किंचित् मतवैषम्य है । त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र और अमरचन्द्र के महाकाव्य में उसे हंसवाहना,आचारदिनकर मे विडालवाहना और निर्वाणकलिका में वराहवाहना कहा गया है ।[3]

अपराजितपृच्छामें घंटा, त्रिशूल, फल और वरद ये आयुध बताये गये हैं । बसुनन्दि ने पूरे आयुध नही गिनाये, केवल वाण, वज्र, त्रिशूल, पाश, दो पाश, धनुष और मत्स्य का नामोल्लेख किया है ।[4] इन्द्रनन्दि ने ज्वालिनीकल्प में त्रिशूल, पाश, मत्स्य,धनुष, बाण,फल. वरद और चक्र ये आयुध बताये हैं ।[5] आशाधर और नेमिचन्द्र ने दायें हाथों मं त्रिशूल या शूल, वाण, मत्स्य और तलवार तथा बायें हाथों में चक्र, धनुष, पाश और ढाल इस प्रकार कुल आठ आयुध कहे हैं ।[6] श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार भृकुटि के दायें हाथों मे तलवार और मुदगर तथा बाये हाथों में ढाल और फरसा होते हैं ।[7]

महाकाली /सुतारा

नौवें तीर्थंकर पुष्पदन्त या सुविधिनाथ की यक्षी दिगम्बरों के अनुसार महाकाली और श्वेताम्बरों के अनुसार सुतारा है । वसुनन्दि ने इसे भृकुटि भी कहा है पर वह भूल है । अभिधान चिन्तामणि में सुतारका और अपराजितपृच्छा में महाकाली नाम है । महाकाली कूर्म पर सवारी करती है पर सुतारा

१–२. ज्वालिनीकल्प, श्लोक २ तथा अन्य ग्रन्थ ।

३. विडाल के स्थान पर वराह भूल प्रतीत होती है ।

४. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/३१

५. श्लोक ३

६. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६२; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ, ३४३ ।

७. आचारदिनकर, उदय, ३३, पन्ना १७७; निर्वाणकलिका, पन्ना ३५ तथा अन्य ।

वृषभ पर। दोनों चतुर्भुजा हैं। अपराजितपृच्छा ने चारों हाथों के आयुध वज्र, गदा, वरद और अभय बताये है। वसुनन्दि ने वज्र, गदा, मुद्गर, और कृष्ण फल इन तीन का ही उल्लेख किया है, वे चौथे वरद को छोड़ गये हैं।[१] आशाधर और नेमिचन्द्र के अनुसार महाकाली के दायें हाथों में मुद्गर और वरद तथा बायें हाथों में वज्र और मातुलिंग होते है।[२] श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार सुतारा दायें हाथों मे वरद और अक्षसूत्र तथा बाये हाथों में कलश और अंकुश धारण करती है।[३]

मानवी/अशोका

दसवें तीर्थंकर शीतलनाथ की यक्षी का नाम दिगम्बर मानवी और श्वेताम्बर अशोका कहते है। वसुनन्दि ने मानवी का पर्याय नाम चामुण्डा भी कहा है।

अपराजितपृच्छा में मानवी को श्यामवर्ण किन्तु दिगम्बर परम्परा के ग्रन्थों में उसे हरितवर्ण कहा गया है। श्वेताम्बर परम्परा के आचारदिनकर में अशोका को नीलवर्ण माना है पर त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, निर्वाणकलिका आदि में मुद्ग (मूंग) वर्ण कहा गया है। मानवी कृष्णशूकरवाहना है और अशोका पद्मवाहना। दोनो की ही चार-चार भुजाएं हैं। अपराजितपृच्छा के अनुसार आयुध, पाश, अंकुश, फल और वरद हैं। वसुनन्दि ने केवल तीन आयुधों का नामोल्लेख किया है, मत्स्य, फल और वरद, चौथे आयुध का नाम नही लिखा।[४] आशाधर ने दायें हाथों के आयुध माला और वरद तथा बायें हाथों के आयुध मत्स्य और फल बताये हैं।[५] नेमिचन्द्र ने बायें उपरले हाथमें मत्स्य, बायें निचले हाथ में फल, दायें उपरले हाथ में माला और दायें निचले हाथमें वरदमुद्रा होना कहा है।[६] श्वेताम्बर परम्परामें अशोकाके दायें हाथों में वरद और पाश तथा बायें हाथों में फल और अंकुश होते हैं।[७]

---

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/३३.
२. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६३; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४३
३. निर्वाणकलिका पन्ना ३५; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७ तथा अन्य। आचारदिनकर में अक्षसूत्र को रसजमाला कहा गया है।
४. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५-३५।
५. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६४
६. नेमिचन्द्र, पृष्ठ ३४३।
७. निर्वाणकलिका, पन्ना ३५।

गौरी / मानवी

ग्यारहवें तीर्थंकर श्रेयांसनाथ की यक्षी दिगम्बरों के अनुसार गौरी और श्वेताम्बरों के अनुसार मानवी नामवाली है। वसुनन्दि ने गौरी का पर्याय नाम गोमेधकी कहा है पर वह किसी अन्य उल्लेखसे पुष्ट नहीं होता। प्रवचन-सारोद्धार में मानवी के स्थानपर श्रीवत्सा ? नाम मिलता है। आचारदिनकर-कार ने भी मानवी का अपर नाम श्रीवत्सा बताया है। गौरी का वर्ण सोने जैसा पीत और मानवी का वर्ण गौर है। गौरी की सवारी मृग[1] है पर मानवी का वाहन सिंह है। दोनों की भुजाएं चार-चार है। अपराजितपृच्छा मे गौरी के आयुध पाश, अंकुश, कमल और वरद बताये गये है। वसुनन्दि ने केवल दो-कमल और वरद-आयुधों का उल्लेख किया है।[2] आशाधर और नेमिचन्द्र ने मुद्‌गर, कमल, अंकुश और वरद ये चार आयुध बताये है।[3] आचार-दिनकर और निर्वाणकलिका के अनुसार मानवी दाये हाथो में वरद और मुद्‌गर तथा बायें हाथों में कलश और अंकुश धारण किया करती है।[4]

गांधारी / चण्डा

बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्यकी यक्षी दिगम्बरों के अनुसार गांधारी और श्वेताम्बरों के अनुसार चण्डा है। वसुनन्दि ने गांधारी का पर्याय नाम विद्युन्मालिनी बताया है। गांधारी को प्रवचनसारोद्धारमें प्रवरा, आचारदिनकर में प्रवरा और चण्डा दोनों, निर्वाणकलिकामें प्रचण्डा और त्रिषष्टिशलाकापुरुष-चरितमें चन्द्रा कहा गया है। गाधारी का वर्ण हरित् है पर अपराजितपृच्छा उसे श्यामवर्ण बताती है। चण्डा श्यामवर्ण की है। गांधारी का वाहन मकर और चण्डा का वाहन अश्व है। अपराजितपृच्छा में गांधारीको द्विभुजा किन्तु दिगम्बर और श्वेताम्बर ग्रन्थों में गांधारी और चण्डा दोनोंको चतुर्भुजा बताया गया है। अपराजितपृच्छा के अनुसार गांधारी के दाये हाथ मे कमल और बायें हाथ में फल होता है। वसुनन्दिने केवल तीन हाथों के आयुध बताये हैं अर्थात् मुशल और दो कमल,[5] चौथे आयुधका उल्लेख नहीं किया। आशाधर

---

१. अपराजितपृच्छा में कृष्ण मृग
२. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/३७
३. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६५ और प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४८
४. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७; निर्वाणकलिका, पन्ना ३५।
५. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/३९

और नेमिचन्द्र के वर्णन को एक साथ पढने पर गाधारीके दाये उपरले हाथ मे कमल, दाया निचला हाथ वरदमुद्रामे, बायें उपरले हाथमे कमल और बायें निचले हाथ मे मुशल का होना ज्ञात होता है।[1] चण्डा के दाये हाथो मे वरद और शक्ति तथा बाये हाथो म पुष्प और गदा होती है ।[2]

वैरोटी / विदिना

तेरहवे तीर्थकर विमलनाथ की यक्षी को दिगम्बर वैरोटी और श्वेताम्बर विदिना कहते है । अपराजितपृच्छामे उसका नाम विरटा और नेमिचन्द्र के प्रतिष्ठातिलक मे वरोटिका मिलता है । वसुनन्दि ने वैरोटी का पर्याय नाम विद्या भी बताया है । विदिता के स्थान पर प्रवचनसारोद्धारमे विजया नाम मिलता है । वैरोटी हरित् वर्ण है पर अपराजितपृच्छामे उसे श्यामवर्ण कहा गया है । विदिना के वर्ण के विषय मे भी मतवैषम्य है । त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र और निर्वाणकलिकामे वह हरितालद्युति है पर आचारदिनकर और अमरचन्द्र के महाकाव्य म स्वर्ण वर्ण । दिगम्बरो के अनुसार वैरोटी अजगर पर सवारी करती है । विदिना पद्म पर आसीन है । वैरोटी और विदिता दोनो चतुर्भुजा है । पर अपराजितपृच्छा ने वैरोटी को षडभुजा कहा है । उसके अनुसार यक्षीके दो हाथ वरदमुद्रामे रहते है और शेष चार हाथों मे वह खड्ग, खेटक, धनुष और बाण धारण करती है । वसुनन्दि ने आयुधो मे मे केवल दो सर्पो का ही उल्लेख किया है । आशाधरके अनुसार दाये और बाये ओर के एक एक हाथ मे सर्प तथा दाये ओर के दूसरे हाथ मे बाण और बाये ओर के दूसरे हाथ मे धनुष होना है ।[3] नेमिचन्द्र ने दाये ओर के दोनो हाथों मे सर्प बताया है और बाये ओर के हाथो मे बाण और धनुष ।[4] विदिता देवी के दाये हाथो मे बाण और पाश तथा बाये हाथो मे धनुष और नाग होते है ।[5]

---

१. प्रतिष्ठासारोद्धार ३/१६६; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४४

२ निर्वाणकलिका, पन्ना ३५; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७ तथा अन्य ग्रन्थ ।

३. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६७

४. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४४

५. निर्वाणकलिका, पन्ना ३६; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७ तथा अन्य ग्रन्थ

अनन्तमती / अंकुशा

चौदहवें तीर्थंकर अनन्तनाथ की यक्षी दिगम्बरों के अनुसार अनन्तमती और श्वेताम्बरों के अनुसार अंकुशा है। वसुनन्दि ने अनन्तमती का अपर नाम विजृम्भिणी भी कहा है। अपराजितपृच्छामे चौदहवी यक्षी का नाम तारिका बताया गया है। अनंतमती/तारिका हंसवाहना है पर अंकुशा पद्म पर स्थित होती है। अनंतमती और अंकुशा दोनों का वर्णन चतुर्भुजा यक्षी के रूप में मिलता है। अमरकाव्य के अनन्तजिनचरित्र (श्लोक १९-२०) में अंकुशा के दो ही आयुध बताये गये है, जिससे प्रतीत होता है कि अमरचन्द्र उसे द्विभुजा मानते है। उन्होंने दायें हाथमें फलक और बायें हाथ मे अंकुश बताये है। अपराजितपृच्छा ने तारिका के आयुध धनुष, बाण, फल और वरद कहे है। ठीक यही आयुध वसुनन्दि, आशाधर और नेमिचन्द्र के ग्रन्थों मे पाये जाते है[1] श्वेताम्बर परम्परा मे सामान्यतया अंकुशा के दायें हाथो में पाश और तलवार तथा बायें हाथों में अंकुश और ढाल इस प्रकार आयुध होते है।[2]

मानसी /कन्दर्पा

दिगम्बरों के अनुसार पंद्रहवें तीर्थकर धर्मनाथ की यक्षी मानसी है पर श्वेताम्बरों के अनुसार कन्दर्पा। वसुनन्दि ने मानसी का पर्याय नाम परभृता भी कहा है। अपराजितपृच्छा ने इस यक्षी का नाम अनंतागति बताया है जिसका तिलोयपण्णत्ती की अनंतागति मे साम्य प्रतीत होता है। प्रवचनसारोद्धार मे पन्नगगति या पन्नगा नाम है। आचारदिनकर ने भी कन्दर्पा का अपर नाम पन्नगा कहा है। अपराजितपृच्छा ने अनंतागति को रक्तवर्ण, दिगम्बरों ने मानसीको प्रवालवर्ण और श्वेताम्बरो ने कन्दर्पा को गौरवर्ण माना है। मानसी का वाहन शार्दूल या व्याघ्र है और कन्दर्पा का मीन। मानसी और अपराजितपृच्छा की अनंतागति षड्भुजा हैं। कन्दर्पा की भुजाएं चार कही गई हैं। अपराजितपृच्छा ने अनंतागति के त्रिशूल, पाश, चक्र, डमरू, फल और वरद, ये छह आयुध बताये हैं। आशाधर और नेमिचन्द्र के अनुसार मानसी कमल, धनुष, वरद, अंकुश, बाण और कमल इस प्रकार आयुध धारण करती

---

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/४३; प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६८; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४५।

२. निर्वाणकलिका, पन्ना ३६; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७ तथा अन्य ग्रन्थ।

है ।[1] कन्दर्पा दायें हाथों में कमल और अंकुश तथा बायें हाथों में से एक में पुनः कमल धारण करती है और उसका दूसरा बायां हाथ अभयमुद्रा में होता है ।[2]

महामानसी/निर्वाणी

सोलहवें तीर्थंकर शान्तिनाथ की यक्षी दिगम्बरों के अनुसार महामानसी और श्वेताम्बरों के अनुसार निर्वाणी है । वसुनन्दि ने महामानसी का पर्याय नाम कंदर्पा बताया है । अपराजितपृच्छा में तिलोयपण्णत्ती का अनुसरण करके मानसी नामही बताया है । आचारदिनकर में निर्वाणी के स्थानपर निर्वाणा नाम आता है । महामानसी का वर्ण सोने के समान पीत है । निर्वाणी को गौर वर्ण कहा गया है, पर आचारदिनकर ने उसे भी सुवर्ण के समान वर्ण वाली बताया है ।

अपराजितपृच्छा की मानसी पक्षिराज पर सवारी करती है पर महा-मानसी का वाहन मयूर है । निर्वाणी पद्मपर स्थित होती है ।

दोनों प्रकार से सोलहवें तीर्थंकर की यक्षी चतुर्भुजा है । अपराजित-पृच्छा ने उसके हाथों में बाण, धनुष, वज्र और चक्र ये आयुध बताये हैं । वसुनन्दि के अनुसार, फल, ईढि (तलवार), चक्र और वरद ये चार आयुध है ।[3] आशाधर और नेमिचन्द्र ने दायें तथा बायें हाथों के आयुध अलग अलग गिना दिये हैं । तदनुसार महामानसी के दायें हाथों में ईढि और वरद तथा बायें हाथों में चक्र और फल होते हैं ।[4] निर्वाणी के दायें हाथों में पुस्तक और उत्पल (कमल) तथा बायें हाथों में कमण्डलु और कमल होते है ।[5] आचारदिनकर ने पुस्तक के लिये कल्हार और कमण्डलु के लिये कारक पद का प्रयोग किया है ।[6]

जया/बला

सत्रहवें तीर्थंकर कुन्थुनाथकी यक्षी का नाम दिगम्बर और श्वेताम्बर परम्पराओं में क्रमशः जया और बला है । वसुनन्दि ने जया देवी को गांधारी भी कहा है । तिलोयपण्णत्ती और अपराजितपृच्छा में उसका महामानसी नाम मिलता है जबकि प्रवचनसारोद्धार में अच्युता नाम से उल्लेख है ।

---

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१६६; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४५
२. निर्वाणकलिका, पन्ना ३६; आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७ ।
३. प्रतिष्ठासारसंग्रह ५/४७
४. प्रतिष्ठासारोद्धार ३/१७०; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४५ ।
५. निर्वाणकलिका, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, अमरचंद्र आदि ।
६. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७

जया सुवर्ण के समान पीत वर्ण है। बला गौर है, पर आचारदिनकर ने उसे अतिपीत वर्ण कहा है। जया का वाहन कृष्ण शूकर और बला का वाहन मयूर है। दोनों चतुर्भुजा हैं किन्तु अपराजितपृच्छा की यक्षी षड्भुजा है। अपराजितपृच्छा ने यक्षी के आयुध वज्र, चक्र, पाश, अंकुश, फल और वरद बताये है। वसुनन्दि के अनुसार जया के आयुध शंख, तलवार, चक्र और वरद ये चार है।[1] आशाधर और नेमिचन्द्र ने दायें हाथों में तलवार और वरद तथा बायें हाथों में चक्र और शख आयुध बताये है।[2] बला के आयुधों के बारे में मतवैषम्य है। त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, अमरमहाकाव्य और निर्वाणकलिका में उसके दायें हाथों में बीजपूर और शूल तथा बायें हाथों में मुषण्ढी और कमल बताये गये है[3] किन्तु आचारदिनकर मे शूल के स्थान पर त्रिशूल और दोनों बायें हाथों में भशुंडि का उल्लेख है जो संभवतः मुषण्ढी होना चाहिये।[4]

तारावती/धारिणी

अठारहवें तीर्थंकर अरनाथ की यक्षी दिगम्बरों के अनुसार तारावती और श्वेताम्बरों के अनुसार धारिणी है। वसुनन्दि ने तारावती का पर्याय नाम काली भी कहा है। तिलोयपण्णत्ती का अनुसरण करते हुये अपराजितपृच्छा में उसका नाम जया बताया गया है। प्रवचनसारोद्धार में धारिणी के स्थान पर धरणी नाम मिलता है। यक्षी तारावती सोने के समान पीतवर्ण की है। किन्तु धारिणी को आचारदिनकर, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र आदि में नीलवर्ण बताया गया है जबकि निर्वाणकलिका के अनुसार उसका वर्ण श्याम है। तारावती का वाहन हंस है। अपराजितपृच्छा के अनुसार उसके आयुध वज्र, चक्र, फल और सर्प हैं। वसुनन्दि ने सर्प, वज्र, मृग और वरद ये चार आयुध बताये है।[5] उनमें से वज्र और वरद को आशाधर और नेमिचन्द्र ने दायें हाथों के, तथा सर्प और मृग को बायें हाथों के आयुध बताया है।[6] धारिणी के

१. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/४६
२. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१७१; प्रतिष्ठातिलक ३४५–४६।
३. निर्वाणकलिका, पन्ना ३६।
४ आचारदिनकर, उदय, ३३, पन्ना १७७।
५. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/५१
६. प्रतिष्ठासारोद्धार ३/१७२

दायें हाथों के आयुध मातुलिंग और कमल है। वह बायें ओर के एक हाथ में अक्षसूत्र धारण करती है पर उसके दूसरे बायें हाथ में निर्वाणकलिका के अनुसार पाश, तथा अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा पद्म हुआ करता है।[1]

अपराजिता /वैरोट्या

उन्नीसवें तीर्थंकर मल्लिनाथ की यक्षी दिगम्बरों के अनुसार अपराजिता नाम की है और श्वेताम्बरों के अनुसार वैरोटया नाम की। उसे तिलोयपण्णत्ती और अपराजितपृच्छा में विजया कहा गया है। वसुनन्दि ने अपराजिता को भी अन्यत्र अनजान देवी के नाम से स्मरण किया है। उसी प्रकार वैरोट्या को प्रवचनसारोद्धार में वैराटी, अभिधानचिन्तामणि में धरणप्रिया और आचार-दिनकर में नागाधिप की प्रियतमा कहा गया है। अपराजिता हरित् वर्ण और वैरोट्या कृष्ण वर्ण है। अपराजितपृच्छा की विजया का वर्ण श्याम है। अपराजिता यक्षी का वाहन अष्टापद किन्तु वैरोटी पद्म पर आसीन है। दोनों देवियों की भुजाएं चार हैं। अपराजितपृच्छा ने विजया के आयुध खड्ग, खेट, फल और वरद कहे हैं। वसुनन्दि ने अपराजिता के पूरे आयुध नहीं बताये किन्तु आशा-धर और नेमिचन्द्र के अनुसार वह यक्षी दायें उपरले हाथ में तलवार, बायें उपरले में खेट तथा बायें निचले हाथ में फल धारण करती है और उसका दायां निचला हाथ वरद मुद्रा में होता है।[2] वैरोट्या यक्षी के दायें हाथों में अक्षसूत्र और वरद तथा बायें हाथों में शक्ति और बीजपूर हुआ करते हैं।[3]

बहुरूपिणी /नरदत्ता

बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ की यक्षी दिगम्बरों के अनुसार बहुरूपिणी और श्वेताम्बरों के अनुसार नरदत्ता है। वसुनन्दि ने बहुरूपिणी को सुगंधिनी भी कहा है। प्रवचनसारोद्धार में बीसवें तीर्थंकर की यक्षी का नाम अच्छुप्ता बताया गया है। आचारदिनकर ने अच्छुप्तिका और नृदत्ता दोनों ही नामों का उल्लेख किया है। तिलोयपण्णत्ती और अपराजितपृच्छा के अनुसार अपराजिता बीसवें तीर्थंकर की यक्षी है। दिगम्बरों की यक्षी बहुरूपिणी पीतवर्ण की है। नरदत्ता को आचारदिनकरकार स्वर्ण के वर्ण की बताते हैं किन्तु अन्य ग्रन्थों के अनुसार वह

---

१. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८; निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

२. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१७३; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४७।

३. निर्वाणकलिका, पन्ना ३६ तथा अन्य ग्रन्थ।

गौर वर्ण है। बहुरूपिणी का वाहन कृष्ण नाग है। नरदत्ता भद्रासना है। बहुरूपिणी और नरदत्ता दोनों चतुर्भुजा है पर अपराजितपृच्छा की देवी द्विभुजा है जो खड्ग–खेटक धारण करती है। वसुनन्दि ने बहुरूपिणी को अष्टानना, महाकाया और जटामुकुटभूषिता कहा है। बहुरूपिणी के दायें हाथों में खड्ग और वरद तथा बायें हाथों में खेट और फल होने का विधान है।[1] नरदत्ता के आयुधों के संबंध में किञ्चित् मतवैषम्य है। आचारदिनकर और त्रिषष्टि–शलाकापुरुषचरित उसके दायें हाथो में वरद और अक्षसूत्र तथा बांयें हाथों में मातुलिंग और शूल बताते है[2] किन्तु निर्वाणकलिका में शूल के स्थान पर कुम्भ कहा गया है।[3]

चामुण्डा/गांधारी

इक्कीसवें तीर्थंकर नेमिनाथ की यक्षी को दिगम्बर लोगों ने चामुण्डा और श्वेताम्बर लोगों ने गांधारी नाम दिया है। नेमिचन्द्र ने उसे चामुण्डिका और वसुनन्दि ने कुसुममालिनी भी कहा है। तिलोयपण्णत्ती के अनुसार बहु–रूपिणी बाईसवें तीर्थंकर की यक्षी है। चामुण्डा का वर्ण हरित् कहा गया है और गांधारी का श्वेत। वसुनन्दि ने चामुण्डा को नंदिवाहना बताया है किन्तु आशाधर और नेमिचन्द्र उसे मकरवाहना कहते है। अपराजितपृच्छा की देवी मर्कट पर सवारी करती है। गाधारी हंसवाहना है। वसुनन्दि के अनुसार चामुण्डा अष्टभुजा और चतुर्भुजा दोनों विग्रह वाली है पर आशाधर और नेमि चन्द्र उसे चतुर्भुजा ही मानते हैं। अपराजितपृच्छा की देवी अष्टभुजा है। श्वेताम्बरों की गांधारी के भी चार हाथ है। चामुण्डा को वसुनन्दि ने चतुर्वक्त्रा (चारमुखवाली) और रक्ताक्षा भी कहा है[4] पर अन्य ग्रन्थो में इसका उल्लेख नही मिलता। अपराजितपृच्छा मे बहुरूपिणी नाम की देवी के आठ आयुध शूल, खड्ग, मुद्गर, पाश, वज्र, चक्र, डमरू और अक्षसूत्र बताये गये है। दिगम्बर ग्रन्थ चामुण्डा के चार आयुध बताते हैं। तदनुसार उसके दायें हाथों में अक्षसूत्र और तलवार तथा बायें हाथों में यष्टि और खेट हुआ करते हैं।[5]

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१७४; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४७
२. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८।
३. निर्वाणकलिका, पन्ना ३६
४. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/५७
५. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१७५; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४७।

गांधारी के आयुधों के बारे मे मतवैषम्य देखा जाता है। त्रिषष्टिशलाकापुरुष--चरित्र और अमरकाव्य के अनुसार गांधारी के दायें हाथों मे वरद और खड्ग तथा दोनों बायें हाथों मे बीजपूर है। आचारदिनकरकार बायें हाथो मे शकुन्त (पक्षी) और बीजपूर कहते है[1] जबकि निर्वाणकलिका कुम्भ और बीजपूर का उल्लेख करती है।[2]

आम्रा /अम्बिका

बाईसवे तीर्थंकर नेमिनाथ की यक्षी आम्रा या अम्बिका है। इस देवी के अनेक नाम है। श्वेताम्बर शुभचन्द्र आचार्य ने इसके अम्बा, आम्रकूष्माण्डी, अम्बिला, तारा, गौरी, वज्रा आदि नाम कहे है।[3] तिलोयपण्णत्ती मे कूष्माण्डी तथा प्रवचनसारोद्धार मे अम्बा नाम मिलते है। अपराजितपृच्छा बाईसवें तीर्थंकर की यक्षी के चामुण्डा और अम्बिका दोनो नाम कहती है। अभिधानचिन्तामणि मे अम्बा नाम है पर त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र मे कूष्माण्डी। वसुनन्दि, आशाधर और नेमिचन्द्र ने आम्रा नाम से इस यक्षीका वर्णन किया है पर वसुनन्दि ने अपर नाम कूष्माण्डी भी बताया है। अम्बिका देवी का एक अन्य नाम धर्मा देवी भी है। इस यक्षी को आचारदिनकर मे अम्बा, निर्वाणकलिका मे कूष्माण्डी और अमरकाव्य मे अम्बिका कहा गया है। जैन परम्परा मे अम्बिका देवी की बड़ी मान्यता रही है। महामात्य वास्तुपाल विरचित अम्बिका स्तवन और जिनेश्वरदत्तसूरि कृत अम्बिकादेवीस्तुति जैसी अनेक रचनाएं अम्बिका की स्तुति मे रची गयी थी।

दिगम्बरों के अनुसार आम्रादेवी हरित वर्ण है। अपराजितपृच्छा मे भी उसे हरित् कहा गया है। श्वेताम्बरों ने अम्बिका को सुवर्ण के समान पीत वर्ण की माना है। रूपमण्डन ने भी पीत ही कहा है।

इस यक्षी का वाहन सिंह है। आशाधर ने भर्तृचर विशेषण दिया है जिसका संकेत पूर्व जन्म की कथा के प्रति है। दिगम्बर लोग अम्बिका को द्विभुजा

१ आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १७७। यदि शकुन्त को सकुन्त (यद्यपि वह अशुद्ध होगा) मानें तो एक आयुध कुन्त होगा।

२. निर्वाणकलिका पत्रा ३६। कुम्भ के स्थान पर कुन्त भी हो सकता है?

३. अम्बिकाकल्प, ७/२--३। शुभचन्द्राचार्य ने अम्बिका कल्प की रचना जिनदत्त के आग्रह से ब्रह्मशील के पठन के लिए की थी।

मानते हैं पर श्वेताम्बर लोग चतुर्भुजा। शुभचन्द्राचार्य ने तीन स्थितियों में तीन प्रकार से भुजाओं की संख्या का विधान किया है। तदनुसार जब यक्षी अरिष्ट नेमि के पादमूल में स्थित हो तो अष्टभुजा होती है; जब उसकी प्रतिमा सिंहासन पर बनायी जावे तो चतुर्भुजा और जब पार्श्व में स्थित की जावे तो द्विभुजा होना चाहिये। आशाधर के अनुसार आम्रा देवी आम्र वृक्ष की छाया में स्थित होती है। नेमिचन्द्र ने उसे आम्रवृक्ष की छाया में वाम कटि पर प्रियंकर को रखे हुये बताया है। अपराजितपृच्छा में भी इस यक्षी को पुत्रेण उपास्यमाना और सुतोत्संगा कहा गया है।

अपराजितपृच्छा मे, अम्बिका का दायां हाथ वरद मुद्रा में और बायें हाथ में फल का होना बताया गया है। आशाधर के अनुसार अम्बिका के दायें हाथ की अंगुलियां अपने पुत्र शुभंकर के हाथ को छूती हुयी दिखायी जाती हैं और बायें हाथ में वह गोद में बैठे प्रियंकर के लिये आम्रस्तबक पकड़े रहती है।[1] नेमिचन्द्र ने भी उसी प्रकार का विवरण दिया है।[2] श्वेताम्बर परम्परा के प्रवचनसारोद्धार में अम्बिका के दाये हाथों में आम्र-लुम्बि और पाश तथा बायें हाथों में चक्र और अंकुश बताये गये हैं। त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित्र के अनुसार यक्षी के दायें हाथों में आम्रलुम्बि और पाश तथा बायें हाथों में पुत्र और अंकुश होते हैं। रूपमण्डन ने पाश के स्थान पर नागपाश कहा है। आचारदिनकर का मत त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र जैसा है। किन्तु निर्वाणकलिका में आम्रलुम्बि या आम्राली के स्थान पर मातुलिंग का उल्लेख किया गया है।[4] शुभचन्द्र आचार्य ने चतुर्भुजा अम्बिका के आयुध शंख, चक्र, वरद और पाश बताये हैं। उन्हीं आचार्य ने अष्टभुजा स्थिति में आम्रकूष्माण्डी को शंख, चक्र, धनुष, परशु, तोमर, तलवार, पाश और कौक्षेय इन आयुधों से युक्त कहा है।

पद्मावती

तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की यक्षी पद्मावती को तिलोयपण्णत्ती में पद्मा कहा गया है। इन्द्रनन्दि और मल्लिषेण ने भी उसे पद्मा नाम से

---

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१७६
२. प्रतिष्ठातिलक पृष्ठ ३४७
३. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना; १७८
४, निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

स्मरण किया है। इस यक्षी को लेकर अनेक कल्पों और स्तोत्रों की रचनाएं हुयी है। इन्द्रनन्दि का पद्मावती पूजन, मल्लिषेण का भैरवपद्मावतीकल्प, यशोभद्र उपाध्याय के शिष्य श्रीचन्द्रसूरि का अद्भुत पद्मावतीकल्प आदि उनमें प्रमुख हैं। दिगम्बरों के अनुसार पद्मावती का वर्ण रक्त है। अपराजित पृच्छा और रूपमण्डन ने भी उसे रक्तवर्ण बताया है। श्वेताम्बर ग्रंथों के अनुसार वह सुवर्ण के समान पीतवर्ण की है।

वसुनन्दि पद्मावती को पद्मासीना कहते है। आशाधर पद्मस्था तो कहते ही हैं पर कुर्कुटसर्पगा भी बताते है। अपराजितपृच्छा मे पद्मासना और कुक्कुटस्था तथा रूपमण्डन मे कुर्कुटोरगस्था का विधान किया गया है। मल्लिषेण ने पद्मस्था कहा है। श्वेताम्बर ग्रथों मे से त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र और आचारदिनकर मे पद्मावतीको कुर्कुट सर्प पर स्थित बताया गया है किन्तु श्रीचन्द्रसूरि ने उसे पद्म एवं हंस पर स्थित कहा है। मल्लिषेण ने पद्मावती को त्रिलोचना बताया है। आशाधर और श्रीचन्द्रसूरि ने त्रिफणसर्पमौलि तथा मल्लिषेण ने पन्नगाधिपशेखर आदि विशेषणों द्वारा सूचित किया है कि पद्मावती के मस्तक पर सर्पफण का छत्र होता है। पद्मावती की भुजाओ की सख्या के संबंध मे मतभिन्नता है। वसुनन्दि और नेमिचन्द्र उसे चार, छह या चौबीस भुजाओ वाली बताते है। आशाधर ने चार, छह और आठ भुजाओं का उल्लेख किया है। श्वेताम्बर ग्रन्थों मे सामान्यतया पद्मावती देवी को चतुर्भुजा ही कहा है। उसी प्रकार, मल्लिषेण, श्रीचन्द्रसूरि, अपराजितपृच्छाकार एव रूप–मण्डनकार भी पद्मावती को चतुर्भुजा मानते हैं। नेमिचन्द्र के अनुसार पद्मावती देवी के आयुध निम्न प्रकार है :—

चतुर्भुजा : दायें हाथों में अक्षमाला और वरदमुद्रा तथा बायें हाथों मे अंकुश और कमल।

षड्भुजा : पाश आदि (विवरण अपूर्ण)

चर्तुविंशतिभुजा : शंख, तलवार आदि (विवरण अपूर्ण)[1]

आशाधर ने नेमिचन्द्र के समान मत प्रकट किया है। अन्तर केवल इतना है कि आशाधर के अनुसार चतुर्भुजा पद्मावती के दायें हाथों के आयुधों में

१. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४७-४८

वरदमुद्रा के स्थान पर व्यालांबर हुआ करता है ।[1] वसुनन्दि ने पद्मावती के आयुधों का वर्णन विस्तार से किया है।[2] उनके अनुसार चतुर्भुजा पद्मावती अंकुश, अक्षसूत्र, कमल और संभवतः वरदमुद्रा धारण करती है; षड्भुजा देवी के हाथों में पाश, असि, कुंत, अर्धचन्द्र, गदा और मूसल हुआ करते है जबकि चतुर्विंशति-भुजा अवस्थाके आयुध, शंख, असि,चक्र,अर्धचन्द्र,श्वेतपद्म, उत्पल (नीलकमल), धनुष,शक्ति,पाश, अंकुश,घण्टा, बाण,मूसल, खेटक,त्रिशूल, परशु, वज्र, माला,फल, गदा, पत्रपल्लव, वरदमुद्रा तथा अन्य दो होते है। रूपमण्डन ने पद्म, पाश, अंकुश और बीजपूर तथा अपराजितपृच्छा ने पाश, अंकुश, पद्म और वरदमुद्रा इनका विधान किया है ।

आचारदिनकर में पद्मावती के दायें हाथों के आयुध पद्म और पाश तथा बायें हाथों के आयुध अंकुश और दधिफल कहे गये है ।[3] निर्वाणकलिका में भी दाये हाथों में पद्म और पाश का, तथा बाये हाथों मे फल और अंकुश का उल्लेख है ।[4] श्रीचन्द्रसूरि ने पद्म, अंकुश, वरद और पाश[5] तथा मल्लिषेण ने वामोर्ध्व कर क्रम से पाश, फल, वरद और अंकुश, इन आयुधों का वर्णन किया है ।[6]

भैरवपद्मावतीकल्प (१/२) मे पद्मा देवी के तोतला, त्वरिता, नित्या, त्रिपुरा, काममाधिनी और त्रिपुरभैरवी, इन छह भिन्न भिन्न रूपों का उल्लेख है । तोतला के आयुध, पाश, वज्र, फल और कमल है । त्वरिता रक्त वर्ण की है और शंख, पद्म, अभयमुद्रा तथा वरदमुद्रा धारण करती है । नित्या रूप मे देवी की जटाए बालचन्द्र से मण्डित होती है । उसके हाथों मे पाश, अंकुश, कमल और अक्षमाला, तथा वाहन हंस है । कुंकुम के समान वर्ण वाली त्रिपुरा की आठ भुजाओं मे शूल, चक्र, कशा, कमल, चाप, बाण, फल और अंकुश होते है । काममाधिनी बन्धूक पुष्प के समान वर्ण वाली है और शंख, पद्म, फल एवं कमल धारण करती है । त्रिपुरभैरवी का वर्ण इन्द्रगोप के समान है। वह त्रिलोचना है । उसके हाथों में पाश, चक्र, धनुष, बाण, खेट, खड्ग, फल और अम्बुज हुआ करते हैं ।

---

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१७७
२. प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/६०-६८
३. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८
४. निर्वाणकलिका, पन्ना ३७
५. अद्भुतपद्मावतीकल्प, ४/५२-५४
६. भैरवपद्मावतीकल्प, १/२

सिद्धायिका

चौबीसवें तीर्थंकर महावीरस्वामी की यक्षी सिद्धायिका है। उसे सिद्धायिनी भी कहा जाता है। प्रवचनसारोद्धार में उसका नाम केवल सिद्धा मिलता है। सिद्धायिका यक्षी का वर्ण दिगम्बरों के अनुसार स्वर्ण जैसा है पर नेमिचन्द्र ने इन्द्रनीलवर्ण का उल्लेख किया है। श्वेताम्बर परम्परा में सिद्धायिका को हरित् वर्ण वाली माना गया है।

वसुनन्दि ने सिद्धायिका को भद्रासना, आशाधर ने भद्रासना और सिंहगति, नेमिचन्द्र ने भद्रासना और हंसगति, अपराजितपृच्छाकार ने भद्रासना, रूपमण्डन में सिंहारूढा या सिद्धारूढा, निर्वाणकलिका और आचारदिनकर में सिंहवाहना एवं अमरचन्द्र ने गजवाहना कहा है। दिगम्बरों के अनुसार यह यक्षी द्विभुजा है और श्वेताम्बरों के अनुसार चतुर्भुजा। अपराजितपृच्छा में द्विभुजा और रूपमण्डन में चतुर्भुजा का विधान है।

दिगम्बर परम्परा के अनुसार, सिद्धायिका का दाया हाथ वरद मुद्रा में होता है और उसके बायें हाथ में पुस्तक रहती है।[1] अपराजितपृच्छा में दायां हाथ अभयमुद्रा में और बाया हाथ पुस्तकयुक्त बताया गया है। श्वेताम्बर परम्परा के आचारदिनकर के अनुसार इस यक्षी के दायें हाथों में पुस्तक और अभयमुद्रा तथा बायें हाथों में पाश और कमल होते हैं।[2] निर्वाणकलिका में बायें हाथों में मातुलिंग और वीणा का विधान है।[3] रूपमण्डन में वीणा के स्थान पर वाण का उल्लेख है जो संभवतः भूल है।

शासन देवताओं की उत्पत्ति

प्राचीनतम जैन साहित्य में शासन देवताओं का विवरण नहीं मिलता। प्राचीनतम तीर्थंकर प्रतिमाओं के साथ भी शासन देवताओं की प्रतिमाएं नहीं मिली है। इसके ज्ञात होता है कि जैन प्रतिमा निर्माण के प्रारंभिक काल में शासन यक्षों और यक्षियों की प्रतिमाएं निर्मित किये जाने की परम्परा नहीं थी।

१ प्रतिष्ठासारसंग्रह, ५/६६-६७; प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/१७८; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३४८.

२. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

३. निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

श्री उमाकान्त परमानन्द शाह ने शासन देवताओं के जैन शासन में प्रवेश के संबंध में विस्तार से विवेचन किया है ।[१] उन्होंने बताया है कि अकोटा की कायोत्सर्ग ऋषभनाथ प्रतिमा के साथ प्रथम बार शासन देवताओं की प्रतिमाएं देखी गयी है ।[२] वह प्रतिमा अनुमानतः ५५० ईस्वी के लगभग की कलाकृति है । उस पर उत्कीर्ण लेख में जिनभद्र वाचनाचार्य का उल्लेख है जिन्हें श्री शाह ने जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण से अभिन्न माना है । उपर्युक्त ऋषभनाथ प्रतिमा के साथ प्राप्त यक्ष और यक्षी का रूप क्रमशः कुबेर और अम्बिका जैसा है । श्री शाह का मत है कि नौवीं शताब्दी ईस्वी के अन्त तक सभी तीर्थंकरों की प्रतिमाओं के साथ कुबेर और अम्बिका की जोड़ी ही बनायी जाती रही है जैसाकि एलोरा तथा अन्य स्थानों की तीर्थंकर प्रतिमाओं में देखा जाता है ।

मध्यकाल मे भारत में तांत्रिक युग आया । उसके प्रभाव से ही बौद्धों में वज्रयान सम्प्रदाय का निर्माण हुआ । तांत्रिक युग में नये नये देव और देवियों की कल्पना की गयी और उनकी पूजा का प्रचार-प्रसार हुआ । पुराने देवों को नये रूप दे दिये गये । पूर्व में जो देव द्विभुज थे, उनके हाथों की संख्या बढ़ी । अवलोकितेश्वर सहस्रभुज तक बन गये ।

जैनों पर भी तांत्रिक युग का प्रभाव पड़ा । वैसे तो जैनों ने अपनी आचारविधि के मूल रूप की रक्षा करने का यथाशक्य प्रयास किया पर तंत्र उस समय युगधर्म बन चुका था, इसलिये जैन लोग उससे अछूते नहीं बचे । जैनों को भी नये नये देवों और देवियों की कल्पना करनी पड़ी । सोमदेवसूरि ने स्वीकार किया है कि शासन की रक्षा के लिये परमागम में शासन देवताओं की कल्पना की गयी है ।[३]

जैनों की इतनी विशेषता अवश्य रही कि उन्होंने नये देवताओं को तीर्थंकरों के रक्षक और सेवक देवताओं के रूप में प्रस्तुत किया और तीर्थंकरो के देवाधिदेव पद की पूर्ण रूप से रक्षा की । तंत्र से प्रभावित जैन आचार्यों ने ज्वालिनीकल्प और भैरवपद्मावतीकल्प जैसी रचनाएं भी की और विशिष्ट चमत्कारों का प्रदर्शन किया ।

---

१. प्रोसीडिंग्ज एण्ड ट्रान्जेक्शन्स आफ दि आॅल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, भुवनेश्वर, १९५९
२. वही, पृष्ठ १४२
३. उपासकाध्ययन, ध्यानप्रकरण, श्लोक ६९७–९९

जयसेन (वसुविन्दु) के प्रतिष्ठापाठ मे शासन देवो की अर्चा--पूजा का उल्लेख नहीं है पर आशाधर के प्रतिष्ठासारोद्धार, नेमिचन्द्र के प्रतिष्ठातिलक, पादलिप्तसूरि की निर्वाणकलिका और वर्धमानसूरि के आचारदिनकर जैसे ग्रन्थों मे शासन देवताओ को यथोचित बलि प्रदान किये जाने का विधान किया गया है।

श्री उमाकान्त शाह के अनुसार, आठवी शताब्दी ईस्वी मे जैन साहित्य में, और नौवीं शताब्दी ईस्वी मे जैन प्रतिमा निर्माण में शासन देवताओ का प्रवेश हुआ। इतने पर भी सभी देव--देवियो की कल्पना एक साथ नहीं, बल्कि क्रमश हुयी थी।[1] श्वेताम्बर ग्रन्थो मे शासन देवताओ की सम्पूर्ण सूची सर्वप्रथम हेमचन्द्र के अभिधानचिन्तामणि मे मिलती है। इन देवताओ के स्वरूप संबंधी विवरण त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र मे उपलब्ध होते है।[2]

अम्बिका

दिगम्बर परम्परा के आचार्य जिनसेन (८ वी शताब्दी) के हरिवंश-पुराण मे और श्वेताम्बर परम्परा के बप्पभट्टसूरि की चतुर्विंशतिका (८००-८९५ईस्वी) मे अम्बिका का वर्णन मिलता है। तदनुसार वह देवी द्विभुजा है।[3] जिनसेन आचार्य के उसी श्लोक मे[4] अप्रतिचक्रा का भी उल्लेख है।[4]

हरिभद्रसूरि ने आवश्यकनिर्युक्ति की टीका मे[5] भी अम्बा कूष्माण्डी विद्या का उल्लेख किया है पर उसके वाहन आदि का विवरण नहीं दिया है। इससे पूर्व मे भी विशेषावश्यक महाभाष्य की क्षमाश्रमणमहत्तरीय टीका मे यस्मिन्मन्त्रदेवता स्त्री सा विद्या अम्बाकूष्माण्ड्यादि उल्लेख तो मिलता है पर

१. तिलोयपण्णत्ती मे दी गयी यक्ष--यक्षियो की सूची के संबंध मे श्री शाह का मत है कि वह अंश पश्चात्काल मे जोड़ा गया था।

२. श्री शाह निर्वाणकलिका को ११ वी- १२ वी शताब्दी की कृति मानते है।

३. हरिवंशपुराण, जिल्द २, सर्ग ६६, श्लोक ४४

४. गृहीतचक्राऽप्रतिचक्रदेवता तथोर्ज्जयन्तालयसिंहवाहिनी ।
शिवाय यस्मिन्निह सन्निधीयते क्व तत्र विघ्नाप्रभवन्ति शान्त्ये ।।

५. श्लोक ६३१

अम्बिका या कूष्माण्डी का नाम विद्यादेवियों की सूची में नहीं मिलता।[1] इस प्रकार अम्बिका का उल्लेख पूर्व में मिलने लगा था; उसकी प्रतिमाएं ५५० ईस्वी के लगभग (संभवत: उससे पूर्व भी) निर्मित होने लगी थी। अम्बिका की प्राचीन प्रतिमाएं अकोटा, मेगुटि मंदिर ऐहोल, महुडी, ढांक और मथुरा में उपलब्ध हुयी है।

सर्वानुभूति /सर्वाह्ण

कुबेर जैसे जिस यक्ष की प्रतिमाएं प्राय: सभी तीर्थंकरों की प्रतिमाओं के साथ देखी जाती है, उस यक्ष को श्री उमाकान्त शाह सर्वानभूति यक्ष से अभिन्न मानते है। प्रतिक्रमणसूत्र की प्रबाधा टीका[2] मे सर्वानुभूति यक्ष का वर्णन मिलता है। वह यक्ष दिव्य गज पर आरूढ़ होकर विचरण किया करता है।

तिलोयपण्णत्ती में अनेक स्थलों पर सर्वाह्ण नामक यक्ष की प्रतिमाओं (रूप) का उल्लेख किया गया है।[3] बाद के प्रतिष्ठा ग्रन्थों मे भी सर्वाह्ण यक्ष का विवरण मिलता है। उसे भी दिव्य श्वेत गज पर आरूढ़ बताया गया है।[4] वह जैन पूजा-यज्ञ आदि की रक्षा किया करता है।

अन्य शासन देवता

आठवी शताब्दी ईस्वी में रचित भद्रेश्वरसूरि की कहावली की स्थविरावली में विभिन्न शासन देवताओं का उल्लेख मिलता है पर उस समय की कला मे अम्बिका जैसी देवियों को छोड़कर अन्य शासन यक्षों या यक्षियों की प्रतिमाएं प्राप्त नहीं होती है। भुवनेश्वर के निकट उदयगिरि की नवमुनिगुफा में जो कुछेक यक्षी प्रतिमाएं है, उनका काल नौवी शताब्दी आंका गया है।

---

१. संभवत: वही अप्रतिचक्रा है।

२. प्रबोधा टीका, जिल्द ३, पृष्ठ १७०

निष्पंकव्योमनीलद्युतिमलमदृशं बालचन्द्राभदंष्ट्रम्
मत्तं घण्टारवेण प्रसूतमदजलं पूरयन्तं समन्तात्।
आरूढो दिव्यनागं विचरति गगने कामद: कामरूपी
यक्ष: सर्वानुभूतिर्दिशतु मम सदा सर्वकार्येषु सिद्धिम्॥

३. ४/१८८१ आदि

४. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ९९

देवगढ़ किले के जैन मंदिर (क्रमांक १२) में यक्षियों की नामयुक्त प्रतिमाएं हैं पर वे प्रतिमाएं भी नौवीं शताब्दी ईस्वी से पूर्व की प्रतीत नहीं होतीं।

श्री उमाकान्त शाह का मत है कि ईस्वी १००० के पश्चात् ही यक्षों और यक्षियों की कल्पना विकसित हो सकी थी और बारहवीं शताब्दी ईस्वी में दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों ही परम्परा की सूचियों ने पूर्णता प्राप्त कर ली थी।

देवगढ़ की यक्षियां

देवगढ़ के जैन मंदिर में यक्षियों की प्रतिमाओं के पट्ट पर उनके नाम उत्कीर्ण किये हुये हैं। उत्कीर्ण लेखों की लिपि ९५० ईस्वी के लगभग की प्रतीत होती है। उन नामों से ज्ञात होता है कि उस समय तक यक्षियों की एक सूची तैयार हो चुकी थी। देवगढ़ की यक्षीप्रतिमाएं दिगम्बर आम्नाय की हैं। इसलिये उनके नामों की तुलना तिलोयपण्णत्ती में प्राप्त नामों से करके क्रमिक विकास का अध्ययन किया जा सकता है। वे नाम इस प्रकार हैं:–

क्रमांक	तीर्थंकर	देवगढ़ की यक्षी	तिलोयपण्णत्ती की यक्षी
१.	ऋषभनाथ	चक्रेश्वरी	चक्रेश्वरी
२.	अजितनाथ	—	रोहिणी
३.	संभवनाथ	—	प्रज्ञप्ति
४.	अभिनन्दननाथ	सरस्वती	वज्रश्रृंखला
५.	सुमतिनाथ	—	वज्रांकुशी
६.	पद्मप्रभ	सुलोचना	अप्रतिचक्रा
७.	सुपार्श्वनाथ	—	पुरुषदत्ता
८.	चन्द्रप्रभ	सुमालिनी	मनोवेगा
९.	पुष्पदन्त	बहुरूपी	काली
१०.	शीतलनाथ	श्रियदेवी	ज्वालामालिनी
११.	श्रेयांसनाथ	वह्निदेवी	महाकाली
१२.	वासुपूज्य	आभोगरोहिणी	गौरी
१३.	विमलनाथ	सुलक्षणा	गांधारी
१४.	अनंतनाथ	अनंतवीर्या	वैरोट्या
१५.	धर्मनाथ	सुरक्षिता	अनन्तमती
१६.	शान्तिनाथ	श्रियदेवी या अनंतवीर्या	मानसी
१७.	कुन्थुनाथ	अरकरभि	महामानसी

१८.	अरनाथ	तारादेवी	जया
१९.	मल्लिनाथ	भीमदेवी	विजया
२०,	मुनिसुव्रतनाथ	—	अपराजिता
२१.	नमिनाथ	—	बहुरूपिणी
२२.	नेमिनाथ	अम्बिका	कामालिनी
२३.	पार्श्वनाथ	पद्मावती	पद्मा
२४.	महावीरस्वामी	अपराजिता	सिद्धायिनी

नागौद के निकट प्राप्त पतानी या पतासन देवी के नाम से ज्ञात अम्बिका प्रतिमा[1] के तीन ओर अन्य तेईस यक्षियों की छोटी छोटी प्रतिमाएं निर्मित की गयी है। उन सब के साथ उनके नाम भी उत्कीर्ण है। यद्यपि उनमेंसे कई नाम ठीक ठीक नहीं पढ़े जा सके है पर उनमे यक्षियों के नाम इस प्रकार ज्ञात होते है :—

बहुरूपिणी, चामुण्डा, सरस्वती, पद्मावती, विजया, अपराजिता, महामानसी, अनन्तमती, गांधारी, मानसी, ज्वालामालिनी, मानुसी, वज्रश्रृंखला, भानुजा ?, जया, अनन्तमती, वैरोट्या, गौरी, महाकाली, काली, बुधदधी ?, प्रजापति ? बह्नि ?

श्री उमाकान्त शाह का विचार है कि उपर्युक्त यक्षी प्रतिमाएं तिलोयपण्णत्ती के अनुसार है और वे देवगढ़ की प्रतिमाओं के निर्माण से पश्चात् की तथा आशाधर से पूर्व की हैं। देवगढ में सरस्वती की चतुर्भुजा प्रतिमा १०७० ईस्वी मे निर्मित की गयी थी। वही समय सुमालिनी की प्रतिमा का भी है।

हिन्दू और बौद्ध प्रभाव

जैन शासनदेवताओं की सूची मे ब्रह्म, कुमार, षण्मुख, वरुण, ईशान, चामुण्डा, चण्डा, काली, महाकाली, गौरी आदि अनेक नाम ऐसे हैं जो हिन्दू देववाद में भी हैं। उसी प्रकार, तारा, भृकुटि, विद्युज्ज्वालाकराली, वज्रश्रृंखला, वज्रांकुशा, अपराजिता जैसे नाम बौद्धों की देवियों के है।

तांत्रिक युग मे जनसमुदाय को अपने धर्म के प्रति आकृष्ट करने के लिये अपने देवताओं को उच्च और उत्कृष्ट दिखाना आवश्यक हो गया था। महायानी बौद्धों ने हिन्दू देवताओं को अपराजिता जैसी देवियों द्वारा पददलित

१. अब इलाहाबाद संग्रहालय मे सुरक्षित।

किये जाने तक का प्रदर्शन किया था किन्तु जैनों ने वैसा न करके अन्य देवताओं को अपने तीर्थंकरों के रक्षक देवताओं के रूपमें स्वीकार कर लिया। इतना ही नहीं, तीर्थंकरों को भी ईशान, वामदेव, तत्पुरुष आदि नामों से विभूषित किया।

दूसरे ओर, ऐसी भी संभावना है कि जैनों और हिन्दुओं दोनों ने ही पूर्व परम्परा के कुछ देव-देवियों को समान रूप मे स्वीकार कर लिया हो। कुछ भी हो, इतना तो स्पष्ट है कि जैनों के अनेक यक्ष और यक्षियां या तो हिन्दू देवताओं के नामों मे साम्य रखते है या उनके रूप मे। कही कहीं तो नाम और रूप दोनों मे ही पूर्ण साम्य है। बौद्धों ने भी महाकाल, गणपति, सरस्वती, दिक्पाल, ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, कार्तिकेय, वाराही, चामुण्डा, भृंगि, नन्दिकेश्वर आदि विभिन्न देवताओं के साथ यक्ष,,किन्नर, गंधर्व,विद्याधर, नक्षत्र, तिथिदेवता आदि को स्वीकार किया था। वैसे ही जैनों ने भी दिक्पालों, गणपति, भैरव आदि को अपने देववाद में सम्मिलित किया और उन्हें भी जैनी बना लिया।

कुछ विशिष्ट यक्ष और देवियां

शासनदवताओं के अलावा और भी अनेक विशिष्ट विशिष्ट यक्षों तथा देवियों का उल्लेख और उनका वर्णन जैन ग्रन्थों में पाया जाता है। उन में दिगम्बर परम्परा के अनावृत और सर्वाह्ण यक्ष तथा श्वेताम्बर परम्परा के ब्रह्मशान्ति और तुम्बरु यक्ष प्रमुख हैं।

अनावृत यक्ष

अनावृत यक्ष व्यन्तर जाति के देवों में से है। उसका निवास मेरु पर्वत के ईशान भाग में, उत्तर कुरु के जंबू वृक्ष की पूर्व शाखा पर स्थित प्रासाद में बताया गया है। अनावृत यक्ष का वर्ण जलद के समान कृष्ण है। उसका वाहन पक्षीन्द्र गरुड है। अनावृत अपने चार हाथों में शंख, चक्र, कमण्डलु और अक्षमाला धारण करता है।[1]

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ३/२०१; प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३६३

सर्वाह्ण यक्ष

इस यक्ष की चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। अम्बिका से सम्बद्ध होने के कारण इसे गोमेध यक्ष का आद्य रूप कहा जा सकता है किन्तु इसका वाहन दिव्य श्वेत गज बताया गया है। सर्वाह्ण यक्ष का वर्ण श्याम है। इसके मस्तक पर धर्मचक्र स्थित होता है जिसे वह अपने दो हाथों से पकड़े रहता है; अन्य दो हाथ बद्धांजलिमुद्रा में हुआ करते है।

ब्रह्मशान्ति यक्ष

इस यक्ष का रूप तो विकराल है पर स्वभाव और कार्य अत्यन्त सौम्य। श्वेताम्बर परम्परा के ग्रन्थों में इसके स्वरूप का वर्णन मिलता है। तदनुसार इसका वर्ण पिंग है। भद्रासन पर स्थिति और पादुकारूढ़ होना ब्रह्मशान्ति यक्ष की विशेषता है। इसके मस्तक पर जटामुकुट, विकराल दाढ़ें और कन्धे पर उपवीत होता है। यक्षके दायें हाथों मे अक्षसूत्र और दण्डक तथा बायें हाथों मे कमण्डलु और छत्र होते है।[1]

तुम्बरु यक्ष

अर्हन्तदेव का प्रतीहार। जटामुकुटधारी, नरमुण्डमालाभूषित शिर, हाथ में खटवांग।[2] इस यक्ष का नाम शासन यक्षों की सूची मे भी मिलता है।

शान्ति देवी

यह देवी धवल वर्ण की है। निर्वाणकलिका में एक स्थल पर[3] इसके अनेक हाथ बताये गये हैं जिनमें वह वरदमुद्रा, कमल, पुस्तक, कमण्डलु आदि धारण करती है किन्तु उसी ग्रन्थ में अन्य स्थल पर[4] शान्ति देवता को कमलासना और चतुर्भुजा कहा गया है और उसके दायें हाथों के आयुध, वरद एवं अक्षसूत्र तथा बायें हाथों के आयुध कुण्डिका और कमण्डलु कहे गये है।

१. निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

२. निर्वाणकलिका, बिम्बप्रतिष्ठाविधि, पन्ना २०

३. बिम्बप्रतिष्ठाविधि, पन्ना १८

४. पन्ना ३७

कुबेरा यक्षी

सकलचन्द्रगणी के प्रतिष्ठाकल्प (पृष्ठ २०) में इस यक्षी को नरवाहना और अनंतांका बनाया गया है। यह मथुरा पुरी के सुपार्श्वस्तूप की रक्षिका यक्षी के रूप में प्रसिद्ध है।

षष्ठी

आचारदिनकर में[1] षष्ठी देवी का वर्ण श्याम और वाहन नर बताया है। षष्ठी का निवास आम्रवन में होता है। वह कदम्बवनों मे विहार करती है। उसके दो पुत्र उसके साथ रहते हैं।

कामचाण्डाली

मल्लिषेण ने कामचाण्डालीकल्प में इस तांत्रिक देवी के रूप का विचार किया है। वह कृष्णवर्णा, निर्वस्त्रा, मुक्तकेशा, सर्वाभरणभूषिता और चतुर्भुजा है। उसके आयुध फलक, कलश, शाल्मलिदण्ड और सर्प हैं।

सर्व एव हि जैनानां प्रमाणं लौकिको विधिः।
यत्र सम्यक्त्वहानिर्न यत्र न व्रतदूषणम्॥

१. उदय ३३, पन्ना १३

अष्टम अध्याय

क्षेत्रपाल

जैन मन्दिरों मे क्षेत्रपाल की प्रतिमाएं स्थापित रहती है। उन्हे जिन-मन्दिर का रक्षक माना जाता है। भट्ट अकलंक के प्रतिष्ठाकल्प में क्षेत्रपाल को जिनेश्वर और जैन मुनियो का भक्त एवं धर्मवत्सल कहा गया है। उन के जटामुकुट में जिनपूजा का चिह्न होना बताया गया है।[1]

नेमिचन्द्र ने क्षेत्रपाल को तैल से अभिषिंचित कर सिंदूर से धूसरित किये जाने का विधान किया है।[2] आचारदिनकर मे कुंकुम, तैल, सिन्दूर एवं लाल रंग के पुष्पों से क्षेत्रपाल की पूजा का विधान है। भट्ट अकलंक के प्रतिष्ठाकल्प में वर्णन है कि तैललिप्त विग्रह और सिंदूरांकित मौलि के कारण क्षेत्रपाल अंजनाद्रि के समान दिखायी पड़ते है।

क्षेत्रपाल की प्रतिमाएं कार्यरूप भी होती है और लिंगरूप भी।[3] खजुराहो के शान्तिनाथ मंदिर मे क्षेत्रपाल की चन्देलकालीन कार्यरूप प्रतिमा है जिस पर उनका नाम भी उत्कीर्ण है। अनेक जैन मंदिरो में लिंगरूप क्षेत्रपाल प्रतिष्ठित है।

आशाधर के अनुसार क्षेत्रपाल का अलंकरण नाग, और वाहन श्वान है। भट्ट अकलंक ने क्षेत्रपाल के नग्न, सारमेयसमारूढ, नागविभूषण, त्रिलोचन रूप का वर्णन किया है। आशाधर के अनुसार, क्षेत्रपाल के उपरले दो हाथों में तलवार और ढाल, नीचे के दायें हाथ मे काला कुत्ता और नीचे के ही बायें

१. हिन्दुओं में क्षेत्रपाल को शिव का रूप माना गया है। रूपमण्डन (५/७४-७५) के अनुसार क्षेत्रपाल नग्न एवं घण्टाभूषित होते हैं। उनकी जटाएं सर्प और मुण्डमाला मे ग्रथित होती है। उनका यज्ञोपवीत भी मुण्डग्रथित होता है। उनके दायें हाथों के आयुध कर्तिका और डमरू तथा बाये हाथों के आयुध शूल और कपाल बताये गये है।

२. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ११५-१६

३. आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना २१०

हाथ में गदा रहती है।[1] नेमिचन्द्र ने भी उपरले हाथों में तलवार और ढाल तथा निचले हाथों में काला कुत्ता और गदा, इन्हीं आयुधों का होना बताया है।[2] भट्ट अकलंक के प्रतिष्ठाकल्प में स्वर्णपात्र, गदा, डमरू और धेनुका ये चार आयुध कहे गये हैं। उनमें स्वर्णपात्र की कल्पना बिलकुल नवीन प्रतीत होती हैं और वह आशाधर एवं नेमिचन्द्र द्वारा दिये गये विवरणों से भिन्न है।

आचारदिनकर में क्षेत्रपाल के रूप का वर्णन विस्तार से किया गया है। वह वर्णन प्रायः वैसा ही है जो हिन्दू परम्परा के शिल्प ग्रन्थों में मिलता है। आचारदिनकर के अनुसार, क्षेत्रपाल की बीस भुजाएं हैं। वे कृष्ण, गौर, काञ्चन, धूसर और कपिल वर्ण के हैं। क्षेत्रपाल के अनेक नाम हैं जिनमें से एक प्रेतनाथ भी है। बर्बर केश, जटाजूट, वासुकि का जिनयज्ञोपवीत, तक्षक की मेखला, शेष (नाग) का हार, नाना-आयुध, सिंह चर्म का आवरण, प्रेत का आसन, कुक्कुरवाहन, त्रिलोचन, आनंदभैरव आदि अष्ट भैरवों से युक्त तथा चौंसठ जोगिनियों के बीच स्थिति, यह क्षेत्रपाल का रूप है जो आचारदिनकर में वर्णित है।[3]

निर्वाणकलिका में कहा है कि क्षत्र के अनुसार क्षेत्रपाल के भिन्न-भिन्न नाम हुआ करते हैं। उसी ग्रन्थ के अनुसार, क्षेत्रपाल श्यामवर्ण, बर्बर केश, आवृत्तपिंगनयन, विकृतदंष्ट्रा, पादुकारूढ़ और नग्न होते हैं। उनके दायें हाथों में मुद्गर, पाश और डमरू तथा बायें हाथों में श्वान, अंकुश और गेडिका, ये आयुध होते हैं।[4] निर्वाणकलिका में क्षेत्रपाल का स्थान जिनेन्द्र भगवान् के दक्षिण पार्श्व में ईशान की ओर दक्षिणदिशामुख बताया गया है। अमृतरत्नसूरि ने माणिभद्र आरती में मणिभद्र क्षेत्रपाल के छह हाथ और उन हाथों के आयुध ढक्का, शूल, दाम, पाश, अंकुश और खड्ग कहे है।

गणपति

गणपति या गणेश ने हिन्दुओं में ही नहीं, अपितु बौद्धों और जैनों में भी प्रतिष्ठा प्राप्त की है। प्रारंभ में जैनों ने उन्हें गणधर के रूप में मान्यता दी थी। आचारदिनकर (पन्ना २१०) में विद्यागणेश को द्विभुज, चतुर्भुज, षड्भुज, नवभुज, अष्टादशभुज और यहां तक कि १०८ भुजा युक्त भी कहा है।

---

१. प्रतिष्ठासारोद्धार, ६/५५
२. प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ११५-१६
३. उदय ३३, पन्ना १८१
४. निर्वाणकलिका, पन्ना ३८-३९

नवम अध्याय

अष्ट मातृकाएं

इन्द्राणी, वैष्णवी, कौमारी, वाराही, ब्रह्माणी, महालक्ष्मी, चामुण्डी और भवानी इन आठ देवियों की ख्याति मातृका नाम से है। इनमें से प्रथम चार की स्थापना दिशाओं में और अन्य चार की स्थापना विदिशाओं में की जाती है। जैन ग्रंथों में मातृकाओं के रूप का लगभग वैसा ही वर्णन प्राप्त होता है जैसा कि हिन्दू शिल्प ग्रंथों में है। कहीं कहीं चामुण्डा और महालक्ष्मी को छोड़कर छह मातृकाएं भी बतायी गयी हैं। शिल्प शास्त्रो मे मातृकाओं की सामान्य संख्या सात ही है पर कभी कभी वह संख्या सोलह तक बता दी जाती है।

इन्द्राणी

इन्द्राणी की स्थापना पूर्व दिशा में की जाती है। उसका वर्ण सोने के समान है। वह ऐरावत गज पर आसीन रहती है। इन्द्राणी का प्रमुख आयुध वज्र है।[1]

वैष्णवी

वैष्णवी की स्थापना वेदी की दक्षिण दिशा में की जाती है। वह देवी गरुडवाहना एवं नील वर्ण की मानी गयी है। वैष्णवी का मुख्य आयुध चक्र है।[2] आचारदिनकर में उसे श्याम वर्ण की तथा शंख, चक्र, गदा और शार्ङ्ग (खड्ग) धारिणी कहा है।[3]

कौमारी

वेदी की प्रतीची दिशा मे स्थित कौमारी प्रचण्डमूर्ति, विद्रुम वर्ण, मयूरवाहना और खड्गधारिणी है।[4] आचारदिनकर में उसे गौरवर्ण और षण्मुखा बताते हुए उसके आयुध शूल, शक्ति, वरद और अभय, ये चार कहे गये हैं।[5]

१, प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३६५। आचारदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

२. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ३६५

३. उदय ६, पन्ना १३

४. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ३६५

५. उदय ६, पन्ना १३

वाराही

उत्तर दिशा में स्थापित की जाने वाली वाराही का वर्ण श्याम है। वह वन्य वाराह पर सवारी करती है। उसके आयुध अभय और सीर (हल) हैं।[1] आचारदिनकर में वाराही का वाहन शेष (नाग), मुख वराह का तथा आयुध चक्र और खड्ग बताए गये है।[2]

ब्रह्माणी

ब्रह्माणी की स्थापना आग्नेय दिशा में की जाती है। उसका वर्ण पद्म जैसा लाल और यान भी पद्म ही है। ब्रह्माणी के हाथ में मुद्गर होता है।[3] आचारदिनकर के अनुसार ब्रह्माणी का वर्ण श्वेत, वाहन हंस एवं आयुध वीणा, पुस्तक, पद्म और अक्षसूत्र है।[4]

महालक्ष्मी/त्रिपुरा

भट्ट अकलंक के प्रतिष्ठाकल्प में महालक्ष्मी, नेमिचन्द्र के प्रतिष्ठातिलक में लक्ष्मी और आचारदिनकर में त्रिपुरा के नाम से इस मातृका का वर्णन है। नेमिचन्द्र के अनुसार लक्ष्मी दक्षिण-पश्चिम कोण में स्थित होती है। उसका वर्ण श्वेत, वाहन उलूक और मुख्य आयुध गदा है।[5] आचारदिनकर मे त्रिपुरा का वर्ण श्वेत, वाहन सिंह तथा आयुध, पद्म, पुस्तक, वरद और अभय बताये गये हैं।[6]

चामुण्डा

चामुण्डा या चामुण्डिका को वेदी के उत्तर-पश्चिम कोण मे स्थापित किया जाता है। मध्याह्न के सूर्य के समान दीप्त चामुण्डा प्रेतवाहना है। उसके आयुध दण्ड एवं शक्ति बताये गये हैं।[7] आचारदिनकर के अनुसार चामुण्डा का वर्ण धूसर और वाहन प्रेत है। उसका सम्पूर्ण शरीर शिराजाल से

---

१. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ३६६
२ उदय ६, पन्ना १३
३. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ३६६
४. उदय ६, पन्ना १२
५. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ३६६
६. उदय ६, पन्ना १३
७. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ३६६

कराल दिखायी पड़ता है; केशों से ज्वालाएं निकलती हैं। चामुण्डा त्रिनयना है। शूल, कपाल, खड्ग और प्रेतकेश (मुण्ड) इन्हें वह अपने हाथों में धारण करती है।[1]

भवानी/माहेश्वरी

वेदी के पूर्वोत्तर कोण में माहेश्वरी का स्थान होता है जिसे भवानी और रुद्राणी भी कहा जाता है। भवानी का वर्ण श्वेत, वाहन शात्कर और आयुध भिण्डिमाल है।[2] आचारदिनकर के अनुसार माहेश्वरी के आयुध, शूल, पिनाक, कपाल और खट्वांग हैं। माहेश्वरी का वर्ण श्वेत, वाहन वृषभ और नेत्र तीन हैं। उसके ललाट पर अर्धचन्द्र बताया गया है। गजचर्म से आवृत माहेश्वरी शेषनाग की मेखला धारण करती है।[3]

१. उदय ६, पन्ना १३

२. प्रतिष्ठातिलक, पन्ना ३६६

३. देवीमाहात्म्य आदि जैनेतर कृतियों में नारसिंही को भी मातृकाओं की सूची में सम्मिलित किया गया है किन्तु वह रूपमण्डन की सूची में नहीं है।

दशम अध्याय

दस दिक्पाल

जैन परम्परा में दिक्पालों की संख्या दस बतायी गयी है। ऊर्ध्व और अधो दिशाओं के दिक्पालों की कल्पना जैनों की अपनी विशेषता है।

कुछ विद्वान् दिक्पालों की कल्पना का आधार वैदिक संहिता को मानते हैं।[1] वैदिक देववाद में इन्द्र, अग्नि, वरुण, पवन, नैऋत्य आदि को महत्त्व का स्थान प्राप्त था पर जब पौराणिक देववाद को प्रधानता मिली तो वैदिक देवों का स्थान गौण हो गया और अन्ततोगत्वा वे दिक्पालों की श्रेणी में आ गये।

बताया जाता है कि प्रारंभ में चार ही दिक्पालों की गणना की जाती थी। पश्चात्काल में उनकी संख्या आठ हो गई। ऐसा भी मत है कि अष्ट दिक्पालों की पूर्व सूची में कुबेर और ईशान नहीं थे। उनके स्थान पर सूर्य और चन्द्र की गणना की जाती थी।

जैनों की प्रारंभिक सूची में भी चार लोकपालों या दिक्पालों का नाम मिलता है। तिलोयपण्णत्ती (तृतीय महाधिकार) में उल्लेख है कि भवनवासी देवों के इन्द्रों के सोम, यम, वरुण और धनद (कुबेर) नाम के चार लोकपाल होते हैं। जंबूदीपपण्णत्तिसंगहो[2] में सौधर्मकल्प के नगरों की चारों दिशाओं में यम, वरुण, सोम और कुबेर इन चार लोकपालों के निवास का उल्लेख है। वे इन्द्र के प्रतीन्द्र हुआ करते हैं। इस प्रकार सोम या चन्द्र को लोकपाल मानने की जैन मान्यता अधिक प्राचीन जान पड़ती है।

विष्णुधर्मोत्तर[3] ने चतुर्भुज लोकपालों की कल्पना की थी। अपराजित-पृच्छा और रूपमण्डन जैसे ग्रन्थों में चतुर्भुज लोकपालों की परम्परा का निर्वहन किया गया किन्तु अग्निपुराण[4], मानसोल्लास[5] और बृहत्संहिता[6] आदि से ज्ञात होता है कि लोकपालों के द्विभुज होने की मान्यता अधिक प्राचीन है। जैन परम्परा में भी दिक्पालों को द्विभुज माना गया है।

१. बनर्जी: डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृष्ठ ५२१
२. उद्देश्य ११, २१६–२१७।
३. ३/५०–५३
४. ५१/५६
५. १/३/७७२–७९८
६. ५७/४२/५७

जैनों ने अग्नि को रक्तवर्ण, यम, नैऋत्य और पवन को श्यामवर्ण, वरुण, ईशान, चन्द्र और धरणेन्द्र को श्वेत वर्ण तथा इन्द्र और कुबेर को स्वर्ण के समान पीत वर्ण माना है। श्वेताम्बर परम्परा में चन्द्र के स्थान पर ब्रह्मा को ऊर्ध्व दिशा का अधीश्वर कहा गया है जिसका वर्ण सुवर्ण के समान है।

वाहन

दिक्पालों के वाहनों के संबंध में जैनों की मान्यता प्राय: अग्निपुराण के[1] विधान से मिलती-जुलती है। केवल कुबेर के वाहन के संबंध में भिन्नता है। अग्नि पुराण में कुबेर को मेषस्थ बताया गया है[2] पर दिगम्बर जैन परम्परा के ग्रन्थों में उसे पुष्पक विमान में आसीन और श्वेताम्बर परम्परा के आचार-दिनकर में नरवाहन कहा गया है।[3] वसुनन्दि, आशाधर और नेमिचन्द्र ने वरुण का वाहन करिमकर कहा है जबकि अग्निपुराणमें वह मकर बताया गया है। अधिकतर प्रतिमाओं में वरुण का वाहन करिमकर रूप में मिलता है।

दिगम्बर जैन परम्परा के अनुसार ऊर्ध्व दिशा का लोकपाल सोम या चन्द्र सिंहासनारूढ़ होता है। श्वेताम्बर जैन परम्परा का ब्रह्मा हंसारूढ़ बताया गया है। अधोदिशा के लोकपाल नागेन्द्र धरण की सवारी आशाधर और नेमि-चन्द्र ने कच्छप बतायी है पर आचारदिनकर के अनुसार धरणेन्द्र पद्म पर आसीन है और कृष्ण वर्ण का है।

आयुध

दिगम्बर ग्रन्थों में इन्द्र को वज्री एवं अग्नि को अक्षसूत्र और कमण्डलु युक्त माना गया है। आचारदिनकर के अनुसार अग्नि के हाथों में धनुष और बाण होते हैं। निर्वाणकलिका ने धनुष के स्थान पर शक्ति बतायी है। मत्स्य-पुराण में अग्नि के आयुध अक्षसूत्र और कमण्डलु बताये गये हैं पर अग्निपुराणमें अग्नि को शक्तिमान् ही कहा है।

यम दण्डी हैं पर उनके द्वितीय आयुध के संबंध में मतवैषम्य है। आशाधर ने वह आयुध धनुष कहा है पर नेमिचन्द्र ने नाग। मत्स्यपुराण में यमके आयुध दण्ड और पाश बताये गये हैं।

---

१. अग्निपुराण,५१/१४-१५
२. वही, ५१/१५
३. नरवाहन कुबेर की परम्परा मत्स्यपुराण और विष्णुधर्मोत्तर की है। मत्स्यपुराणमें अग्निका वाहन अर्धचन्द्र है।

नैर्ऋत्य को जैन परम्परा में मुद्गरधारी बताया गया है। मत्स्यपुराण आदि में वे खड्गधारी हैं। निर्वाणकलिकाकार ने नैर्ऋत्य को खड्गधारी कहा है।

वरुण के हाथ में नागपाश या पाश होता है। वसुनन्दि आदि ने पवन का आयुध महावृक्ष बताया है पर आचारदिनकरकार ने पवन को ध्वजधारी कहा है जैसा कि अग्नि पुराण और मत्स्यपुराण में है।

अग्निपुराण में कुबेर का आयुध गदा बताया गया है। जैन लोग भी वैसा ही मानते हैं। आशाधर ने गदा और वसुनन्दि ने शक्ति आयुध का उल्लेख किया है। आचारदिनकरकार धनद को रत्नहस्त पर निर्वाणकलिकाकार कुबेर को गदापाणि कहते है।

ईशान शूल या त्रिशूल धारी है। आशाधर के अनुसार उनके द्वितीय हस्त में कपाल किन्तु आचारदिनकरकार के अनुसार पिनाक होता है।

चन्द्र के आयुध भाला और धनुष है। ब्रह्मा के हाथों में पुस्तक और कमल होने हैं।

धरणेन्द्र अंकुश और पाश धारण करते हैं। आचार दिनकर और निर्वाणकलिका के अनुसार उनके हाथमें सर्प होता है।

दिक्पालों की पत्नियां

शची, स्वाहा, छाया, निर्ऋति, वरुणानी, वायुवेगी, धनदेवी, पार्वती, रोहिणी और पद्मावती, ये क्रमशः इन्द्र, अग्नि, छाया, नैर्ऋत्य, वरुण, वायु कुबेर ईशान, सोम और धरणेन्द्र की पत्नियां कही गयी हैं। ब्रह्मा की पत्नी का उल्लेख नहीं है। विष्णुधर्मोत्तर में यम की पत्नी धूमोर्णा और कुबेर की पत्नी ऋद्धि कही गयी है।

दिक्कुमारिकाएं

हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी, इन छह कुलाचलों पर स्थित पद्म, महापद्म, तिगिंछ, केसरी, पुण्डरीक और महापुण्डरीक ह्रदों के[1] मध्य में स्थित अति विस्तीर्ण कमलों पर क्रमशः श्री, ह्री, धृति, कीर्त्ति, बुद्धि और लक्ष्मी, ये देवकन्याएं अपने सामानिक और पारिषत्कों के साथ निवास करती हैं।[2] ये तीर्थंकरों के गर्भ में आने पर जननी की सेवा किया करती हैं. यथा श्री चामर ढलाती है, ह्री छत्र तानती है आदि आदि।

---

१. जंबूदीपपण्णत्तिसंगहो, ३/६९

२. वही, ३/७८

उपर्युक्त देवियों मे से ह्री का वर्ण लाल बताया गया है। अन्य देव कन्याएं सुवर्ण के समान पीतवर्ण की है। नेमिचन्द्र ने इन देवियों को पुष्पमुखकलशकमलहस्ता लिखा है पर वसुनन्दि ने उन्हें पुष्पमुखकमलहस्ता और चतुर्भुजा बताया है।[1] आशाधर ने भी उसी प्रकार का वर्णन किया है।

तीर्थंकर जननी की सेवा करने वाली छप्पन दिक्कुमारियो का भी उल्लेख जैन ग्रन्थों में मिलता है। त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र में[2] उनकी सूची निम्न प्रकार दी गयी है।

आठ अधोलोकवासिनी : भोगंकरा, भोगवती, सुभोगा, भोगमालिनी, तोयधारा (सुव्रता), विचित्रा (वत्समित्रा), पुष्पमाला और अभिंदिता (नंदिता)

आठ ऊर्ध्वलोकवासिनी : मेघंकरा, मेघवती, सुमेधा, मेघमालिनी, तोयधारा, विचित्रा, वारिषेणा और बलाहिका

आठ पूर्व रुचकाद्रि स्थित : नंदा, उत्तरानंदा, आनंदा, आनंदवर्धना, विजया, वैजयन्ती, जयन्ती और अपराजिता

आठ दक्षिण रुचकाद्रि स्थित : समाहारा, सुप्रदत्ता, सुप्रबुद्धा, यशोधरा, लक्ष्मीवती, शेषवती, चित्रगुप्ता और वसुंधरा

आठ पश्चिम रुचकाद्रि स्थित : इलादेवी, सुरादेवी, पृथिवी, पद्मवती, एकनासा, अनवमिका, भद्रा और अशोका

आठ उत्तर रुचकाद्रि स्थित : अलंबुशा, मिश्रकेशी, पुण्डरीका, वारुणी, हासा, सर्वप्रभा, श्री, ह्री

चार विदिक् रुचक शैल से : चित्रा, चित्रकनका, सतेरा और सौत्रामणी

चार रुचक द्वीप से : रूपा, रूपांशिका, सुरूपा और रूपकावती।

१. वसुनन्दि/६

२. पर्व १, सर्ग १

एकादश अध्याय

नव ग्रह

सकलचन्द्र गणी के प्रतिष्ठाकल्प में आदित्य, चन्द्र, भौम, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु क्रमशः छठे तीर्थंकर पद्मप्रभ, अष्टम तीर्थंकर चन्द्रप्रभ, द्वादश तीर्थंकर वासुपूज्य, षोडश तीर्थंकर शान्तिनाथ, प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ, नवम तीर्थंकर सुविधिनाथ, बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ, बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ और तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के शासनवासी कहे गये हैं। आचारदिनकर[1] के अनुसार मार्तण्ड (सूर्य) की शान्ति के लिये पद्मप्रभ की, चन्द्र की शान्ति के लिये चन्द्रप्रभ की, भूमिपुत्र, (मंगल) की शान्ति के लिये वासुपूज्य की, बुध की शान्ति के लिये अष्ट जिनेन्द्र—विमलनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरनाथ, नमिनाथ और वर्धमान—की, बृहस्पति की शान्ति के लिये ऋषभनाथ, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ, सुपार्श्वनाथ, शीतलनाथ और श्रेयांसनाथ की, शुक्र की शान्ति के लिये सुविधिनाथ की, शनि की शान्ति के लिये मुनिसुव्रतनाथ की, राहु की शान्ति के लिये नेमिनाथ की और केतु की शान्ति के लिये मल्लिनाथ और पार्श्वनाथ की पूजा करनी चाहिये।

ग्रहों को सभी भारतीय धर्मों ने किसी न किसी रूप में मान्यता दी है।[2] जैन परम्परा में पूर्व में आठ ग्रहों की गणना की जाती थी। पश्चात्काल में उनकी संख्या नव हुयी। जे० एन० बनर्जी का मत है कि भारतीय मूर्ति विधान में अन्तिम ग्रह केतु बाद में जोड़ा गया था।[3]

आचारदिनकर ने सूर्य को पूर्व दिशा का अधीश, चन्द्र को वायव्य दिशा का, मंगल को दक्षिण दिशा का, बुध को उत्तर का, गुरु को ईशान का, शुक्र को आग्नेय का, शनि को पश्चिम का और राहु को नैऋत्य दिशा का अधीश बताया है जबकि उक्त ग्रन्थ के अनुसार केतु राहु का प्रतिच्छन्द है। सकलचन्द्र गणी के प्रतिष्ठाकल्प में चन्द्र को प्रतीची और मंगल को वारुण दिशा से सम्बद्ध किया गया है।

१. उदय ३८, शान्त्यधिकार।

२. बौद्धों ने भी नवग्रहों को स्वीकार किया है।

३. डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृष्ठ ४४४।

निर्वाणकलिका के अनुसार[1] सूर्य हिंगुलवर्ण, सोम और शुक्र श्वेतवर्ण, मंगल रक्तवर्ण, बुध और गुरु पीतवर्ण, शनि ईषत्कृष्ण, राहु अति कृष्ण और केतु धूमवर्ण है। आचारदिनकर में सूर्य[2] को स्फटिक के समान उज्ज्वल बताया गया है। सूर्य के वस्त्रों का रंग लाल, चन्द्र के श्वेत, मंगल के लाल, बुध के हरित, बृहस्पति के पीत, शुक्र के श्वेत, शनि के नील तथा राहु और केतु के वस्त्रों का रंग श्याम कहा गया है।

वाहन

आचारदिनकर में ग्रहों के वाहन इस प्रकार बताये गये है—

सूर्य	सप्ताश्व रथ
चन्द्र	अश्व
मंगल	भूमि
बुध	कलहंस
बृहस्पति	हंस
शुक्र	अश्व
शनि	कमठ
राहु	सिंह
केतु	पन्नग

सकलचन्द्र गणी ने सूर्य को गज वृषभसिंहतुरग वाहन, सोम को मृगवाहन, भौम को गजवाहन, बुध को केसरीवाहन, बृहस्पति को हंसगरुड-वाहन, शुक्र को शूकरवाहन और शनि को मेषवाहन कहा है। पंडित परमानंद की सिंहासनप्रतिष्ठा मे ग्रहों के वाहन भिन्न प्रकार से बताये गये है।

भुजाएं

सभी ग्रह द्विभुज निरूपित किए गये है। निर्वाणकलिका के अनुसार सूर्य के दोनों हाथों मे कमल हैं। अर्धकायरहित राहु के दोनों हाथ अर्घमुद्रा में होते है। अन्य सभी ग्रह अक्षसूत्र एवं कुण्डिका धारी है। सिंहासनप्रतिष्ठा में ग्रहों के आयुध भिन्न बताये गये है, यथा सोम कुन्तधारी, मंगल त्रिशूलधारी, बृहस्पति पुस्तकधारी, शुक्र अहिधारी आदि आदि। आचारदिनकर ने सूर्य को कमलहस्त, चन्द्र को सुधाकुम्भहस्त, मंगल को कुद्दालहस्त, बुध को पुस्तकहस्त, शुक्र को कुम्भहस्त, शनि को परशुहस्त, राहु को भी परशुहस्त और केतु को

१. पन्ना ३८

२. उदय ३३, पन्ना १८१।

पन्नगहस्त बताया है ।[1]

मूल जैन परम्परा में सूर्य चन्द्र आदि को ज्योतिष्क देवों के समूह में सम्मिलित किया गया है। ज्योतिष्क देवों के पांच समूह हैं, चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्णक तारा ।[2] चन्द्र ज्योतिष्क देवों का इन्द्र है और सूर्य प्रतीन्द्र है। प्रत्येक चन्द्र के अठासी ग्रह बताये गए हैं जिनमें से बुध, शुक्र, बृहस्पति, मंगल और शनि ये प्रथम पांच हैं।[3] प्रत्येक चन्द्र के २८ नक्षत्र होते हैं।[4] नक्षत्रों के आकार का वर्णन तिलोयपण्णत्ती में है।[5] नेमिचन्द्र के अनुसार चन्द्र सिंहाधिरूढ़ और कुन्त (भाला) धारी है। सूर्य अश्वारूढ़ है।[6]

———
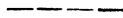
१. उदय ३३, पन्ना १८१ ।

२. तिलोयपण्णत्ती, ७।७

३. वही, ७।१४-२२

४. वही, ७।२५-२८

५. वही, ७।४६५-४६७

६. नेमिचन्द्र ने (प्रतिष्ठातिलक, पृष्ठ ३१९-३२२) यक्ष, वैश्वानर, राक्षस, नधृत, पन्नग, असुर, सुकुमार, पितृ, विश्वमालिनि, चमर, वैरोचन, महाविद्यामार, विश्वेश्वर, पिंडाशी, ये पंद्रह तिथिदेव बताये हैं।

परिशिष्ट एक

तालिका १

षोडश विद्यादेवियां

क्र०	नाम	परम्परा	शरीर का वर्ण	वाहन	भुजाओं की संख्या	आयुध
१.	रोहिणी	दिग०	सुवर्ण	कमलासना	चार	कलश, शंख, कमल, बीजपूर
		श्वे०	धवल	गोगामिनी	चार	धनुष, बाण, शंख, अक्षसूत्र
२.	प्रज्ञप्ति	दिग०	नील	अश्व	चार	चक्र, खड्ग, कमल, फल
		श्वे०	श्वेत	मयूर	चार	वरद, शक्ति, मातुलिंग, शक्ति,
		श्वे०	श्वेत	मयूर	दो	शक्ति और कमल
३.	वज्रशृंखला	दिग०	सुवर्ण	गज	दो	वज्र, शृंखला
		दिग०	सुवर्ण	गज	चार	वज्रशृंखला, शंख, कमल, बीजपूर
		श्वे०	सुवर्ण	पद्म	दो	शृंखला और गदा
		श्वे०	श्वेत	पद्म	चार	वरद, शृंखला पद्म, शृंखला
४.	वज्रांकुशा	दिग०	सुवर्ण	पुष्प	चार	अंकुश, कमल, बीजपूर, वीणा
		श्वे०	सुवर्ण	गज	चार	तलवार, वज्र, ढाल, भाला
		श्वे०	सुवर्ण	गज	चार	वरद, वज्र, मातुलिंग, अंकुश

५.	जांबूनदा	दिग०	सुवर्ण	केकि	चार	खड्ग, भाला, कमल, बीजपूर
	अप्रतिचक्रा (चक्रेश्वरी)	श्वे०	सुवर्ण	गरुड़	चार	चारों भुजाओंमें चक्र
६.	पुरुषदत्ता	दिग०	श्वेत	कोक	चार	वज्र, कमल, शंख, फल
		श्वे०	सुवर्ण	महिषी	दो	खड्ग और ढाल
		श्वे०	सुवर्ण	महिषी	चार	वरद, असि, मातुलिंग, खेटक
७.	काली	दिग०	सुवर्ण	मृग	चार	मूसल, असि, पद्म, फल
		श्वे.	कृष्ण	पद्म	दो	गदा और वज्र
		श्वे०	कृष्ण	पद्म	चार	अक्षसूत्र, गदा, वज्र, अभय
८.	महाकाली	दिग०	श्याम	शरभ	चार	धनुष, बाण, खड्ग, फल
		श्वे०	तमाल	नर	चार	अक्षसूत्र, वज्र, अभय, घण्टा
		श्वे०	श्वेत	नर	चार	अक्षसूत्र, वज्र, फल, घण्टा
९.	गौरी	दिग०	सुवर्ण	गोधा	चार	कमल आदि चार
		श्वे०	गौर	गोधा	चार	वरद, मूसल, अक्षमाला, कुवलय
१०.	गांधारी	दिग०	श्याम	कच्छप	दो	चक्र और खड्ग
		श्वे०	श्याम	कमल	दो	मूसल और वज्र
		श्वे०	श्याम	कमल	चार	वरद, मूसल, अभय, वज्र
११.	ज्वालामालिनी	दिग०	श्वेत	महिष	आठ	धनुष, बाण, खड्ग, खेटक, चक्र आदि
	ज्वाला	श्वे०	श्वेत	वराह	अनेक	विभिन्न आयुध

	ज्वाला	श्वे०	श्वेत	मार्जार	दो	दोनों भुजाओं में ज्वाला
१२.	मानवी	दिग०	नील	शूकर	चार	मत्स्य, खड्ग, त्रिशूल, X
		श्वे०	नील	सरोज	चार	वरद, पाश, अक्षसूत्र, वृक्ष
१३,	वैरोटी	दिग०	नील	सिंह	चार	दो सर्प, दो हाथ प्रणाममुद्रामें
	वैरोट्या	श्वे०	श्याम	अजगर	चार	खड्ग, सर्प, ढाल, सर्प
		श्वे०	गौर	सिंह	चार	खड्ग, ऊर्ध्वहस्त, सर्प ? वरद
१४.	अच्युता	दिग०	सुवर्ण	अश्व	चार	खड्ग, वज्र, दो हाथ प्रणाममुद्रामें
	अच्छुप्ता	श्वे०	विद्युत्वर्ण	अश्व	चार	बाण, खड्ग, धनुष, ढाल
		श्वे०	विद्युत्वर्ण	अश्व	चार	बाण, खड्ग, ढाल, सर्प
१५.	मानसी	दिग०	रक्त	सर्प	चार	दो हाथ प्रणाममुद्रामें
		श्वे०	सुवर्ण	हंस	दो	वरद, वज्र
		श्वे०	धवल	हंस	चार	वरद, वज्र, अक्षसूत्र, अशनि
१६.	महामानसी	दिग०	विद्रुम	हंस	चार	अक्षमाला, माला, वरद, अंकुश
		दिग०	विद्रुम	हंस	चार	दो हाथ प्रणाममुद्रामें
		श्वे०	धवल	सिंह	चार	वरद, असि, कुण्डिका, ढाल

तालिका २
चतुर्विंशति शासन यक्ष

क्र०	नाम	परम्परा	शरीर का वर्ण	वाहन	भुजाओं की संख्या	आयुध	विशेष
१.	गोमुख	दिग०	सुवर्ण	वृषभ	चार	परशु, बीजपूर, अक्षसूत्र, वरद	गोवक्त्र और मस्तक पर धर्मचक्र
		श्वे०	सुवर्ण	गज	चार	वरद, अक्षसूत्र, पाश, बीजपूर	
२.	महायक्ष	दिग०	सुवर्ण	गज	आठ	खड्ग, दण्ड, परशु, वरद, चक्र, त्रिशूल, कमल, अंकुश	चतुर्मुख
		श्वे०	श्याम	गज	आठ	वरद, मुद्गर, पाश, अक्षसूत्र, अभय, बीजपूर, अंकुश, शक्ति	
३.	त्रिमुख	दिग०	श्याम	मयूर	छह	दण्ड, त्रिशूल, कर्तिका, चक्र, असि, सृणि	त्रिमुख, त्रिलोचन
		श्वे०	श्याम	मयूर	छह	नकुल, गदा, अभय, बीजपूर, अक्षसूत्र, नाग	
४.	यक्षेश्वर	दिग०	श्याम	गज	चार	बाण, खड्ग, धनुष, ढाल	
	ईश्वर	श्वे०	श्याम	गज	चार	अक्षसूत्र, बीजपूर, नकुल, अंकुश	

५.	तुम्बरु	दिग०	श्याम	गरुड	चार	दो हाथों मे सर्प, वरद, फल	सर्पयज्ञोपवीत
		श्वे०	श्वेत	गरुड	चार	वरद, शक्ति, गदा, नागपाश	
६.	पुष्प	दिग०	श्याम	मृग	चार	खेट, अभय, कुन्त, वरद	
	कुसुम	श्वे०	नील	मृग	चार	फल, अभय, नकुल, अक्षसूत्र	
७.	मातंग	दिग०	श्याम	सिंह	दो	शूल, दण्ड	वक्रतुण्ड
		श्वे०	नील	गज	चार	विल्व, पाश, नकुल, अंकुश	
८,	श्याम	दिग०	श्याम	कपोत	चार	अक्षसूत्र, वरद, परशु, फल	
	विजय	श्वे०	नील	हंस	दो	चक्र और मुद्गर	
९.	अजित	दिग०	श्वेत	कूर्म	चार	अक्षसूत्र, वरद, शक्ति, फल	
		श्वे०	श्वेत	कूर्म	चार	बीजपूर, अक्षसूत्र, नकुल, कुन्त	
१०.	ब्रह्म	दिग०	श्वेत	पद्म	आठ	वाण, धनुष, परशु, दण्ड, तलवार, ढाल, वरद, वज्र	चतुर्मुख
		श्वे०	श्वेत	पद्म	आठ	बीजपूर, मुद्गर, पाश, अभय, नकुल, गदा, अंकुश अक्षसूत्र	चतुर्मुख
११.	ईश्वर	दिग०	श्वेत	वृषभ	चार	अक्षसूत्र, पद्म, त्रिशूल, दण्ड	
		श्वे०	श्वेत	वृषभ	चार	बीजपूर, गदा, नकुल, अक्षसूत्र	
१२.	कुमार	दिग०	श्वेत	हंस	छह	वाण, गदा, वरद, धनुष, नकुल, फल	त्रिमुख
		श्वे०	श्वेत	हंस	चार	बीजपूर, वाण, धनुष, नकुल	

१३.	षण्मुख	दिग०	हरित	मयूर	बारह	ऊपर के आठ हाथों में परशु, शेष चार हाथों में खड्ग, अक्षसूत्र, ढाल, दण्ड	छह मुख
	चतुर्मुख	दिग०	हरित	मयूर	बारह	उपर्युक्त प्रकार	चार मुख
	षण्मुख	श्वे०	श्वेत	मयूर	बारह	फल, चक्र, बाण, खड्ग, पाश, अक्षसूत्र, नकुल, चक्र, धनुष, ढाल, अंकुश, अभय	छह मुख
१४.	पाताल	दिग०	रक्त	मकर	छह	अंकुश, शूल, कमल, कशा, हल, फल	त्रिमुख
		श्वे०	रक्त	मकर	छह	पद्म, पाश, असि, नकुल, ढाल, अक्षसूत्र	त्रिमुख
१५.	किन्नर	दिग०	रक्त	मीन	छह	बीजपूर, गदा, अभय, नकुल, पद्म, अक्षसूत्र	त्रिमुख
		श्वे०	रक्त	कूर्म	छह	मुद्गर, अक्षसूत्र, वरद, चक्र, वज्र, अंकुश	त्रिमुख
१६.	गरुड	दिग०	श्याम	वराह	चार	वज्र, पद्म, चक्र, फल	शूकर मुख
		श्वे०	श्याम	वराह	चार	बीजपूर, कमल, अक्षसूत्र, नकुल	उपर्युक्त
१७.	गंधर्व	दिग०	श्याम	पक्षी	चार	दो हाथों में नागपाश, बाण, धनुष	
		श्वे०	श्याम	हंस	चार	वरद, पाश, बीजपूर, अंकुश	

१८.	खेन्द्र	दिग०	श्याम	शंख	बारह	बाण, कमल, फल, माला, अक्षसूत्र, अभय, धनुष, वज्र, पाश, मुद्गर, अंकुश, वरद	छह मुख
	यक्षेन्द्र	श्वे०	श्याम	शंख	बारह	बीजपूर, बाण, खड्ग, मुद्गर, पाश, अभय, नकुल, धनुष, ढाल, शूल, अंकुश, अक्षसूत्र	छह मुख
१९.	कुबेर	दिग०	इन्द्रधनुष	गज	आठ	कृपाण, बाण, पाश, वरद, ढाल, धनुष, दण्ड, पद्म	चतुर्मुख
		श्वे०	इन्द्रधनुष	गज	आठ	शूल, परशु, अभय, वरद, मुद्गर, अक्षसूत्र, बीजपूर, शक्ति	चतुर्मुख
२०.	वरुण	दिग०	श्वेत	वृषभ	चार	वरद, तलवार, ढाल, फल	अष्ट मुख
		श्वे०	श्वेत	वृषभ	आठ	बीजपूर, गदा, बाण, शक्ति, नकुल, पद्म, धनुष, परशु	चतुर्मुख
२१.	भृकुटि	दिग०	सुवर्ण	वृषभ	आठ	खेट, असि, धनुष, बाण, अंकुश, कमल, चक्र, वरद	चतुर्मुख
		श्वे०	सुवर्ण	वृषभ	आठ	बीजपूर, शक्ति, मुद्गर, अभय, नकुल, परशु, वज्र, अक्षसूत्र	चतर्मुख
२२.	गोमेद	दिग०	श्याम	नृवाहन पुष्पयान	छह	मुद्गर, कुठार, दण्ड, फल, वज्र, वरद	त्रिमुख

	गोमेध	श्वे०	श्याम	नरवाहन	छह	परशु, बीजपूर, चक्र, नकुल, शूल, शक्ति	त्रिमुख
२३.	धरणेन्द्र	दिग०	श्य म	कूर्म	चार	दो हाथो मे नाग, वर, नागपाश	सर्पफण
	पार्श्व	श्वे०	श्याम	कूर्म	चार	गदा, बीजपूर, सर्प, नकुल	गजमुख सर्पफण
		श्वे०	श्याम	कूर्म	चार	सर्प, बीजपूर, सर्प, नकुल	
२४.	मातंग	दिग०	मुद्ग	गज	दो	वरद और फल	मस्तक पर धर्मचक्र
		श्वे०	श्याम	गज	दो	नकुल और बीजपूर	

तालिका ३
चतुर्विंशति शासन यक्षियां

क्र०	नाम	परम्परा	शरीर का वर्ण	वाहन	भुजाओं की संख्या	आयुध	विशेष
१.	चक्रेश्वरी	दिग०	सुवर्ण	कमलासना	बारह	दो हाथो मे वज्र, आठ हाथों मे चक्र, वरद, फल	
		दिग०	सुवर्ण	गरुड	चार	दो चक्र, वरद, फल	
	अप्रतिचक्रा	श्वे०	सुवर्ण	गरुड	आठ	वरद, चक्र, पाश, बाण, धनुष, चक्र, अंकुश, वज्र	

२	रोहिणी	दिग०	सुवर्ण	लोहासना	चार	चक्र, शंख, अभय, वरद
	अजिता	श्वे०	धवल	लोहासना	चार	वरद, पाश, अंकुश, फल
३.	प्रज्ञप्ति	दिग०	श्वेत	पक्षी	छह	अर्धचन्द्र, परशु, फल, तलवार, तूम्बी, वरद
	दुरितारि	श्वे०	श्वेत	मेष	चार	वरद, अक्षसूत्र, फल, अभय
४.	वज्रशृंखला	दिग०	सुवर्ण	हंस	चार	नागपाश, अक्षसूत्र, फल, वरद
	कालिका	श्वे०	श्याम	पद्म	चार	वरद, पाश, नाग अंकुश
५.	पुरुषदत्ता	दिग०	सुवर्ण	गज	चार	चक्र, वज्र, फल, वरद
	महाकाली	श्वे०	सुवर्ण	पद्म	चार	पाश, वरद, अंकुश, बीजपूर
६.	मनोवेगा	दिग०	सुवर्ण	अश्व	चार	वरद, असि, ढाल, फल
	श्यामा	श्वे०	श्याम	नर	चार	पाश, वरद, बीजपूर, अंकुश
		श्वे०	श्याम	नर	चार	वरद, बाण, धनुष, अभय
		श्वे०	श्याम	नर	चार	वरद, पाश, धनुष, अभय
७.	काली	दिग०	श्वेत	वृषभ	चार	घण्टा, त्रिशूल फल, वरद
	शान्ता	श्वे०	पीत	गज	चार	वरद, अक्षसूत्र, शूल, अभय
८.	ज्वालामालिनी	दिग०	श्वेत	महिष	आठ	चक्र, धनुष, पाश, ढाल, त्रिशूल, बाण, मत्स्य, तलवार
	भृकुटि	श्वे०	पीत	वराह/बिडाल हंस	चार	खड्ग, मुद्गर, फलक, परशु
९.	महाकाली	दिग०	कृष्ण	कूर्म	चार	वज्र, फल, मुद्गर, वरद

	सुतारा	श्वे०	गौर	वृषभ	चार	वरद, अक्षसूत्र, कलश, अंकुश	
१०.	मानवा	दिग०	हरित्	शूकर	चार	माला, वरद, मत्स्य, फल	
	अशोका	श्वे०	हरित्	पद्म	चार	वरद, पाश, फल, अंकुश	
११.	गौरी	दिग०	सुवर्ण	मृग	चार	मुद्गर, कमल; कलश, वरद	
	मानवी	श्वे०	गौर	सिंह	चार	वरद, मुद्गर, कलश, अंकुश	
१२.	गांधारी	दिग०	हरित	मकर	चार	पद्म, वरद, कमल, मूसल	
	प्रचण्डा	श्वे०	श्याम	अश्व	चार	वरद, शक्ति, पुष्प, गदा	
१३.	वैरोटी	दिग०	हरित	अजगर	चार	दो हाथों मे सर्प, धनुष, बाण	
	विदिता	श्वे०	सुवर्ण	पद्म	चार	बाण, पाश, धनुष, नाग	
१४.	अनंतमती	दिग०	सुवर्ण	हंस	चार	धनुष, बाण, फल, वरद	
	अंकुशा	श्वे०	गौर	पद्म	चार	पाश, तलवार, अंकुश, ढाल	
१५.	मानसी	दिग०	प्रवाल	व्याघ्र	छह	कमल, धनुष, वरद, अंकुश, बाण, कमल	
	कन्दर्पा	श्वे०	गौर	मत्स्य	चार	उत्पल, अंकुश, पद्म, अभय	
१६.	महामानसी	दिग०	सुवर्ण	मयूर	चार	फल, चक्र, खड्ग, वरद	
	निर्वाणी	श्वे०	गौर	पद्म	चार	पुस्तक, उत्पल, कमण्डलु, कमल	
१७.	जया	दिग०	सुवर्ण	शूकर	चार	शंख, असि, चक्र, वरद	
	विजया	श्वे०	गौर	मयूर	चार	बीजपूर, शूल, मुषण्ढी, पद्म	
१८.	तारावती	दिग०	सुवर्ण	हंस	चार	सर्प, वज्र, मृग, वरद	
	धारिणी	श्वे०	कृष्ण	पद्म	चार	बीजपूर, कमल, पाश, अक्षसूत्र	
१९.	अपराजिता	दिग०	हरित	अष्टापद	चार	ढाल, तलवार, फल, वरद	
	वैरोट्या	श्वे०	कृष्ण	पद्म	चार	वरद, अक्षसूत्र, बीजपूर, शक्ति	
२०	बहुरूपिणी	दिग०	पीत	नाग	चार	ढाल, तलवार, फल, वरद	अष्टानना
	नरदत्ता	श्वे०	गौर	भद्रासन	चार	वरद, अक्षसूत्र, बीजपूर, शूल	
२१	चामुण्डा	दिग०	हरित	मकर	चार	यष्टि, ढाल, अक्षसूत्र, तलवार	चतुर्मुख

	गांधारी	श्वे०	श्वेत	हंस	चार	वरद, खड्ग, बीजपूर, कुम्भ	
		श्वे०	श्वेत	हंस	चार	वरद, खड्ग, शकुन्त, कुम्भ	
		श्वे०	श्वेत	हंस	चार	वरद, खड्ग, बीजपूर, बीजपूर	
२२	आम्रा	दिग०	हरित	सिंह	दो	आम्रस्तवक, पुत्र शुभंकर का हाथ छूती हुई	आम्र वृक्ष की छाया में दो पुत्रों के साथ स्थित
	अम्बिका	श्वे०	पीत	सिंह	चार	बीजपूर, पाश, पुत्र, अंकुश	
		श्वे०	पीत	सिंह	चार	आम्राली, पाश, पुत्र, अंकुश	
२३.	पद्मावती	दिग०	रक्त	पद्म	चार	अंकुश, अक्षसूत्र, कमल, वरद	त्रिफणसर्पमौलि
		दिग०	रक्त	पद्म	छह	पाश, अक्षसूत्र, कुन्त, अर्धचन्द्र, गदा, मूसल	
		दिग०	रक्त	पद्म	आठ	यथोचित	
		दिग०	रक्त	पद्म	चौबीस	विभिन्न	
		श्वे०	सुवर्ण	कुक्कुटसर्प	चार	पद्म, पाश, फल, अंकुश	
२४.	सिद्धायिका	दिग०	सुवर्ण	भद्रासन, सिंह	दो	वरद और पुस्तक	
		श्वे०	हरित्	सिंह	चार	पुस्तक, अभय, बीजपूर, वीणा	
		श्वे०	हरित्	गज	चार	पुस्तक अभय, पाश, कमल	

तालिका ४

नाम	परम्परा	शरीर का वर्ण	वाहन	भुजाओं की संख्या	आयुध	विशेष
क्षेत्रपाल	दिग०	श्याम	श्वान	चार	तलवार, ढाल, काला कुत्ता, गदा	नाग अलंकरण त्रिनेत्र

क्षेत्रपाल	श्वे०	विभिन्न	श्वान	बीस	विभिन्न	
	श्वे०	श्याम	श्वान	छह	मुद्गर, पाश, डमरू, श्वान, अंकुश, गेडिका।	
	श्वे०	श्याम	श्वान	छह	ढक्का, शूल, माला, पाश, अंकुश, खड्ग	
अनावृत यक्ष	दिग०	कृष्ण	गरुड	चार	शंख, चक्र, कमण्डलु, अक्षमूत्र	
सर्वाह्ण यक्ष	दिग०	श्याम	श्वेत गज	चार	दो हाथ बद्धांजलि दो हाथों मे धर्मचक्र सम्हाले	मस्तक पर धर्मचक्र
ब्रह्मशान्ति यक्ष	श्वे०	पिंग	भद्रासन पादुकारूढ	चार	अक्षसूत्र, दण्ड, कमण्डलु, छत्र	विकराल दाढ़ें

———

परिशिष्ट दो

जैन प्रतिमा लक्षण

श्रुतदेवता

श्रुतदेवता श्वेतवर्णा श्वेतवस्त्रधारिणी हंसवाहना श्वेतसिंहासनासीना भामण्डलालंकृता चतुर्भुजा श्वेताब्जवीणालंकृतवामकरा पुस्तकमुक्ताक्षमालालंकृत-दक्षिणकरा......

आचारदिनकर उदय ३३, पन्ना १५५

श्रुतदेवतां शुक्लवर्णां हंसवाहनां चतुर्भुजां वरदकमलान्वितदक्षिणकरां पुस्तकाक्षमालान्वितवामकरां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

दक्षिणपार्श्वासीनधवलमूर्तिवरदपद्माक्षसूत्रपुस्तकालंकृतानेकपाणि-द्वादशाङ्गश्रुतदेवाधिदेवते सरस्वत्यै स्वाहा ।

निर्वाणकलिका, पन्ना १७

अभयज्ञानमुद्राक्षमालापुस्तकधारिणी ।
त्रिनेत्रा पातु मां वाणी जटाभालेंदुमण्डिता ।।

मल्लिषेण, भारतीकल्प, १-२

सितांबरां चतुर्भुजां सरोजविष्टरसंस्थिताम् ।
सरस्वती वरप्रदामहर्निशं नमाम्यहम् ।।

मल्लिषेण, भारतीकल्प

चंचच्चन्द्ररुचं कलापिगमनां यः पुण्डरीकासना
सज्ज्ञानाभयपुस्तकाक्षवलयप्रावाररराज्युज्ज्वलाम् ।
त्वामध्येति सरस्वति त्रिनयनां ब्राह्मे मुहूर्ते मुदा
व्याप्ताशाधरकीर्तिरस्तु सुमहाविद्यः स वंद्यः सदा ।।

मलयकीर्ति, सरस्वतीकल्प

विद्यादेवियां

रोहिणी प्रज्ञप्तिर्वज्रश्रृङ्खला कुलिशाङ्कुशा ।
चक्रेश्वरी नरदत्ता काल्यथासौ महापरा ।।
गौरी गान्धारी सर्वास्त्रमहाज्वाला च मानवी ।
वैरोट्याच्छुप्ता मानसी महामानसिकेति ताः ।।
वाग् ब्राह्मी भारती गौर्गीर्वाणी भाषा सरस्वती ।
श्रुतदेवी वचनं तु व्याहारो भाषितं वचः ।।

अभिधानचिन्तामणि, देवकाण्ड (द्वितीय)

१. रोहिणी

सकुंभशंखाब्जफलांबुजस्थाश्रिताच्यँमे रोहिणि रुक्मवक्त्रम् ।

आशाधर, ३/३७

दोर्भिर्चतुर्भिः कलशं दधाना शंखं पयोजं फलपूरमुद्धं ।
सद्दृष्टिसंसिद्धजिनानुरागा या रोहिणी तां प्रभजामि देवीम् ।।

नेमिचन्द्र, पृष्ठ २८४

ओं सुवर्णवर्णे चतुर्भुजे शंखपद्मफलहस्ते कमलासने रोहिणि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

शंखाक्षमालाशरचापशालिचतुःकरा कुन्दतुषारगौरा ।
गोगामिनी गीनवरप्रभावा श्रीरोहिणी सिद्धिमिमां ददातु ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

तत्राद्या रोहिणी धवलवर्णा सुरभिवाहना चतुर्भुजा-
मक्षसूत्रबाणान्वितदक्षिणपाणि शंखधनुर्युक्तवामपाणि चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

२. प्रज्ञप्ति

तद्भाक्तिका श्यश्वगनेलिनीला प्रज्ञप्तिकेर्चामि सचक्रखड्गाम् ।

आशाधर

दृष्ट्यादिसम्यग्विनयानुरागां चक्रं समाक्रांतविरोधिचक्रम् ।
खड्गं पयोजं फलमुद्वहन्ती प्रज्ञप्तिमर्चामि धृताहंताज्ञाम् ।।

नेमिचन्द्र, २८४

श्रो श्यामवर्णे चतुर्भुजे रत्नंहु ? हस्ते प्रज्ञप्ते आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

शक्तिसरोरुहहस्ता मयूरकृतयानलीलया कलिता ।
प्रज्ञप्तिर्विज्ञप्तिं शृणोतु नः कमलपत्राभा ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

प्रज्ञप्ति श्वेतवर्णा मयूरवाहनां चतुर्भुजां वरदशक्तियुक्तदक्षिणकरां मातुलिंगशक्तियुक्तवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

३. वज्रशृंखला

शीलव्रताभा जिनभावनास्था बिभर्त्ति दोर्भिः पविश्रृंखलां या ।
शंखं सरोजं वरबीजपूरमाराधयामः पविश्रृखला ताम् ।।

नेमिचन्द्र, २८५

श्रो सुवर्णवर्णे चतुर्भुजे श्रृंखलहस्ते वज्रशृंखले आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

सश्रृंखलगदाहस्ता कनकप्रभविग्रहा ।
पद्मासनस्था श्रीवज्रश्रृखला हन्तु नः खलान् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

वज्रशृंखला शंखावदाता पद्मवाहना चतुर्भुजा वरदश्रृखलान्वितदक्षिणकरां पद्मश्रृंखलाधिष्ठितवामकरा चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

४. वज्रांकुशा

या सुप्रमोदा सुतरामभीक्ष्णं ज्ञानोपयोगोत्तमभावनायाम् ।
घृताकुशाम्भोजसुबीजपूरा वज्रांकुशा तामिह यायजीमि ।।

नेमिचन्द्र, २८५

श्रो अंजनवर्णे चतुर्भुजे अंतुजाहस्ते वज्रांकुशे आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

निस्त्रिंशवज्रफलकोत्तमकुन्तयुक्तहस्ता सुतप्तविलसत्कलधौतकान्तिः
उन्मत्तदन्तिगमना भुवनस्य विघ्नं वज्रांकुशी हरतु वज्रसमानशक्तिः।।

आचारदिनकर, उदय ३६, पन्ना १६२

वज्रांकुशां कनकवर्णां गजवाहनां चतुर्भुजां वरदवज्रयुतदक्षिणकरां मातुलिंगांकुशयुक्तवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

५. जाम्बूनदा/अप्रतिचक्रा

सद्धर्मतत्फलजरागभवार्तिभीतिस्वरूपसंवेगविभावनोत्काम् ।
सखड्गकुंतांबुजबीजपूरां जांबूनदां भक्तहितां यजामि ।।

नेमिचन्द्र, २८५

ओं कनकवर्णे चतुर्भुजे करवालहस्ते जांबूनदे आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

गरुत्मत्पृष्ठ आसीना कार्तस्वरसमच्छविः ।
भूयादप्रतिचक्रा नः सिद्धये चक्रधारिणी ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

अप्रतिचक्रा तडिद्वर्णा गरुडवाहनां चतुर्भुजां चक्रचतुष्टयभूषितकरां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

६. पुरुषदत्ता

कोकश्रितां वज्रसरोजहस्तां यजे सितां पुरुषदत्तिके त्वाम् ।

आशाधर, ३/४२

धीसंयमत्यागविभावनाप्तश्रीतीर्थकृन्नामजिनांघ्रिभक्ताम् ।
वज्राब्जशंखोद्धफलांकहस्ता यजामहे पुरुषदत्तिके त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, २८६

ओ गवलनिभे चतुर्भुजे वज्रहस्ते पुरुषदत्ते आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

खड्गस्फरांकितकरद्वयशाममाना मेघाभसैरिभपटुस्थितिभासमाना ।
जात्यार्जुनप्रभतनुः पुरुषाग्रदत्ता भद्रं प्रयच्छतु सतां पुरुषाग्रदत्ता ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

पुरुषदत्तां कनकावदाता महिषीवाहनां चतुर्भुजां वरदासि-युक्तदक्षिणकरा मातुलिंगखेटकयुतवामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

७. काली

तप्त्वा तपो दुश्चमराय पुण्यं यस्तीर्थकृन्नाम तमर्चयंतीम् ।
कालीं यजामो मुसलासिपद्मफलोल्लसद्दोर्जयदोश्चतुष्काम् ।।

नेमिचन्द्र, २८७

ओं हेमप्रभे चतुर्भुजे मुसलहस्ते कालि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

शरदम्बुधरप्रमुक्तचञ्चद्गगनतलाभतनुद्युतिर्दयाढ्या ।
विकचकमलवाहना गदाभृन् कुशलमलंकुरुतात् सदैव काली ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

कालीदेवी कृष्णवर्णा पद्मासनां चतुर्भुजा अक्षसूत्रगदालंकृतदक्षिणकरां वज्राभययुतवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

८. महाकाली

भक्त्यन्विता साधुसमाधिरूपसद्भावनासिद्धजिनांघ्रिपद्मे ।
चापं फलं बाणमसिं बभार या तां महाकालिमहं यजामि ।।

नेमिचन्द्र, २८६

ओं कृष्णवर्णे चतुर्भुजे वज्रहस्ते महाकालि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

नरवाहना शशधरोपलोज्ज्वला रुचिराक्षसूत्रफलविस्फुरत्करा ।
शुभघंटिकापविवरेण्यधारिणी भुवि कालिका शुभकरा महापरा ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

महाकालीं देवीं तमालवर्णां पुरुषवाहनां चतुर्भुजां अक्षसूत्रवज्रान्वित दक्षिणकरामभयघण्टालंकृतवामभुजां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

९. गौरी

यस्तीर्थकृन्नाम बबंध वैयावृत्ये स्फुरद्भावनयाग्रपुण्यम् ।
तं सेवमानामरविंदहस्तामाराधयामो वरगौरिदेवीम् ।।

नेमिचन्द्र, २८७

ओं हेमवर्णे चतुर्भुजे पद्महस्ते गौरि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

गोधासनसमासीना कुन्दकर्पूरनिर्मला ।
सहस्रपत्रसंयुक्तापाणिर्गौरी श्रियेस्तु नः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

गौरी देवी कनकगौरीं गोधावाहनां चतुर्भुजां वरदमुसलयुत–
दक्षिणकरामक्षमालाकुवलयालंकृतवामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

१०. गांधारी

योर्हन्महाभक्तिभरात्सपुण्यैरचिन्त्यमार्हन्त्यमुपाससाद ।
तत्पादभक्तां धृतचक्रखड्गां गांधारि गंधादिभिरर्चये त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, २८७

ओं भ्रमरवर्णे चतुर्भुजे चक्रहस्ते गांधारि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

शतपत्रस्थितचरणा मुसलं वज्रं च हस्तयोर्दधती ।
कमनीयांजनकान्तिर्गान्धारी गां शुभां दद्यात् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

गाधारीदेवी नीलवर्णां कमलासनां चतुर्भुजां वरदमुसलयुतदक्षिणकरां
अभयकुलिशयुतवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७-३८

११. ज्वालामालिनी /ज्वाला

आचार्यभक्त्योद्यदगण्यपुण्यमर्हन्तमर्हन्त्यनुरागयोगात् ।
कोदंडकांडादियुताष्टबाहुं ज्वालोज्ज्वलज्ज्वालिनि पूजये त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, २८७

ओं श्वेतवर्णे अष्टभुजे धनुखड्गबाणखेटहस्ते ज्वालामालिनि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

मार्जारवाहना नित्यं ज्वालोद्भासिकरद्वया ।
शशाङ्कधवला ज्वालादेवी भद्रं ददातु नः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६२

सर्वास्त्रमहाज्वालां धवलवर्णां वराहवाहनां असंख्यप्रहरणयुतहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

१२. मानवी

बहुश्रुतेष्वाहितभक्तिमीशं भक्त्या भजंती झषमुद्वहन्तीम् ।
घोरं करालं करवालमुग्रत्रिशूलकं मानवि मानये त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, २८८

ओं शिखिकंठनिभे चतुर्भुजे त्रिशूलहस्ते मानवी आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

नीलांगी नीलसरोजवाहना वृक्षभासमानकरा ।
मानवगणस्य सर्वस्य मङ्गलं मानवी दद्यात् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १६२

मानवी श्यामवर्णा कमलासनां चतुर्भुजा वरदपाशालंकृतदक्षिणकरां अक्षसूत्रविटपालंकृतवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पत्रा ३८

१३. वैरोटी /वैरोट्या

यः श्रद्धया प्रत्ययरोचनाभ्यां स्पृष्टया जिनागममेव भेजे ।
तमानमंतीमहिमुद्वहन्तीमर्चामि वैरोटि हटत्त्विषम् ताम् ।।

नेमिचन्द्र, २८८

ओं जलदप्रभे चतुर्भुजे सर्पहस्ते वैरोटि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

खड्गस्फुरत्स्फुरितवीर्यवदूर्ध्वहस्ता सद्न्दयूकवरदापरहस्तयुग्मा ।
सिंहासनाब्जमुदतारतुषारगौरा वैरोट्ययाऽयभिधयास्तु शिवाय देवी ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १६३

वैरोट्यां श्यामवर्णां अजगरवाहनां चतुर्भुजां खड्गोरगालंकृतदक्षिणकरां खेटकाहियुतवामकरां चेति ।

निर्वाणकलिका, पत्रा ३८

१४. अच्युता /अच्छुप्ता

आवश्यकम्यापरिहाणिमुच्चैश्चचार षड्भेदवती वशी यः ।
तमच्युतं सादरमर्चयंती त्वामच्युते खड्गभुजं यजामि ।।

नेमिचन्द्र, २८८

ओं जांबूनदप्रभे चतुर्भुजे वज्रहस्ते अच्युते आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

सव्यपाणिधृतकार्मुकरफरान्यस्फुरद्विशिखखड्गधारिणी ।
विद्युदाभतनुरश्ववाहनाऽच्छुप्तिका भगवती ददातु शम् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६३

अच्छुप्तां तड्द्विर्णा तुरगवाहनां चतुर्भुजां खड्गवाणयुतदक्षिणकरां खेटकाहियुतवामकरां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

१५. मानसी

तपःश्रुताद्यैविनतान मार्गप्रभावनां यो वृषनीतभव्यः ।
तस्य प्रणामप्रवणां प्रणाममुद्रान्वितां मानसि मानये त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, २८६

ओं रत्नप्रभे चतुर्भुजे नमस्कारमुद्रासहिते मानसि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

हंसासनसमासीना वरदेन्द्रायुधान्विता ।
मानसी मानसीं पीडां हन्तु जाम्बूनदच्छविः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६३

मानसी धवलवर्णा चतुर्भुजां वरदवज्रालंकृतदक्षिणकरा अक्षवलयाशनियुक्तवामकरा चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

१६. महामानसी

साधर्मिकेष्वाहितवत्सलत्वमाराधयंती विभुमक्षमालाम् ।
मालां वर चाकुशमादधानां मान्ये महामानसि मानये त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, २८६

ओं विद्रुमवर्णे चतुर्भुजे प्रणाममुद्रासहिते महामानसि आगच्छ ।

वसुनन्दि, ६

करखड्गरत्नवरदाढ्यपाणिभृच्छशिनिभा मकरगमना ।
संघस्य रक्षणकरी जयति महामानसी देवी ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १६३

महामानसीं देवी धवलवर्णां सिंहवाहनां चतुर्भुजां वरदासियुक्त–दक्षिणकरां कुण्डिकाफलकयुतवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

शासन देवता

आपदाकुलितोपि दार्शनिकः तन्निवृत्त्यर्थम् ।
शासनदेवतादीन् कदाचिदपि न भजते पाक्षिकस्तु भजत्यपि ।।

सागारधर्मामृत

यक्षं च दक्षिणे पार्श्वे वामे शासनदेवताम् ।
लाञ्छनं पादपीठाधः स्थापयेत्यस्य यद्भवेत ।।

वसुनन्दि, ५/१२

यक्षाणां देवतानाञ्च सर्व्वालंकारभूषितम् ।
स्ववाहनायुधोपेतं कुर्यात्सर्वाङ्गसुन्दरम् ।।

वसुनन्दि, ४/७१

चतुर्विंशति यक्ष

गोवदणमहाजक्खा तिमुहो जक्खेसरो य तुंबुरओ ।
मादंगविजय अजिओ बम्हो बम्हेसरो य कोमारो ।।
छम्मुहओ पादालो किण्णरकिंपुरुसगरुडगंधव्वा ।
तह य कुबेरे वरुणो भिउडीगोमेधपासमातंगा ।।
गुज्भकओ इदि एदे जक्खा चउवीस उसहपहुदीणं ।
तित्थयराणं पासे चेट्ठंते भत्तिसंजुत्ता ।।

तिलोयपण्णत्ती, ४/९३४–३६

जक्ख गोमुहमहज्जक्ख तिमुह ईसर स तंबरू कुसुमो ।
मायंगो विजयाजिय बंभो मणुओ सुरकुमारो ।।
छम्मुह पयाल किन्नर गरुडो गंधव्व तहय जक्खिदो ।
कूबर वरुणो भिउडी गोमेहो वामण मयंगो ।।

प्रवचनसारोद्धार, द्वार २६/३७५–३७६

स्याद्गोमुखो महायक्षस्त्रिमुखो यक्षनायकः ।।
तुम्बरुः सुमुखश्चापि मातंगो विजयोजितः
ब्रह्मा यक्षेट् कुमारः षण्मुखपातालकिन्नराः ।।
गरुडो गन्धर्वो यक्षेट् कुबेरो वरुणोपि च ।
भृकुटिर्गोमेधः पार्श्वो मातंगोर्ऽहदुपासकाः ।।

अभिधानचिन्तामणि, देवाधिदेवकाण्ड प्रथम । ४१–४३

वृषवक्त्रो महायक्षस्त्रिमुखश्चतुराननः ।
तुम्बरुः कुसुमाख्यश्च मातंगो विजयस्तथा ।।
जयो ब्रह्मा किन्नरेशः कुमारश्च तथैव च ।
षण्मुखः पातालयक्षः किन्नरो गरुडस्तथा ।।
गन्धर्वश्च यक्षेशः कुबेरो वरुणस्तथा ।
भृकुटिश्चैव गोमेधः पार्श्वो मातंग एव च ।।
यक्षाश्चतुर्विंशतिकाः ऋषभादेर्यथाक्रमम् ।
भेदांश्च भुजशस्त्राणां कथयामि समासतः ।।

अपराजितपृच्छा । २२१/३९–४२

१. गोमुख

सव्येतरोर्ध्वकरदीप्रपरश्वधाक्ष
सूत्रं तथाधरकरांकफलेष्टदानम् ।
प्राग्गोमुखं वृषमुखं वृषगं वृषांक-
भक्तं यजे कनकभं वृषचक्रशीर्षम् ।।

आशाधर, ३/१२९

वामान्योर्ध्वकरद्वयेन परशुं धत्तेक्षमालामधः
सव्यासव्यकरद्वयेन ललितं यो बीजपूरं वरम् ।
तं मूर्ध्ना कृतधर्मचक्रमनिशं गोवक्त्रकं गोमुखं
श्रीनाभेयजिनेन्द्रपादकमलालोलालिमालापये ।।

नेमिचन्द्र, ३३१

चतुर्भुजः सुवर्णाभ समुखो वृषवाहनः ।
हस्ते परशुं धत्ते बीजपूराक्षसूत्रकम् ।।
वरदानपरः सम्यक् धर्मचक्रं च मस्तके ।
संस्थाप्यो गोमुखो यक्ष आदिदेवस्य दक्षिणे ।।

वसुनन्दि, ५/१३–१४

स्वर्णाभो वृषवाहनो द्विरदगोयुक्तश्चतुर्बाहुभि:
बिभ्रद्दक्षिणहस्तयोश्च वरदं मुक्ताक्षमालामपि ।
पाशं चापि हि मातुलिङ्गसहितं पाण्योर्वहन् वामयो:
संघं रक्षतु दाक्ष्यलक्षितमतिर्यक्षोत्तम: गोमुख: ।।

आचारदिनकर, ३३, पन्ना १७४

तत्तीर्थोत्पन्नगोमुखयक्षं हेमवर्णं गजवाहनं चतुर्भुजं
वरदाक्षसूत्रयुतदक्षिणपाणिं मातुलिङ्गपाशान्वितवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३४

वराक्षसूत्रे पाशश्च मातुलिंगं चतुर्भुज: ।
श्वेतवर्णो वृषमुखो वृषभासनसंस्थित: ।।

अपराजितपृच्छा, २२१/४३

ऋषभे गोमुखे यक्षो हेमवर्णो गजानन: ।
वरोक्षसूत्रं पाशञ्च बीजपूरं करेषु च ।।

रूपमण्डन, ६/१७

२. महायक्ष

चक्रत्रिशूलकमलांकुशवामहस्तो
निस्त्रिंशदंडपरशूद्यवरान्यपाणि: ।
चामीकरद्युतिरिभांकनतो महादि-
यक्षोर्च्यतो हि जगनश्चतुराननोसौ ।।

आशाधर, ३/१३

चक्रं त्रिशूलं कमलं सृणिं वै खड्गं च दंडं परशुं प्रधा(दा)नम् ।
बिभ्राणमिष्टाजिननाथपादं यजे महायक्ष चतुर्मुखं त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, ३३१

अजितस्य महायक्षो हेमवर्णश्चतुर्भुज: (र्मुख:) ।
गजेन्द्रवाहनारूढ: स्वोचिताष्टभुजायुध: ।।

वसुनन्दि, ५/१७

द्विरदगमनकृच्छितिश्चाष्टबाहुष्चतुर्वक्त्रभाग्मुद्गरं
वरदमपि च पाशमक्षावलिं दक्षिणे हस्तवृन्दे वहन् ।
अभयमविकलं तथा मातुलिंगं सृणिशक्तिमाभासयत्
सततमतुलं वामहस्तेषु यक्षोत्तमोसौ महायक्षकः।।

आचारदिनकर, उदय ३३,पन्ना १७४

तथा तत्तीर्थोत्पन्नं महायक्षाभिधानं यक्षेश्वरं चतुर्मुखं
श्यामवर्णं मातङ्गवाहनमष्टपाणिं वरदमुद्गराक्षमूत्र-
पाशान्वितदक्षिणपाणिं बीजपूरकाभयांकुशशक्तियुक्त-
वामपाणिपल्लवं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३४

सपाशाक्षस्रग्मुद्गरवरदैर्दक्षिणेतरैः करैः ।
शक्त्यङ्कुशबीजपूराभयदैर्दक्षिणेतरैः।।
अष्टबाहुर्महायक्ष नामा यक्षश्चतुर्मुखः ।
श्यामो गजरथस्तीर्थे समभूदजितप्रभोः ।।

अमरचन्द्र, अजितचरित्र, १६,२०

श्यामोष्टबाहुर्हस्तिस्थो वरदाभयमुद्गराः ।
अक्षपाशांकुशाः शक्तिर्मातुलिंगं तथैव च ।

अपराजितपृच्छा, २२१।४४

३. त्रिमुख

चक्रासिशृण्युपगसव्यमयोन्यहस्तै
र्दंडत्रिशूलमुपयन् शितकर्तिकां च ।
वाजिध्वजप्रभुनतः शिखिगोंजनाभ
स्त्र्यक्षः प्रतीक्षतु वलिं त्रिमुखाख्ययक्षः ।।

आशाधर, ३।१३१

सव्यैः करैश्चक्रमसिं सृणिं यो दंडं त्रिशूलं सितकर्त्रिकां च ।
अन्यैर्बिभर्ति श्रितसंभव तं यजे त्रिनेत्रं त्रिमुखाख्ययक्षम् ।।

नेमिचन्द्र,३३२

षड्भुजस्त्रिमुखो यक्षस्त्रिनेत्रशिखिवाहनः ।
श्यामलांगो विनीतात्मा संभवजिनमाश्रितः ।।

वसुनन्दि,५।१६

श्यास्य: श्यामो नवाक्ष: शिखिगमनरत: षड्भुजो वामहस्त-
प्रस्तारे मातुलिंगाक्षवलयभुजगान् दक्षिणे पाणिवृन्दे ।
बिभ्राणो दीर्घजिह्वद्विषदभयगदासादिताशेषदुष्ट:
कष्टं संघस्य हन्यात्त्रिमुखसुरवर: शुद्धसम्यक्त्वधारी ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४

तस्मिंस्तीर्थे समुत्पन्नं त्रिमुखयक्षेश्वरं त्रिमुखं त्रिनेत्रं श्यामवर्णं
मयूरवाहनं षड्भुजं नकुलगदाभययुक्तदक्षिणपाणिं
मातुलिंगनागाक्षसूत्रान्वितवामहस्तं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३४

स बभ्रुगदाभृदभीप्रददक्षिणदोस्त्रय: ।
समातुलिङ्गनागाक्षसूत्रवामभुजत्रय: ।।
त्रिनेत्र: षड्भुजो यक्ष: श्यामो बर्हिणवाहन: ।
त्रिमुखस्त्रिमुखाख्योभूत् तीर्थे श्रीसम्भवप्रभो: ।।

अमरचन्द्र, संभवचरित्र, १७–१८

मयूरस्थस्त्रिनेत्र: त्रिवक्त्र: श्यामवर्णक: ।
परश्वक्षगदाचक्रशंखा वरश्च षड्भुज: ।।

अपराजितपृच्छा, २२१ । ४५

४. यक्षेश्वर

प्रेंखद्धनु:खेटकवामपाणिं सकंकपत्रास्यपसव्यहस्तम् ।
श्यामं करिस्थं कपिकेतुभक्तं यक्षेश्वरं यक्षमिहार्चयामि ।।

आशाधर, ३/१३२

कोदण्डसत्खेटकवामहस्तं वामान्यहस्तोद्धृतबाणखड्गं ।
यक्षेश्वरं त्वामभिनंदनार्हत्पादाब्जभृंगं प्रयजे प्रसीद ।।

नेमिचन्द्र, ३३२

अभिनंदननाथस्य यक्षो यक्षेश्वराभिध: ।
हस्तिवाहनमारूढ:श्यामवर्णश्चतुर्भुज: ।।

वसुनन्दि, ५।२१

श्याम: सिन्धुरवाहनो युगभुजो हस्तद्वये दक्षिणे
मुक्ताक्षावलिमुत्तमां परिणतं सन्मातुलिंगं वहन् ।
वामेप्यङ्कुशमुत्तमं च नकुलं कल्याणमालाकर:
श्रीयक्षेश्वर उज्ज्वलां जिनपदेर्दद्यान्मतिं शासने ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४

तत्तीर्थोपपन्नमीश्वरयक्षं श्यामवर्णं गजवाहनं चतुर्भुजं
मातुलिङ्गाक्षसूत्रयुतदक्षिणपाणिं नकुलांकुशान्वितवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३४

श्याम: समातुलिङ्गाक्षसूत्रदक्षिणदोर्द्वय:
नकुलांकुशभृद्वामदोर्युगो गजवाहन: ।।
यक्षेश्वराख्यो यक्षोभूत् तीर्थेभिनंदनप्रभो: ।

अमरचन्द्र, अभिनंदनचरित्र, १६-१७

५. तुम्बरु/तुम्बर

सर्पोपवीतं द्विकपन्नगोर्ध्वकरं स्फुरद्दानफलान्यहस्तम् ।
कोकांकनम्रं गरूडाधिरूढं श्रीतुम्बरं श्यामरुचिं यजामि ।।

आशाधर, ३।१३३

ऊर्ध्वस्थिताभ्यां फणिनौ कराभ्यां अध:स्थिताभ्यां दधते प्रदानम् ।
फलं प्रयक्षे सुमतीशभक्तं श्रीतुम्बरुं सर्पमयोपवीतम् ।।

नेमिचन्द्र, ३३२

सुमतेस्तुम्बरो यक्ष: श्यामवर्णश्चतुर्भुज: ।
सर्प्पद्वयं फलं धत्ते वरद: परिकीर्त्तित: ।।
सर्प्पयज्ञोपवीतोसौ खगाधिपतिवाहन: ।

वसुनन्दि , ५।२३-२४

वर्णश्वेतो गरुडगमनो वेदबाहुश्च वामे
हस्तद्वन्द्वे सुललितगदां नागपाशं च बिभ्रत् ।
शक्तिं चञ्चद्वरदमतुलं दक्षिणं तुम्बरुं स
प्रस्फीतां नो दिशतु कमलां संघकार्येऽव्ययां न: ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४

तुम्बरुयक्षं श्वेतवर्णं गरुडवाहनं चतुर्भुजं वरदशक्तियुत
दक्षिणपाणिं नागपाशयुक्तवामहस्तं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

यक्ष : सुमतितीर्थेभूत् तुम्बरुर्ताक्ष्यवाहनः ।
श्वेताङ्गो वरदशक्तियुतदक्षिणदोर्युगः ।।
गदापाशधरवामकरद्वन्द्वोऽन्तिकस्थितः ।

अमरचन्द्र, सुमतिचरित्र, ४–५

६. पुष्प /कुसुम

मृगारुहं कुंतवरापसव्यकरं सखेटाभयसव्यहस्तम् ।
श्यामागमब्जध्वजदेवसेव्यं पुष्पाख्ययक्षं परितर्पयामि ।।

आशाधर, ३/१३४

खेटोभयोद्भावितसव्यहस्तं कुंतेष्टदानस्फुरितान्यपाणिम् ।
पद्मप्रभश्रीपदपद्मभृगं पुष्पाख्ययक्षेश्वरमर्चयामि ।।

नेमिचन्द्र, ३३३

पद्मप्रभजिनेन्द्रस्य यक्षो हरिणवाहनः ।
द्विभुजः पुष्पनामासौ श्यामवर्णः प्रकीर्तितः

वसुनन्दि, ५/२६

नीलस्तुरंगगमनश्च चतुर्भुजाढ्यःस्फूर्जत्फलाभयमुदक्षिणपाणियुग्मः ।
बभ्राक्षसूत्रयुतवामकरद्वयश्च संघं जिनार्चनरत कुसुमः पुनातु ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

कुसुमं यक्षं नीलवर्णं कुरङ्गवाहनं चतुर्भुजं फलाभययुक्तदक्षिणपाणिं
नकुलाक्षसूत्रयुक्तवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

यक्षः कुसुमनामासीन्नीलाङ्गो मृगवाहनः ।
त्रिभ्राणो दक्षिणौ पाणी सफलाभयदौ परौ ।।
नकुलाक्षसूत्रयुक्तौ तीर्थे पद्मप्रभप्रभोः ।

अमरचन्द्र, पद्मचरित्र, १६–१७

७. मातंग

सिंहादिरोहस्य सदंडशूलसव्यान्यपाणेः कुटिलाननस्य ।
कृष्णत्विषः स्वस्तिककेतुभक्तेर्मातङ्गयक्षस्य करोमि पूजाम् ।।
आशाधर, ३-१३५

यमोग्रदंडोपमचंडदंडं सव्येन चासव्यकरेण शूलम् ।
बिभ्राणमर्चामि सुपार्श्वभक्तं मातंगयक्षं कुटिलाननोग्रम् ।।
नेमिचन्द्र, ३३३

सुपार्श्वनाथदेवस्य यक्षो मातंगसंज्ञकः ।
द्विभुजो वक्रतुंडोसौ कृष्णवर्णप्रकीर्त्तितः ।।
वसुनन्दि, ५/२८

नीलो गजेन्द्रगमनश्च चतुर्भुजोपि
बिल्वाहिपाशयुतदक्षिणपाणियुग्मः ।
वज्रांकुशप्रगुणितीकृतवामपाणि
र्मातङ्गराट् जिनमतेर्द्विषतो निहन्तु ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

मातङ्गयक्षं नीलवर्णं गजवाहनं चतुर्भुजं बिल्वपाशयुक्तदक्षिणपाणिं नकुलांकुशान्वितवामपाणिं चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

दक्षिणौ बिल्वपाशाङ्कौ वामौ सनकुलांकुशौ ।।
भुजौ दधानो मातङ्गो यक्षो नीलो गजाश्रयः ।
अमरचन्द्र, सप्तमजिनचरित्र, १८-१९

८. श्याम/विजय

यजे स्वधित्युद्यफलाक्षमाला वरांकवामान्यकरं त्रिनेत्रम् ।
कपोतपत्रं प्रभयाख्यया च श्यामं कृतेन्दुध्वजदेवसेवम् ।।
आशाधर, ३/१३६

सव्येन धत्ते परशु फलं यस्तथाक्षमालां च वरं परेण ।
करद्वयेन प्रयजे त्रिनेत्रं श्यामं तमिन्दुप्रभभक्तिभारम् ।।
नेमिचन्द्र, ३३३

चंद्रप्रभजिनेन्द्रस्य श्यामो यक्षस्त्रिलोचनः
फलाक्षसूत्रकं धत्ते परशुं च वरप्रदः ।।

वसुनन्दि, ५/३०

श्यामाभिभो हंसगतिस्त्रिनेत्रो
द्विबाहुधारी कर एव वामे ।
सन्मुद्गरं दक्षिण एव चक्रं
वहन् जयं श्रीविजयः करोतु ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४

विजययक्षं हरितवर्णं त्रिनेत्रं हंसवाहनं द्विभुजं
दक्षिणहस्ते चक्रं वामे मुद्गरमिति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

तीर्थभूद् विजयो यक्षो नीलाङ्गो हंसवाहनः ।
सचक्रं दक्षिणं बाहुं बहन् वामं समुद्गरम् ।।

अमरचन्द्र, अष्टमजिनचरित्र, १७

९ अजित

सहाक्षमालावरदानशक्तिफलापसव्यापरपाणियुग्मः ।
स्वारूढकूर्मो मकरांकभक्तो गृह्णातु पूजामजितः सिताभः ।।

आशाधर, ३/१३७

यजामहे शक्तिफलाक्षमालावरांकवामेतरहस्तयुग्मम् ।
पुष्पेषु निष्पेषकपुष्पदन्तश्रीपादभक्ताजितयक्षनाथम् ।।

नेमिचन्द्र, ३३३

अजितः पुष्पदन्तस्य यक्षः श्वेतश्चतुर्भुजः ।
फलाक्षसूत्रशभचाढ्यो वरदः कूर्मवाहनः ।।

वसुनन्दि, ५/३२

कूर्मारूढो धवलकरगो वेदबाहुश्च वामे
हस्तद्वन्द्वे नकुलमतुलं रत्नमुत्तंसयंश्च ।
मुक्तामालां परिमलयुतं दक्षिणे बीजपूरं
सम्यग्दृष्टिप्रमृमरधियां सोऽजितः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४

तत्तीर्थोत्पन्नमजितयक्षं श्वेतवर्णं कूर्मवाहनं चतुर्भुजं
मातुलिङ्गाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणपाणिं नकुलकुन्तान्वितवामपाणिं चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

अजिताख्योऽभवद् यक्षः श्वेताङ्गः कूर्मवाहनः ।
मातुलिङ्गाक्षसूत्राङ्को बिभ्राणो दक्षिणौ करौ ।।
वामौ नकुलकुन्ताङ्कौ तीर्थे श्रीसुविधिप्रभोः ।
अमरचन्द्र, सुविधिचरित्र, १७-१८

१० ब्रह्म

श्रीवृक्षकेतननतो धनुदण्डखेटवज्राढ्यसव्यसय-
इंदुसिताऽम्बुजस्थः ।

ब्रह्मा शरस्वधितिखड्गवरप्रदानं व्यग्रान्यपाणि-
रुपयातु चतुर्मुखोऽर्चाम् ।।
आशाधर, ३/१३८

सचापदंडासिजिनखेटवज्रमव्योद्धपाणि नुतर्शीतलेशम ।
सव्यान्यहस्तेषु परश्वसोष्टदानं यजे ब्रह्मसमाख्ययक्षम् ।।
नेमिचन्द्र, ३३४

शीतलस्य जिनेन्द्रस्य ब्रह्मयक्षश्चतुर्मुखः ।
अष्टबाहु सरोजस्थः श्वेतवर्णः प्रकीर्तितः ।।
वसुनन्दि, ५/३४

वसुमितभुजयुक् चतुर्वक्त्रभाग्द्वादशाक्षो रुचा
सरसिजविहितासनो मातुलिङ्गाभये पाशयुग्मुद्गरं
दधदति गुणमेव हस्तोत्करे दक्षिणे चापि वामे
गदा सृणिनकुलसरोद्भवाक्षाव तीर्थंब्रह्मनामा सुरर्वोत्तमः ।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७४

ब्रह्मयक्षं चतुर्मुखं त्रिनेत्रं धवलवर्णं पद्मासनमष्टभुजं
मातुलिङ्गमुद्गरपाशाभययुक्तदक्षिणपाणिं नकुलगदा-
ङ्कुशाक्षसूत्रान्वितवामपाणिं चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

यक्षस्तीर्थे प्रभो ब्रह्मनामा त्र्यक्षश्चतुर्मुखः ।
श्वेतः पद्मासनो बिभ्रच्चतुरो दक्षिणान् भुजान् ।।
मातुलिङ्गमुद्गरिण्यौ सपाशाभयदायिनौ ।
वामास्तु नकुलगदाकुशाक्षसूत्रधारिण ।।
अमरचन्द्र, दशमजिनचरित्र, १७-१८

११. ईश्वर

त्रिशूलदण्डान्वितवामहस्तः करेक्षसूत्रं त्वपरे फलं च ।
बिभ्रत्मिना गडककेतुभक्तो लात्वीश्वरोर्चां वृषगस्त्रिनेत्रः ।।
आशाधर, ३/१३६

सव्यान्यहस्तोद्धृतसत्त्रिशूलदंडाक्षमालाफलमीश्वराख्यम् ।
यक्ष त्रिनेत्र परिनर्पयामि श्रेयोजिनश्रीपददत्तचित्तम् ।।
नेमिचन्द्र, ३३४

ईश्वरः श्रेयसो यक्षस्त्रिनेत्रो वृषवाहन ।
फलाक्षसूत्रमसात. सत्रिशूलचतुर्भुज ।।
वसुनन्दि, ५।३६

त्र्यक्षो महोक्षगमनो धवलश्चतुर्दोर्वामेऽथ हस्तयुगल नकुलाक्षसूत्रे ।
संस्थापयंस्तदनु दक्षिणपाणियुग्मे सन्मातुलिंगकगदेऽवतु यक्षराजः ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १७५

तत्तीर्थोत्पन्नमीश्वरयक्ष धवलवर्ण त्रिनेत्र वृषभवाहन चतुर्भुज
मातुलिङ्गगदान्वितदक्षिणपाणि नकुलाक्षसूत्रयुक्तवामपाणि चेति ।
निर्वाणकलिका, पत्रा ३५

ईश्वराख्योभवद्यक्षस्त्र्यक्षो गौरो वृषाश्रय. ।
मातुलिंगगदायुक्तौ बिभ्राणो दक्षिणौ करौ ।।
वामौ तु सनकुलाक्षसूत्रौ श्रेयांसशासन ।
अमरचन्द्र, श्रेयांसजिनचरित्र, १९–२०

१२ कुमार

शुभ्रो धनुर्बभ्रुफलाढ्यमन्यहस्तोन्यहस्तेषु गदेष्टदानः ।
लुलायलक्ष्मप्रणतस्त्रिवक्त्रः प्रमोदनां हंसचरः कुमारः ॥

आशाधर, ३।१४०

हस्तैर्धनुर्बभ्रुफलानि सव्यैरन्यैरिषु चारुगदा वरं च ।
धरन्तमर्चामि कुमारयक्षं त्रिवक्त्रमाराधितवासुपूज्यम् ॥

नेमिचन्द्र, ३।३४

वासुपूज्यजिनेन्द्रस्य यक्षो नाम्ना कुमारकः ।
त्रिमुखषड्भुजः श्वेतः सुरूपो हंसवाहनः ॥

वसुनन्दि, ५।३८

श्वेतश्चतुर्भुजधरो गतिकृच्च हंसे
कोदण्डपिङ्गलसुलक्षितवामहस्तः ।
सद्बीजपूरशरपूरितदक्षिणान्य-
हस्तद्वयः शिवमलंकुरुतात्कुमारः ॥

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्नं कुमारयक्षं श्वेतवर्णं हंसवाहनं चतुर्भुजं
मातुलिंगबाणान्वितदक्षिणपाणिं नकुलकधनुर्युक्तवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

यक्षोऽजनि कुमाराख्यः श्यामाङ्गो हंसवाहनः ।
दधानो दक्षिणौ हस्तौ मातुलिङ्गशरान्वितौ ॥
वामौ नकुलचापाङ्कौ श्रीवासुपूज्यशासने ।

अमरचन्द्र, वासुपूज्यचरित्र, १७–१८

१३. चतुर्मुख /षण्मुख

यक्षो हरितसपरशुपरिमार्गणपाणिः कौक्षेयकाक्षमणिखेटकदंडमुद्राः ।
बिभ्रच्चतुर्भिरपरैः शिखिगः किराकनम्र प्रनृत्यन् यथार्थचतुर्मुखाख्यः

आशाधर, ३।१४१

विमलस्य जिनेन्द्रस्य नामाथाभ्यां चतुर्मुखः ।
यक्षो द्वादशदोर्दण्डः सुरूपः शिखिवाहनः ॥

वसुनन्दि, ५।४०

ऊर्ध्वाष्टहस्तविलसत्परशुं चतुर्भिः खड्गामलाक्षमणिखेटकदंडमुद्राः ।
शेषैः करैश्च दधतं विमलेशभक्तं नाम्नोर्थेन षण्मुखमर्चयामि ।।

नेमिचन्द्र, ३३५

शशधरकरदेहरुग् द्वादशाक्षस्तथा द्वादशोत्सद्भुजो बर्हिगामी
परं षण्मुख. ।
फलशरकरवालपाशाक्षमाला महाचक्रवस्तूनि पाण्युत्करे
दक्षिणे धारयन ।।
तदनु च ननु वामके चापचक्रस्फरान् पिङ्गला चाभय माकुशं
सज्जनानन्दनो विरचयतु सुखं सदा षण्मुख सर्वसघस्य
सर्वासु दिक्षु प्रनिस्फुरितायद्यशाः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्न षण्मुख यक्षं श्वेतवर्णं शिखिवाहनं द्वादशभज
फलचक्रबाणखड्गपाशाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणपाणि नकुलचक्रधनु
फलकाङ्कुशाभययुक्तवामपाणि चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५–३६

बभूव षण्मुखो यक्ष शिखियानो वलक्षरुक् ।
दक्षिणै फलचक्रेषुखड्गपाशाक्षसूत्रिभिः ।।
वामैः स नकुलचक्रकोदण्डफलकाङ्कुशैः ।
अभीदेन च दोर्दण्डै श्रीमद्विमलशासने ।।

अमरचन्द्र, विमलजिनचरित्र, १६–२०

१८. पाताल

पातालक सरोणिशूलकजापसव्यहस्त कशाहलफलांकितसव्यपाणिः ।
सेधाध्वजैकशरणो मकरादिरूढो रक्तोर्च्यता त्रिफणनागशिरस्त्रि
वक्त्रम् ।।

आशाधर, ३।१८२

सव्यैः कशाहलफलान्यपसव्यहस्तैर्बिभ्राणमङ्कुशसशूलसरोरुहाणि ।
पातालकं त्रिफणनागशिरस्त्रिवक्त्रमर्वाम्यनंतजिनमादरतोर्चयन्तम्।।

नेमिचन्द्र, ३३५

अनंतस्य जिनेन्द्रस्य यक्ष: पातालनायक: ।
त्रिमुख: षडभुजो रक्तवर्णो मकरवाहन: ।।

वसुनन्दि, ५।४२

खट्वागमित्रमुख: षडम्बकधरो वादोर्गनिर्लोहित:
पद्मं पाशमसिं च दक्षिणकरव्यूहे वहन्नब्जमा ।
मुक्ताक्षावलिखेटकोरगरिपू वामेषु हस्तेष्वपि ।।
श्रीविस्तारमलंकरोतु भविनां पातालनामा सुर: ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्नं पातालयक्षं त्रिमुखं रक्तवर्णं मकरवाहनं षड्भुजं
पद्मखड्गपाशयुक्तदक्षिणपाणिं नकुलफलकाक्षसूत्रयुक्तवामपाणिं चेति।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

पातालस्त्रिमुखो यक्षस्ताम्रो मकरवाहन: ।
दक्षिणैर्बाहुभि: खड्गपद्मपाशाङ्कितैस्त्रिभि: ।।
वामैर्नकुलफलकाक्षसूत्रप्रवरैर्युत: ।

अमरचन्द्र, अनंतजिनचरित्र, १८-१६

१५, किन्नर

सचक्रवज्रांकुशवामपाणि: समुद्गराक्षालिवरान्यहस्त: ।
प्रवालवर्णस्त्रिमुखो झषस्थो वज्रांकभक्तोऽचतु किन्नरोऽर्च्यम् ।।

आशाधर, ३।१४३

चक्रं पविं चाकुशमुद्वहन्तं सव्यै: परैर्मुद्गरमक्षमालाम् ।
वरं च संसेवितधर्मनाथं त्रिवक्त्रकं किन्नरमर्चयामि ।।

नेमिचन्द्र, ३३५

धर्मस्य किन्नरो यक्षस्त्रिमुख. मीनवाहन: ।
षड्भुज: पद्मरागाभो जिनधर्मपरायण: ।।

वसुनन्दि, ५।४४

त्र्यास्य: षण्नयनोरुढ. कमठग: षड्बाहुयुक्तोऽभयं
विस्पष्टं फलपूरकं गुरुगदां चावामहस्तावली ।
बिभ्रद्वामकरोच्चये च कमलं मुक्ताक्षमालां तथा
बिभ्रत् किनरनिर्जरो जनजरारोगादिकं कृन्ततु ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्नं किन्नरयक्षं त्रिमुखं रक्तवर्णं कूर्मवाहनं षड्भुजं बीजपूरकगदाभययुक्तदक्षिणपाणिं नकुलपद्माक्षमालायुक्त-वामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

त्रिमुखः किन्नराख्योभूद् यक्ष कूर्मरथोऽरुणः ।
समातुलिंगगदाभृदभीदान् दक्षिणान् भुजान् ।।
वामांस्तु नकुलाम्भोजाक्षमालामालिनो दधत् ।

अमरचन्द्र, धर्मजिनचरित्र, १९–२०

१६. गरुड

वक्राननोधम्नलहस्तपद्मफलोन्यहस्तार्पितवज्रचक्रः ।
मृगध्वजार्हत्प्रणतः मरयों श्याम· किटिस्थो गरुडोऽभ्युपैतु ।।

आशाधर, ३, १४४

पद्मं फलं संदधतं कराभ्या अधःस्थिताभ्यामुपरिस्थिताभ्याम् ।
वज्रं च चक्रं गरुडाह्वयं त्वामचर्चामि शान्तिश्रितवक्रवक्त्र ।।

नेमिचन्द्र, ३३६

गरुडो नामतो यक्षो शान्तिनाथस्य कीर्तित. ।
वराहवाहनः श्यामो वक्रवक्त्रश्चतुर्भुजः ।।

वसुनन्दि, ५, ४९

श्यामो वराहगमनश्च वराहवक्त्रश्चक्रचतुर्भुजधरो गरुडश्च पाण्योः ।
सव्याक्षसूत्रनकुलोप्यथ दक्षिणे च पाणिद्वये धृतसरोरुहमातुलिंगः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्नं गरुडयक्षं वराहवाहनं क्रोडवदन श्यामवर्णं चतुर्भुजं बीजपूरकपद्मयुक्तदक्षिणपाणिं नकुलाक्षसूत्रवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

१७ गंधर्व

मनागपाशोर्ध्वकरद्वयोधः करद्वयात्तेषुधनुः सुनीलः ।
गंधर्वयक्षः स्तभकेतुभक्तः पूजामुपैतु श्रितपक्षियानः ।।
आशाधर, ३ १८५

ऊर्ध्वद्विहस्तोद्धृतनागपाशमधोद्विहस्तस्थितचापबाणम् ।
गंधर्वयक्षेश्वर कुंथुनाथसेवास्थितानंदथमर्चये त्वाम् ।।
नेमिचन्द्र, ३३६

कुंथुनाथजिनेन्द्रस्य यक्षो गंधर्वसंज्ञकः ।
पक्षियानसमारूढः श्यामवर्णश्चतुर्भुजः ।।
वसुनन्दि, ५/४८

श्यामश्चतुर्भुजधरः सितपत्रगामी बिभ्रच्च दक्षिणकरद्वितयेपि पाशम् ।
विस्फूर्जितं च वरदं किल वामपाण्योर्गन्धर्वराट् परिधृताकुशबीजपूरः।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्नं गन्धर्वयक्षं श्यामवर्णं हंसवाहनं चतुर्भुजं वरदपाशा-
न्वितदक्षिणभुजं मातुलिङ्गाङ्कुशाधिष्ठितवामभुजं चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

गन्धर्वनामा यक्षोभूदसितो हंसवाहनः ।
दक्षिणौ वरदं पाशधरं बिभ्रत् करौ परौ ।।
मातुलिङ्गाकुशधरौ तीर्थे कुन्थुजिनेशितुः ।
अमरचन्द्र, कुन्थुजिनचरित्र, १८–१९

१८ खेन्द्र / यक्षेश्वर

आरभ्योपरिमात्करेषु कलयन् वामेषु चापं पविं
पाशं मुद्गरमंकुशं च वरदः षष्ठेन युजन् परैः ।
बाणाभोजफलस्रगच्छपटलीलीलाविलासांस्त्रिदृक्
षड्वक्त्रष्टगराकभक्तिरमितः खेन्द्रोऽर्च्यते शंखगः ।।
आशाधर, ३ १४६

सव्यैः करैरिह शरासनवज्रपाशममुद्गराकुशवरानपरैर्धरन्तम् ।
बाणाबुजोरुफलमाल्यमहाक्षमालालीला यजाम्यरसित त्रिदशचखेन्द्रम् ।।

नेमिचन्द्र, ३३६

अरस्य जिननाथस्य खेन्द्रो यक्षस्त्रिलोचन ।
द्वादशोरुभुज श्याम षण्मुखशंखवाहन ।।

वसुनन्दि, ५/५०

वसुशशिनयन षडास्य सदा कम्बुगामी धृतद्वादशोद्यद्भुज श्यामल:
तदनु च शरपाशमद्रोजपूराभयासिस्फुरन्मुदगरान्दक्षिणे स्फारयन ।
करपरिचरणं पुनर्वामके वज्रशूलाङ्कुशानक्षसूत्र स्फुरं कार्मुक
दधदवितथवाक् स रक्षोश्वराभिख्यया लक्षित पातु सर्वत्र भक्तं जनम् ।।

आचारदिनकर, उदय ३०, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्न यक्षेन्द्रयक्ष षण्मुख त्रिनेत्र श्यामवर्ण
शंखवाहन द्वादशभुज मातुलिंगबाणखड्गमुद्गरपाशाभय-
युक्तदक्षिणपाणि नकुलधनुश्चर्मफलकशूलाङ्कुशाक्षसूत्रयुक्तवामपाणि चेति।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

यक्षाभूत् षण्मुखस्त्र्यक्ष श्यामाङ्गः शङ्खवाहन ।
समातुलिङ्गबाणासिमद्गरान् पाशभोप्रदो ।।
दक्षिणान् षड्भुजान् बिभ्रद वामो नकधनुर्धरो ।
सवर्मशूलाङ्कुशाक्षसूत्रान् तीर्थे स्वरप्रभा ।।

अमरचन्द्र, अरजिनचरित्र, १७-१८

१६ कुबेर

सफलकधनुर्दण्डपद्मखड्गप्रदरसुपाशवरप्रदाष्टपाणिम् ।
गजगमनचतुर्मुखेन्द्रचापद्युतिकलशाङ्कनत यजे कुबरम् ।।

आशाधर, ३।१४७

मल्लिनाथस्य यक्षेश : कुवेरो हस्तिवाहनः ।
सुरेन्द्रचापवर्णो साष्टहस्तश्चतुर्मुखः ।।
वसुनन्दि, ५।५२

सव्यैः करैः फलककार्मुकदंडपद्मानन्यैः कृपाणशरपाशवरान्दधानम् ।
दुर्वार्यवीर्यचतुरानन पूजये त्वां श्रीमल्लिनाथपदभक्तकुबेरयक्षम् ।।
नेमिचन्द्र, ३३७

अष्टाक्षाष्टभुजश्चतुर्मुखधरो नीलो गजाद्यद्गति :
शूलं पर्शुमथाभयं च वरदं पाण्युच्चये दक्षिणे ।
वामे मुद्गरमक्षसूत्रममलं मद्बीजपूर दधत्
शक्तिं चापि कुबेरकूबरधृताभिरख्यः सुरः पातु वः ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्नं कुबेरयक्षं चतुर्मुखमिन्द्रायुधवर्णं
गरुडवदनं गजवाहनं अष्टभुजं वरदाशशूलाभययुक्त-
दक्षिणपाणिं बीजपूरकशक्तिमुद्गराक्षसूत्रयुक्तवामपाणिं चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

२० वरुण

जटाकिरीटोष्टमुखस्त्रिनेत्रो वामान्यखेटासिफलेष्टदानः ।
कूर्माकनम्रो वरुणो वृषस्थः श्वेतो महाकाय उपैतु तृप्तिम् ।।
आशाधर, ३।१४८

यजे जटाजूटकिरीटजुष्टविशिष्टभावाष्टमुखं त्रिनेत्रम ।
सखेटखड्ग सफलेष्टदानं श्रीसुव्रतेशो वरुणाख्ययक्षम् ।।
नेमिचन्द्र, ३३७

मुनिसुव्रतनाथस्य यक्षो वरुणसंज्ञकः ।
त्रिनेत्रो वृषभारूढः श्वेतवर्णश्चतुर्भुजः ।।
वसुनन्दि, ५।५४

श्वेतो द्वादशलोचनो वृषगतिर्वेदाननः शुभ्ररुक्
सज्जात्यष्टभुजोथ दक्षिणकरव्राते गदा सायकान् ।
शक्तिं सत्फलपूरकं दधदथो वामे धनुः पंकजं
पर्शुं बभ्रुमपाकरोतु वरुणः प्रत्यूहविस्फूर्जितम् ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्नं वरुणयक्षं चतुर्मुखं त्रिनेत्रं धवलवर्णं
वृषभवाहनं जटामुकुटमण्डितं अष्टभुज मातुलिंग–
गदाबाणशक्तियुतदक्षिणपाणि नकुलकपद्मधनु परशुयुतवामपाणि चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

२१. भृकुटि

खेटं खड्गं फलं धत्ते हेमवर्णः चतुर्भुजः ।
नमिनाथजिनेन्द्रस्य यक्षो भृकुटिसंज्ञकः ।।
वसुनन्दि, ५।५६

खेटासिकोदंडशरांकुशाब्जचक्रेष्टदानोल्लसिताष्टहस्तम् ।
चतुर्मुखं नंदिगमुत्पलांकभक्तं जपाभं भृकुटिं यजामि ।।
आशाधर, ३।१४६

यः खेटखड्गौ दृढचापबाणौ सृण्यंबुजे चक्रवरौ दधानः ।
हस्ताष्टकेनोग्रचतुर्मुखं तं नमीशयक्षं भृकुटिं यजामि ।।
नेमिचन्द्र, ३३७

नमितीर्थे भृकुटयाख्यो यक्षस्त्र्यक्षश्चतुर्मुखः ।
वृषस्थः स्वर्णभो जज्ञे चतुरो दक्षिणान् भुजान् ।।
बिभ्रन्मातुलिंगशक्तिमुद्गराङ्काभयप्रदान् ।
वामान् नकुलपरशुवज्राक्षसूत्रसंयुतान् ।।
अमरचन्द्र, नमिजिनचरित्र, १८-१९

स्वर्णाभो वृषवाहनोष्टभुजभाग् वेदाननो द्वादशाक्षो
वामे करमण्डले भयमथो शक्तिं ततो मुद्गरम् ।
बिभ्रद्वै फलपूरकं तदपरे वामे च बभ्रुं पविं
पर्शुं मौक्तिकमालिकां भृकुटिराड् विस्फोटयेत्संकटम् ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७५

तत्तीर्थोत्पन्नं भृकुटियक्षं चतुर्मुखं त्रिनेत्रं हेमवर्णं वृषभवाहनं अष्टभुजं मातुलिङ्गशक्तिमुद्गराभययुक्त-दक्षिणपाणिं नकुलपरशुवज्राक्षसूत्रवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

२२. गोमेद/गोमेध

श्यामस्त्रिवक्त्रो द्रुघणं कुठारं दंडं फलं वज्रवरौ च बिभ्रत् ।
गोमेदयक्षः क्षितशंखलक्ष्मा पूजां नृवाहोऽर्हतु पुष्पयानः ।।

आशाधर, ३।१५०

घनं कुठारं च बिभर्ति दंडं सव्यैः फलैर्वज्रवरौ च योऽन्यैः ।
हस्तैस्तमाराधननेमिनाथं गोमेधयक्षं प्रयजामि दक्षम् ।।

नेमिचन्द्र, ३३७

षड्बाहुस्त्रकभाक् शिनिस्त्रिवदनो वाहयं नरं धारयन
पर्शूग्र-फलपूरचक्रकलिता हस्तान्करे दक्षिणे ।
वामे पिङ्गलशूलशक्तिललिता गोमेधनामा सुरः
संघस्यापि हि सप्तभीतिहरणो भूयात्प्रकृष्टो हितः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६

तत्तीर्थोत्पन्नं गोमेधयक्षं त्रिमुखं श्यामवर्णं पुरुषवाहनं षड्भुजं मातुलिंगपरशुचक्रान्वितदक्षिणपाणिं नकुलकशूलशक्तियुत-वामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

२३. धरण/पार्श्व

ऊर्ध्वद्विहस्तधृतवासुकिरुद्भटाधः सव्यान्यपाणिफणिपाशवरप्रणंता ।
श्रीनागराजककुदं धरणोऽभ्रनीलःकूर्मश्रितो भजतु वासुकिमौलिरिज्याम् ।

आशाधर, ३।१५१

सव्येतराभ्यामुपरिस्थिताभ्यां यो वासुकीपाशवरौ पराभ्याम् ।
धत्ते नमेनं फणिमौलिचूलं पार्श्वेशयक्षं धरणं धिनोमि ।।

नेमिचन्द्र, ३३८

पार्श्वस्य धरणो यक्षः श्यामांगः कूर्म्मवाहनः ।

वसुनन्दि, ५।६०

खर्वः शीर्षफणः सितिः कमठगो दन्त्यानन पार्श्वक
श्यामोद्भासिचतुर्भुजः सुगदया सन्मातुलिंगेन च
स्फूर्जद्दक्षिणहस्तकोऽहिनकुलभ्राजिष्णु वामस्फुरन्
पाणिर्यच्छतु विघ्नकारिभविना विच्छित्तिमुच्चैः कयुक् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १७६

तत्तीर्थोत्पन्नं पार्श्वयक्षं गजमुखमुरगफणामण्डितशिरसं श्यामवर्णं कूर्मवाहनं चतुर्भुजं बीजपूरकोरगयुतदक्षिणपाणिं नकुलकाहियुतवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका पत्रा ३७

२४. मातङ्ग

वर्धमानजिनेन्द्रस्य यक्षो मातङ्गसंज्ञकः ।
द्विभुजो मुद्गवर्णोऽसौ वरदो गजवाहनः ।।
मातुलिंगं करे धत्ते धर्म्मचक्रं च मस्तके ।

वसुनन्दि, ५।६५–६६

मुद्गप्रभो मूर्धनि धर्मचक्रं बिभ्रत्फलं वामकरेऽथ यच्छन् ।
वरं करिस्थो हरिकेतुभक्तो मातंगयक्षोऽगतु तुष्टिमिष्ट्या ।।

आशाधर, ३।१५२

बिभ्राण इह मूर्धनि धर्मचक्रं फलं च वामेन वरं परेण ।
करेण च सेवितवर्धमानं मातंगयक्षं महितं महामि ।।

नेमिचन्द्र, ३३८

श्यामो महाहस्तिगतिर्द्विबाहुः सद्बीजपूराङ्कितवामपाणिः ।
द्विजिह्वसत्सव्यदवामहस्तो मातङ्गयक्षो वितनोतु रक्षाम् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १७६

तत्तीर्थोत्पन्नं मातङ्गयक्षं श्यामवर्णं गजवाहनं द्विभुजं दक्षिणे नकुलं वामे बीजपूरकमिति ।

निर्वाणकलिका, पत्रा ३७

चतुर्विंशति यक्षी

जक्खीग्रो चक्केसरिरोहिणिपण्णत्तिवज्जसिखलया ।
वज्जंकुसा य ग्रप्पदिचक्केसरिपुरिसदत्ता य ।।
मणवेगा कालाग्रो तह जालामालिणी महाकाली ।
गउरी गांधारी ग्रो वैरोटी सोलसा ग्रणंतमदी ।।
माणसि महमाणसिया जया य विजयापराजिदाग्रो य ।
बहुरूपिणि कुभंडी पउमा सिद्धायिणीग्रो त्ति ।।

तिलोयपण्णत्ती, ४/६३७–३६

चक्रेश्वर्यजितबला दुरितारिश्च कालिका ।
महाकाली श्यामा शान्ता भृकुटिश्च सुतारका ।।
अशोका मानवी चण्डा विदिता चाङ्कुशा तथा ।
कन्दर्पा निर्वाणी बला धारिणी धरणप्रिया ।।
नरदत्ताथ गान्धार्यम्बिका पद्मावती तथा ।
सिद्धायिका चेति जैन्य: क्रमाच्छासनदेवता. ।।

अभिधान चिन्तामणि, देवाधिदेवकाण्ड,४४-४६

चक्रेश्वरी रोहिणी च प्रज्ञा वै वज्रशृंखला ।
नरदत्ता मनोवेगा कालिका ज्वालमालिका ।।
महाकाली मानवी च गौरी गान्धारिका तथा ।
विराटा तारिका चैवानन्तागतिश्च मानसी ।।
महामानसी च जया विजया चापराजिता ।
बहुरूपा च चामुण्डाम्बिका पद्मावती तथा ।।
सिद्धायिकेति देव्यस्तु चतुर्विंशतिरर्हताम् ।
कथितान्यभिधानानि शास्त्रभेदात् कथ्यते ।।

अपराजितपृच्छा, २२१ । ११-१४

देवीग्रो चक्केसरि ग्रजिग्रा दुरितारि कालि महाकाली ।
ग्रच्चुय सता जाला सुतारया सोय सिरिवच्छा ।।
पवर विजयकुमा पन्नयत्ति निव्वाण ग्रच्चुया धरणी ।
वइरुट्ठ छुत्त गधारि ग्रब पउमावई सिद्धा ।।

प्रवचनसारोद्धार, द्वार २७।३७७-३७८

१. चक्रेश्वरी / अप्रतिचक्रा

भर्माभाद्यकरद्वयालकुलिशा चक्राकहस्ताष्टका
सव्यासव्यशयोल्लसत्फलवरा यन्मूर्तिरास्तेम्बुजे ।
तार्क्ष्ये वा सह चक्रयुग्मरुचकत्यागैश्चतुर्भिः करैः
पंचेष्वासशतोन्नतप्रभुनतां चक्रेश्वरी तां यजे ।।

आशाधर, ३।१५६

या देव्यूर्ध्वकरद्वये कुलिशं चक्राण्यधास्थैः करै
अष्टाभिश्च फलं वरं करयुगेनाधत्त एवाथवा
धत्ते चक्रयुगं फलं वरमिमा दोर्भिश्चतुर्भिः श्रिताम्
तार्क्ष्यं तां पुरुतीर्थपालनपरां चक्रेश्वरीं संयजे ।।

नेमिचन्द्र, ३४०

वामे चक्रेश्वरी देवी स्थाप्या द्वादशसद्भुजा ।
धत्ते हस्तद्वये वज्रे चक्राणि च तथाष्टसु ।।
एकेन बीजपूरं तु वरदा कमलासना ।
चतुर्भुजाथवा चक्रद्वयोर्गरुडवाहना ।।

वसुनन्दि, ५।१५-१६

स्वर्णाभा गरुडासनाष्टभुजयुग्वामे च हस्तोच्चये
वज्रं चापमथाङ्कुशं गुरुधनुः सौम्यास्यया बिभ्रती ।
तस्मिंश्चापि हि दक्षिणेथ वरदं चक्रं च पाशं शरान्
सच्चक्रा परचक्रभञ्जनरता चक्रेश्वरी पातु नः ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६

तथा तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्नामप्रतिचक्राभिधाना
यक्षिणीं हेमवर्णां गरुडवाहनामष्टभुजां वरदबाणचक्र-
पाशयुक्तदक्षिणकरां धनुर्वज्रचक्राङ्कुशवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३४

प्रभोरप्रतिचक्राख्या तीर्थे शासनदेवता ।
युता सच्चक्रपाशेषु वरदैर्दक्षिणैः करैः ।।
चक्राङ्कुशधनुर्वज्रलक्षणैर्दक्षिणेतरैः ।
सुपर्णवाहना स्वर्णवर्णा सन्निधिवर्तिनी ।।

अमरचन्द्र, प्रथम जिन चरित्र, १०२-१०३

षट्पादा द्वादशभुजा चक्राण्यष्टौ द्विवज्रकम् ।
मातुलिंगाभयं चैव तथा पद्मासनापि च ।
गरुडोपरिसंस्था च चक्रेशी हेमवर्णिका ।

अपराजितपृच्छा, २२१।१५-१६

२. रोहिणी। अजिता। अजितबला

स्वर्णद्युतिशंखरथाङ्गशस्त्रा लोहासनस्थाभयदानहस्ता ।
देवं धनुःसार्धचतुःशतोच्चं वदारुर्वीष्टामिह रोहिणीष्टेः ।।

आशाधर, ३।१५७

ऊर्ध्वद्विहस्तोद्धृतचक्रशंखा अधोद्विहस्ताभयदानमुद्राम् ।
प्रभावयन्तीमजितेशतीर्थं यजेऽधिकारिणि रोहिणि त्वाम् ।।

नेमिचन्द्र, २४१

देवी लोहासनारूढा रोहिण्याख्या चतुर्भुजा ।
वरदाभयहस्तासौ शंखचक्रोज्ज्वलायुधा ।।

वसुनन्दि, ५।१८

गोगामिनी धवलरुक् च चतुर्भुजाढ्या वामेतर वरदपाशविभासमाना ।
वामं च पाणियुगलं सृणिमातुलिङ्गयुक्तं सदाजितबला दधती पुनातु ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पत्रा १७६

तथा तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्नामजिताभिधाना यक्षिणी
गौरवर्णा लोहासनाधिरूढा चतुर्भुजा वरदपाशाधिष्ठित-
दक्षिणकरा बीजपूराङ्कुशयुक्तवामकरा चेति ।

निर्वाणकलिका, पत्रा ३४

बिभ्राणा दक्षिणौ बाहू वरदं पाशशालिनम् ।
बीजपूराङ्कुशयुतौ वामौ तु कनकद्युतिः ।।
देवता त्वजितबला तीर्थभूदजितप्रभो ।
लोहासनसमासीना पार्श्वे शासनदेवता ।।

अमरचन्द्र, अजितचरित्र, २१–२२

चतुर्भुजा श्वेतवर्णा शंखचक्राभयवरा ।
लोहासना च कर्तव्या रथारूढा च रोहिणी ।।

अपराजितपृच्छा, २२१।१६

३. प्रज्ञप्ति/दुरितारि

पक्षिस्थार्धेंदुपरशुफलासीढीवरैः सिता ।
चतुश्चापशतोच्चार्हद्भक्ता प्रज्ञप्तिरिज्यते ।।
आशाधर, ३ १५८

धत्तेर्धचंद्रपरशु फलं वै कृपाणपिंडीवरमादधानम् ।
यजामहे सभवनाथयक्षा प्रज्ञप्तिसज्ञा क्षपितारिशक्तिम् ।।
नेमिचन्द्र, ३४१

प्रज्ञप्तिर्देवता चैता षड्भुजा पक्षिवाहना ।
अर्धेंदुपरशु धत्ते फलासींढिवरप्रदा ।।
वसुनन्दि, ५/२०

मेषारूढा विशदकरणा दोष्चतुष्केण युक्ता
मुक्तामालावरदकलितं दक्षिण पाणियुग्मम् ।
वामं तच्चाभयफलशुभ बिभ्रती पुण्यभाजा
दद्यात् भद्र सपदि दुरितारातिदेवी जनानाम् ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना दुरितारिदेवी गौरवर्णा
मेषवाहना चतुर्भुजा वरदाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणकरा
फलाभयान्वितवामकरा इति
निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

वरदानपराक्षस्रग्युता दक्षिणदोर्युगा ।
अभयप्रदफणिभृद्वरवामकरद्वया ।।
दुरितारिरिति नाम्ना गौराङ्गीचन्द्रागवाहना ।
चतुर्भुजा श्रीसम्भवतीर्थे शासनदेव्यभूत् ।।
अमरचन्द्र, सभवचरित्र, १९–२०

४. वज्रशृंखला/कालिका

सनागपाशोरुफलाक्षसूत्रा हंसाधिरूढा वरदानुभक्ता ।
हमप्रभार्धत्रिधनु शताच्चतीर्थेशनम्रा पविशृंखलार्चा ।।
आशाधर, ३/१५९

या नागपाशं फलमक्षसूत्र वर बिभर्ति प्रवरप्रभावा ।
यजे यजन्तीमभिनदनेशमुच्छृंखलर्द्धि पविशृंखला ताम ।।
नेमिचन्द्र, ३४१

वरदा हंसमारूढा देवता वज्रश्रृंखला ।
नागपाशाक्षसूत्रोरुफलहस्ता चतुर्भुजा ।।
वसुनन्दि,५।२२.

श्यामा पद्मसंस्था वलयवलिचतुर्बाहुविभ्राजमाना
पाशं विस्फूर्जमूर्जस्वलमपि वरदं दक्षिणे हस्तयुग्मे ।
बिभ्राणा चापि वामेऽङ्कुशमपि कविषं भोगिनं च प्रकृष्टा
देवीनामस्तु काली कलिकलितकलिस्फूर्तितद्भूतये नः ।।
ग्राचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्नां कालिकादेवी श्यामवर्णा
पद्मासनां चतुर्भुजा वरदपाशाधिष्ठितदक्षिणभुजा
नागाङ्कुशान्वितवामकरा चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३४-३५

श्यामा वरदपाशाङ्कौ बिभ्राणा दक्षिणौ करौ ।।
नागांकुशधरौ वामौ कालिका कमलासना ।
ग्रभिनंदनदेवस्य तीर्थे शासनदेवता ।।
ग्रमरचन्द्र, ग्रभिनंदनचरित्र,१७-१८

५. पुरुषदत्ता/महाकाली

गजेन्द्रगा वज्रफलोद्यचक्रवरागहस्ता कनकोज्ज्वलांगी ।
गृह्णानुदंडत्रिशनोन्नतार्चना स्वङ्गवराच्यंनेत्वम्
ग्राशाधर,३।१६०

वज्रं फलं सव्यकरद्वयेन चक्रं वरं चान्यकरद्वयेन
समुद्वहन्ती सुमतीशयक्षी यजामहे पुरुषदत्तिकाख्याम् ।।
नेमिचन्द्र,३८२

देवी पुरुषदत्ता च चतुर्हस्ता गजेन्द्रगा ।।
रथाङ्गवज्रशस्त्रासौ फलहस्ता वरप्रदा ।
तिसृणां प्रोक्तदेवीनां शरीरं कनकप्रभम् ।।
वसुनन्दि,५।२४-२५

स्वर्णाभाम्भोरुहकृतपदा स्फारबाहा चतुष्का
सार पाश वरदममल दक्षिणे हस्तयुग्मे ।
वामे रम्याङ्कुशमतिगुण मातुलिङ्ग वहन्ती
सद्भक्ताना दुरितहरणी श्रीमहाकालिकास्तु ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना महाकाली देवी सुवर्णवर्णा
पद्मवाहना चतुर्भुजा पाशाधिष्ठितदक्षिणकरा
मातुलिङ्गाकुशयुक्तवामभुजा चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

करो वरदपाशाङ्को दक्षिणो दक्षिणेतरो ।।
मातुलिङ्गाकुशधरो बिभ्राणाम्भोरुहासना ।
हेमकान्तिर्महाकाली देवी सुमतिशासन ।।

अमरचन्द्र, सुमतिचरित्र, १६-२०

६. मनोवेगा/अच्युता

फलक फलमुग्रासि वर वहति दुर्जया ।
पद्मप्रभस्य या यक्षी मनोवेगा महासि नाम् ।।

नेमिचन्द्र,३४२

तुरगवाहना देवी मनोवेगा चतुर्भुजा ।
वरदा काचनछाया मात्रासिफलका ।।

वसुनन्दि, ५।२७.

श्यामा चतुर्भुजधरा नरवाहनस्था पाश तथा च वरद
करयोर्दधाना ।
वामान्ययोस्तदनु सुन्दरबीजपूर तीक्ष्णाकुश च परयो.
प्रभुदच्युताम्त् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्नामच्युतादेवी श्यामवर्णा
नरवाहना चतुर्भुजा वरदवीणा (वाणा) न्वितदक्षिणकरा
कार्मुकाभययुतवामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५,

अच्युता शासनदेवी श्यामांगी नरवाहना ।।
दक्षिणौ वरद पाशं शोभितं बिभ्रती भुजौ ।
वामौ पुनर्धनुर्दण्डप्रचण्डाभयदायिनौ ।।
अमरचन्द्र, पद्मप्रभचरित्र, १७–१८

७. काली/शान्ता

सिता गोवृषगां घटा फलशूलवरावृताम् ।
यजे कालीं द्विकोदण्डशतोच्छ्रायजिनाश्रयाम् ।।
आशाधर, ३/१६१

आरभ्य वामोपरि हस्ततो या घंटा फल शूलमभीष्टदानम् ।
दधाति काली कलितप्रमादा समर्पया साऽस्तु सुपार्श्वयक्षी ।।
नेमिचन्द्र, ३४२

सितांगा वृषभारूढा कालीदेवी चतुर्भुजा ।
घंटात्रिशूलसंयुक्ता फलहस्ता वरप्रदा ।।
वसुनन्दि, ५/२६

गजारूढा शान्ता द्विगुणभुजयुग्मेन सहिता
लसन्मुक्तामाला वरदमपि सव्यान्यकरयोः ।
वहन्ती शूलं चाभयमपि च सा वामकरयोः
निशान्तं भद्राणां प्रतिदिशतु शान्ता सदुदयम् ।।
आचारदिनकर उदय ३३ पत्रा १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्नां शान्तिदेवीं सुवर्णां गजवाहनां
चतुर्भुजां वरदाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणकरां शूलाभययुक्तवाम–
हस्तां चेति ।
निर्वाणकलिका, पत्रा ३५

शासन देवता शान्ता स्वर्णवर्णेभवाहना ।।
दक्षिणौ वरदं साक्षसूत्रं वामौ तु बिभ्रती ।
शूलाङ्काभयदौ बाहू श्रीसुपार्श्वप्रभारभवत् ।।
अमरचन्द्र, सुपार्श्वचरित्र १६–२०

८. ज्वालिनी/ज्वाला/ज्वालामालिनी/भृकुटि

चंद्रोज्ज्वलां चक्रशरासपाशचर्मत्रिशूलेषुभषासिहस्ताम् ।
श्रीज्वालिनी सार्द्धधनुःशतोच्चजिनाननां कोणगतां भजामि ।।

आशाधर, ३ १६२

चक्रं चापमहीशपाशफलके सव्यैश्चतुर्भि : करै
रन्यैः शूलमिषु भषं ज्वलदसि धत्तेऽत्र या दुर्जया ।
तां इन्द्रप्रभदेवसेवनपरामिष्टार्थसार्थप्रदाम्
ज्वालामालकरालमौलिकलिता देवा यजे ज्वालिनीम ।।

नेमिचन्द्र, ३४३

ज्वालिनी महिषारूढा देवी श्वेता भुजाष्टका ।
काण्डवज्रत्रिशूलं च धत्ते पाशे धनुर्भषम् ।।

वसुनन्दि, ५ ३१

पीता विडालगमना भृकुटिश्चतुर्दो
र्वामे च हस्तयुगले फलकं सुपर्शुम् ।
तत्रैव दक्षिणकरेऽप्यसिमुद्गरौ च
विभ्रत्यनन्यहृदयान् परिपातु देवी ।।

आचारदिनकर उदय ३३,पन्ना १७७.

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना भृकुटिदेवी पीतवर्णा वराह
(विडाल) वाहना चतुर्भुजा खड्गमुद्गरान्वितदक्षिणभुजां
फलकपरशुयुतवामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

खड्गमुद्गरसंयुक्तौ बिभ्राणा दक्षिणौ करौ ।
वामौ फलकपरशुशालिनौ हंसवाहना ।।
सुवर्णवर्णा भृकुटी प्रभोःशासनदेव्यभूत ।

अमरचन्द्र, अष्टमजिनचरित्र, १८-१६

९ महाकाली/सुतारा

कृष्णा कूर्मासना धन्वशतोन्नतजिनानना ।
महाकालीज्यते वज्रफलमुद्गरदानयुक् ।।

आशाधर, ३/१६३

या वज्रमत्यूर्जितमातुलुंगं धत्ते स्फुरन्मुद्गरमिष्टदानम् ।
तां पुष्पदन्तप्रभुपादसेवामवतां महाकालिमिमा महामि ।।
नेमिचन्द्र, ३४३

देवी तथा महाकाली विनीता कूर्मवाहना ।
सवज्रमुद्गरा कृष्णफलहस्ता चतुर्भुजा ।।
वसुनन्दि, ५/३३

वृषभगतिरथोद्यच्चारुबाहा चतुष्का
शशधरकिरणभा दक्षिणे हस्तयुग्मे ।
वरदरसजमाले बिभ्रती चैव वामे
सृणिकलशमनोज्ञा स्तात् सुतारा महार्घ्ये ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना सुतारादेवी गौरवर्णा वृषवहाना चतुर्भुजा वरदाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणभुजा कलशाकुशान्वित-वामपाणिं चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

दक्षिणौ वरदं साक्षसूत्रं च दधती भुजौ ।।
वामौ कलशाकुशाङ्को गौराङ्गी वृषवाहना ।
सुतारा सुविधेरासीत् तीर्थे शासनदेवता ।।
अमरचन्द्र, सुविधिजिन चरित्र, १८-१९

९. मानवी /अशोका

झषदामरुचकदानोचितहस्ता कृष्णकालगा हरिताम् ।
नवतिधनुस्तुग्जिनप्रणतामिह मानवी प्रयजे ।।
आशाधर ३।१६४

ऊर्ध्वद्विहस्तोद्धृतमत्स्यमाला अधोद्विहस्तात्तफलप्रदानाम् ।
वामादिन. शीतलनाथयक्षी महर्द्धिका मानवि मानये त्वाम् ।।
नेमिचन्द्र, ३४३

मानवी च हरिद्वर्णा झषहस्ता चतुर्भुजा ।
कृष्णशूकरसंस्था च फलहस्ता वरप्रदा ।।
वसुनन्दि, ५।३५.

नीला पद्मकृतासना वरभुजैर्वेदप्रमाणैर्युता
पाशं सद्वरदं च दक्षिणकरे हस्तद्वये बिभ्रती ।
वामे चाङ्कुशवर्मणी बहुगुणं शांता विशोका जनं
कुर्यादासनसंस्था गणे. दरिविना नत्याङ्कितानन्दितं ।।

आचारदिनकर उदय ३३, पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना अशोका देवी मुद्गवर्णा
पद्मवाहना चतुर्भुजा वरदपाशयुक्तदक्षिणकरा फलांकुशयुक्त-
वामकरा चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

दक्षिणौ वरद पाशशोभितं बिभ्रता भुजौ ।
वामौ फलाङ्कुशधरौ मुद्गाभाब्जासनाजनि ।।
अशोकाख्या श्रीशीतलनाथे शासनदेवता ।

अमरचन्द्र, शीतलनाथचरित्र, १९-२०

११. गौरी/मानवी

समुद्गराब्जकलशा वरदा कनकप्रभाम ।
गौरी यजेऽभिधनु प्राशुदेवां मृगोपगाम ।।

आशाधर,३।१६५

दोर्भिश्चतुर्भिर्द्रघण पयोज त्वा बिभ्रतीं कुसुमसभोस्थदानाम ।।
श्रेयोजिनश्रीपदपद्मभृंगी गौरीं यजे विघ्नविघातकारीम् ।।

नेमिचन्द्र, ३८८

पद्महस्ता सुवर्णाभा गोरीदेवी चतुर्भुजा ।
जिनेन्द्रशासने भक्ता वरदा मृगवाहना ।।

वसुनन्दि, ५।२७.

श्रीवत्साप्यथ मानवी शशिनिभा मातङ्गजिद्वाहना ।
वामं हस्तयुगं घटाङ्कुशयुतं तस्मादितरं दक्षिणम ।।
गाढं स्फाजितमुद्गरेण वरदेनालंकृतं बिभ्रती
पूजायां सकलं निहन्तु कलुषं विश्वत्रयस्वामिन ।।

आचारदिनकर, उदय ३३,पन्ना१७७.

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना मानवी देवी गौरवर्णा
सिंहवाहना चतुर्भुजा वरदमुद्गरान्वितदक्षिणपाणि
कलशांकुशयुक्तवामकरा चेति ।

निर्वाणकलिका पन्ना ३५

देवी च मानवी गौरागौरा सिंहवाहना ।
वरदं मुद्गरप्रायं बिभ्राणा दक्षिणौ करौ ।
कलशेनाकुशेनापि प्रशस्यौ दक्षिणेतरौ ।।
अमरचन्द्र, एकादशजिनचरित्र,२०-२१

१२. गांधारी/चण्डा

सपद्ममुसलाम्भोजदाना मकरगा हरित् ।
गांधारी सप्तर्तीष्वामतुंगप्रभनताच्यते ।।
आशाधर ३।१६६

लीलाबुजाकोपरि हस्तयुग्मामधोद्विहस्ते मुसलेष्टदानाम्
त्वा वासुपूज्यप्रमिताम्नरगां गांधारि मान्ये बहु मानयामि।।
नेमिचन्द्र,३४४

गांधारी मजका देवी हरिद्भासा चतुर्भुजा ।
मुशलं पद्मयुग्मं च धत्ते मकरवाहना ।।
वसुनन्दि,५।३६

श्यामसना तुरगासना चतुर्दो करयोर्दक्षिणयोर्वरं च शक्तिम् ।
दधती किल वामयो: प्रसून सुगदा सा प्रवरावताच्च चण्डा ।।
आचारदिनकर, उदय ३३,पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना प्रचण्डादेवी श्यामवर्णा अश्वारूढा
चतुर्भुजा वरदशक्तियुक्तदक्षिणकरा पुष्पगदायुक्तवामपाणि चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३५

देवी चण्डाह्वया श्यामधामदेहाश्ववाहना ।।
बिभ्राणा वरद शक्तिधारिण दक्षिणौ भुजौ ।
पुष्पेण गदया युक्तौ दधाना दक्षिणेतरौ ।।
अमरचन्द्र, वासुपूज्य चरित्र, १८-१९

१३. वैरोटी/विदिता

षष्टिदंडोच्चतीर्थेशनता गोनसवाहना ।
ससर्पचापसर्पेषुर्वैरोटी हरिताच्यते ।।
आशाधर,३।१६७

ऊर्ध्वेन हस्तद्वितयेन सर्पावध.स्थितेनोर्जितचापबाणौ ।
यजे वहन्तो विमलेशयक्षी वरोटिका नाटितविघ्नकोटिम् ।।
नेमिचन्द्र, ३४४

वैरोटी नामतो देवी हरिद्वर्णा चतुर्भुजा ।
हस्तद्वयेन सर्पौ द्वौ धत्ते घोनसवाहना ।।
वसुनन्दि,५।४१

विजयाम्बुजगा च वेदबाहुः कनकाभा किल दक्षिणद्विपाण्योः
शरपाशधरा च वामपाण्यार्विदिता नागधनुर्धराऽववताद्वा ।।
आचारदिनकर, उदय ३३ पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना विदिता देवी हरितालवर्णा
पद्मारूढा चतुर्भुजा बाणपाशयुक्तदक्षिणपाणि धनुर्नाग-
युक्तवामपाणि चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

१४. अनंतमती /अंकुशा

हेमाभा हंसगा चापफलवाणवरोद्यता ।
पचाशच्चापतुंगार्हद्भक्तानन्तमतीज्यते ।।
आशाधर, ३/१६८

अधिज्यधन्वोत्तमपात्तलुंगं निशातबाणं दधताप्टदानम् ।
समर्चितानंतमतीं प्रसन्ना भयादिहानंतजिनेशयक्षी ।।
नेमिचन्द्र, ३४५

तथानंतमती देवी हेमवर्णा चतुर्भुजा ।
चापं वाणं फलं धत्ते वरदा हंसवाहना ।।
वसुनन्दि,५।४३

पद्मासनोज्ज्वलतनुश्चतुराढ्यबाहुः
पाशासिलक्षितमुदक्षिणहस्तयुग्मा ।
वामे च हस्तयुगलेङ्कुशखेटकाभ्या
रम्यांकुशा दलयतु प्रतिपक्षवृन्दम् ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना अंकुशा देवी गौरवर्णा
पद्मवाहना चतुर्भुजा खड्गपाशयुक्तदक्षिणकरां
चर्मफलकाकुशयुतवामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

अङ्कुशा नाम्ना देवी तु गौराङ्गी कमलासना ।।
दक्षिणे फलकं वामे त्वकुशं दधती करे ।
अनन्तस्वामिनस्तीर्थेऽत्रिन्ना शासनदेवता ।।

अमरचन्द्र, अनन्तजिनचरित्र, १९–२०

१५. मानसी /कन्दर्पा

साब्जधनुर्दानाकुशशरोत्पला व्याघ्रगा प्रवालनिभा ।
नवपचकचापोच्छ्रितजिननम्रा मानसीह मान्येत ।।

आशाधर, ३/१६६

अंभोरुहं कार्मुकमिष्टदान धनेकुश मार्गणमुत्पलं च ।
दधाति वै धर्मजिनशयक्षी या मानसीमा बहु मानयामि ।।

नेमिचन्द्र, ३४५

देवता मानसी नाम्ना षड्भुजा विद्रुमप्रभा ।
व्याघ्रवाहनमारूढा नित्य धर्म्मानुरागिणी ।।

वसुनन्दि, ५/४५

कन्दर्पाधृतपरपन्नगाभिधाना
गौरामा झषगमना चतुर्भुजा च ।
सत्पद्माभययुतवामपाणियुग्मा
कल्हाराङ्कुशभृतदक्षिणद्विपाणि: ।।

आचारदिनकर, उदय ३८, पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना कन्दर्पा देवी गौरवर्णा
मत्स्यवाहना चतुर्भुजां उत्पलाकुशयुक्तदक्षिणकरा
पद्माभययुक्तवामहस्तां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

कन्दर्पा नाम देवी तु गौराङ्गा मीनवाहना ।।
उत्पलाङ्कुशसंयुक्तौ दक्षिणौ दधती भुजौ ।
वामौ सपद्माभयदौ श्रीधर्मस्वामिशासने ।।

अमरचन्द्र, धर्मजिनचरित्र, २०-२१

१६. महामानसी / निर्वाणी

चक्रफलेंडिवराङ्कितकरां महामानसीं सुवर्णाभाम् ।
शिखिगां चत्वारिंशद्धनुरुन्नतजिननतां प्रयजे ।।

आशाधर, ३।१७०

रथांगपाणि फलपूरहस्तां मीनाशयां दानकरामजेयाम् ।
शान्तीशपादाम्बुजदत्तचित्तां कान्तां महामानसि मानये त्वाम् ।

नेमिचन्द्र ३४५

सा महामानसी देवी हेमवर्णा चतुर्भुजा ।
फलेंढचक्रहस्तासौ वरदा शिखिवाहना ।।

वसुनन्दि, ५।४०

पद्मस्था कनकरुचिश्चतुर्भुजाभृत्
कल्हारोत्पलकलितापसव्यपाण्या ।
कारकाम्बुजसव्यपाणियुग्मा
निर्वाणा प्रदिशतु निर्वृतिं जनानाम् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना निर्वाणी देवी गौरवर्णा पद्मासनां चतुर्भुजा पुस्तकोत्पलयुक्तदक्षिणकरा कमण्डलुकमलयुक्त-वामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

१७. जया / बला

सचक्रशङ्खासिवरां रुक्माभां कृष्णकोलगाम् ।
पंचत्रिंशद्धनुस्तुङ्गजिननम्रां यजे जयाम् ।।

आशाधर, ३/१७१

चक्रं समाक्रान्तविरोधिचक्रं शंखं स्वभूकारकृतातिभीतिम् ।
अत्युग्रखड्गं वरमादधाना यजे जया कुंथुजिनेन्द्रयक्षीम् ।।

नेमिचन्द्र, ३४५-३४६

जयदेवी सुवर्णाभा कृष्णशूकरवाहना ।
शङ्खासिचक्रहस्तासौ वरदा धर्म्मवत्सला ।।

वसुनन्दि,५।४६

शिखिगा सुचतुर्भुजासिपीता फलपूर दधती त्रिशूलयुक्तम् ।
करयोरपसव्ययोश्च सव्य करयुग्म तु भुशुण्डिभृद्बलाख्यात् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना बला देवी गौरवर्णा मयूरवाहना चतुर्भुजा बीजपूरकशूलान्वितदक्षिणभुजा मुषण्डिपद्मान्वित-वामभुजा चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

देवी बलाह्वया गौरदेहा बर्हिणवाहना ।।
बीजपूरकशूलाङ्कौ बिभ्राणा दक्षिणा भुजौ ।
वामौ मुषण्डीपद्माङ्कौ कुन्था शासनदेव्यभूत ।।

अमरचन्द्र, कुन्थुजिनचरित्र, १९-२०

१८. तारावती/धारिणी

स्वर्णाभा हंसगा सर्पमृगवज्रवरोद्धुराम् ।
चाये तारावतीं त्रिशच्चापोच्चप्रभुभाक्तिकाम् ।।

आशाधर,३।१७२

देवी तारावती नाम्ना हेमवर्णा चतुर्भुजा ।
सर्पं वज्रं मृगं धत्ते वरदा हंसवाहिनी ।।

वसुनन्दि,५।५१

नीलाभाब्जपरिष्ठिता भुजचतुष्काढ्यापसव्ये कर-
द्वन्द्वे कैरवमातुलिंगकलिता वामे च पाणिद्वये ।
पद्माक्षावलिधारिणी भगवती देवार्चिता धारिणी
सधर्म्याप्यखिलस्य दस्युनिवहं दूरीकरोतु क्षणात् ।।

आचारदिनकर, उदय ३३,पन्ना १७८

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना धारिणी देवी कृष्णवर्णा चतुर्भुजा पद्मासना मातुलिंगोत्पलान्वितदक्षिणभुजा पाशाक्षसूत्रान्वित-वामकरा चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

मातुलिंगोत्पलधरौ बिभ्रा णा दक्षिणौ भुजौ ।
पद्माक्षसूत्रिणौ वामौ नीलाङ्गी नलिनासना ।।
धारणीत्यरनाथस्य तीर्थे शासनदेवता ।
प्रभो सर्वपरीवारोऽभवद् विहरन्निजवान ।।

अमरचन्द्र, अरजिनचरित्र, १९–२०

१९. अपराजिता / वैरोटी

पञ्चविंशतिचापोच्चदेवसेवापराजिता ।
शरभस्थाऽर्च्यते खेटफलासिवरयुक् हरित् ।।

आशाधर, ३/१७०

हस्तद्वयेनोपरिमेन खेटकृपाणमन्येन फल प्रदानम् ।
उद्बिभ्रती मल्लिजिनेन्द्रयक्षी गृह्णातु पूजामपराजितेयम् ।।

नेमिचन्द्र, ०८७

अष्टापद समारूढा देवी नाम्नापराजिता ।
फलासिखेटहस्तासौ हरिद्वर्णा चतुर्भुजा ।।

वसुनन्दि, ५/५८

कृष्णा पद्मकृतासना शुभमयप्राज्यत्वचतुर्बाहुभृत
मुक्ताक्षावलिमदभृत च वरद सपूर्णमुद्बिभ्रता ।
चञ्चद्दक्षिणपाणियुग्ममितरं सन्वामपाणिद्वय
मच्छक्ति फलपूरक प्रियतमा नागाधिपास्यावतु ।।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना वैरोट्या देवी पद्मासना
चतुर्भुजा वरदाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणकरा मातुलिंग–
शक्तियुतवामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

वरद साक्षसूत्र च दक्षिणौ बिभ्रती भुजौ ।
वामौ पुनर्मातुलिंगशक्त्यङ्कौ कमलासना ।।
वैरोट्या गजपट्टाभा मल्लेः शासनदेव्यभूत् ।

अमरचन्द्र, मल्लिजिनचरित्र, ६०–६१

२०. बहुरूपिणी/नरदत्ता

अष्टानना महाकाया जटामुकुटभूषिता ।
कृष्णनागसमारूढा देवता बहुरूपिणी ।।
वसुनन्दि, ५/५५

पीना विशनिचापोच्चस्वामिका बहुरूपिणीम्
यजे कृष्णाहिगा खेटफलखड्गवरान्तराम् ।।
आशाधर ३/१७४

या खेटकं मंगलमातुलुगं कृपाणमुग्रं वरमादधाति ।
सा न. प्रसन्ना मुनिसुव्रतार्हत्भक्तास्तु भव्यबहुरूपिणीष्टया ।।
नेमिचन्द्र, ३४७

भद्रासना कनकरुक्तनुरुच्चबाहु–
रक्षावलीवरददक्षिणपादयुग्मा ।
सन्मातुलिङ्गयुतशूलिनदन्यपाणि
रच्छुप्तिका भगवती जयतान्नृदत्ता ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना नरदत्तां देवी गौरवर्णा
भद्रासनारूढा चतुर्भुजा वरदाक्षसूत्रयुतदक्षिणकरा
बीजपूरककुम्भयुतवामहस्ता चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

२१. चामुण्डा/गाधारी

अष्टबाहुश्चतुर्वक्त्रा रक्ताक्षा नदिवाहना ।
चामुण्डा देवता भीमा हरिद्वर्णा चतुर्भुजा ।।
वसुनन्दि, ५ ५७

चामुण्डा यष्टिखेटाक्षसूत्रखड्गोत्कटा हरित् ।
मकरस्थार्च्यते पचदशदंडोन्ननेशभाक् ।।
आशाधर, ३ १७५

इष्टयास्तु तुष्टा धृतयष्टिखेटसव्यद्विहस्तान्यकरद्वयेन ।
दिव्याक्षमालामसिमादधाना चामुडिकां श्रीनमिमानमन्तीम् ।।
नेमिचन्द्र, ३४७

हंसानना शशिसितोरुचतुर्भुजाढ्या खड्ग वर सदपसव्यकरद्वये च ।
सव्ये च पाणियुगले दधती शकुन्तं गान्धारिका बहुगुणा फलपूरमव्यात् ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७७

गांधारीदेवी श्वेतां हंसवाहना चतुर्भुजा वरदखड्गयुक्त-
दक्षिणभुजद्वया बीजपूरकुंभ (कुन्त ?) युतवामपाणिद्वया चेति ।
निर्वाणकलिका, पन्ना ३६

गांधारी शासने देवी श्वेताङ्गी हंसवाहना ।
वरदं खड्गिनं बाहू दक्षिणावपरौ पुनः ।।
सबीजपूरौ बिभ्राणा सन्निधौ श्रीनमिप्रभोः ।
पृथ्व्यां विहरतः सर्वपरीवारस्तदभूदिति ।
अमरचन्द्र, नमिजिनचरित्र, २०-२१

२२, आम्रा /अम्बिका

द्विभुजा सिंहमारूढा आम्रादेवी हरित्प्रभा ।।
वसुनन्दि, ५/५२

सव्येकद्युपगप्रियंकरसुतुक्प्रीत्यै करे बिभ्रती
दिव्याम्रस्तबकं शुभंकरकरश्लिष्टान्यहस्तांगुलिम् ।
सिंहे भर्तृचरे स्थिता हरितभामाम्रद्रुमच्छायगा
वंदारुं दशकार्मुकोच्छ्रयजिनं देवीमिहाम्रां यजे ।।
आशाधर, ३/१७६

धत्ते वामकटौ प्रियंकरसुतं वामे करे मंजरी-
माम्रस्यान्यकरे शुभंकरतनूजोहस्तं प्रशस्ते हरौ ।
आस्ते भर्तृचरे महाम्रविटपिच्छायं श्रितामीष्टया
यासौ तां नुतनेमिनाथपदयोर्नम्रामिहाम्रां यजे ।।
नेमिचन्द्र ३४७

सिंहारूढा कनकतनुरुग्वेदबाहुश्च वामे
हस्तद्वन्द्वे कुशतनुभुवौ बिभ्रती दक्षिणेऽत्र ।
पाशाम्राली सकलजगतां रक्षणैकार्द्रचित्ता
देव्यम्बा नः प्रदिशतु समस्ताघविध्वंसमाशु ।।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्नां कूष्माण्डीं देवी
कनकवर्णां सिंहवाहनां चतुर्भुजां मातुलिङ्गपाशयुक्त-
दक्षिणकरां पुत्रांकुशान्वितवामकरां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

२३. पद्मावती

देवी पद्मावती नाम्ना रक्तवर्णा चतुर्भुजा ।।
पद्मासनांकुशं धत्ते स्वक्षसूत्रं च पङ्कजम् ।
अथवा षड्भुजा देवी चतुर्विंशतिसद्भुजा ।।
पाशासिकुंतबालेन्दुगदामुसलसयुतम् ।
भुजाषट्कं समाख्यातं चतुर्विंशतिरुच्यते ।।
शंखासिचक्रबालेन्दुपद्मोत्पलशरासनं ।
शक्तिपाशांकुशं घण्टां बाणं मुसलखेटकम् ।।
त्रिशूलं परशुं कुंतं वज्रं माला फलं गदा ।
पत्रं च पल्लवं धत्ते वरदा धर्मवत्सला ।।

वसुनन्दि, ५।६०-६४

येष्टुं कुर्कुटसर्पगा त्रिफणकोत्तंसा द्विषो यातषट्
पाशादिःमदसत्कृते च धृतशंखास्त्रादिका अष्टका ।
तां शानासरुणा स्फुरच्छृणिसरोजन्माक्षमाला वरां
पद्मस्था नवहस्तकप्रभुनता यायजिम पद्मावतीम् ।।

आशाधर, ३।१७७

पाशाद्यन्वितषड्भुजारिजयदा ध्याता चतुर्विंशति
शंखास्यादियुतान्करांस्तु दधती या क्रूरशान्त्यर्थदा ।।
शान्त्यै सांकुशवारिजाक्षमणिसद्दानैश्चतुर्भिः करैः
र्युक्तां ता प्रयजामि पार्श्वविनता पद्मस्थपद्मावतीम् ।।

नेमिचन्द्र, ३८७-८८

स्वर्णाभोत्तमकुर्कुटाहिगमना सौम्या चतुर्बाहुभद्
वामे हस्तयुजेङ्कुश दधिफलं तत्रापि वै दक्षिणे
पद्मं पाशमुदञ्चयन्त्यमविरत पद्मावतीदेवता
किन्नर्यचितनित्यपादयुगला संघस्य विघ्न ह्रियात् ॥

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

तस्मिन्नेव तीर्थे समुत्पन्ना पद्मावती देवी कनकवर्णा
कुर्कुटवाहना चतुर्भुजा पद्मपाशान्वितदक्षिणकरा
फलाकुशाधिष्ठितवामकरा चेति।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

२४. सिद्धायिका

सिद्धायिका तथा देवी द्विभुजा कनकप्रभा ॥
वरदा पुस्तकं धत्ते सुभद्रासनमाश्रिता।

वसुनन्दि, ५।६६–६७

सिद्धायिका सप्तकरोच्छ्रितांगजिनाश्रयं पुस्तकदानहस्ताम्।
श्रिता सुभद्रासनमत्र यज्ञे हेमद्युति सिंहगति यजेहम् ॥

आशाधर, ३/१७८

बिभर्ति या पुस्तकमिष्टदान मव्यापसव्येन करद्वयेन।
भद्रासनामाश्रितवर्धमाना सिद्धायिका सिद्धिकरी भजेताम् ॥

नेमिचन्द्र, ३४८

देवी सिद्धायिका चामीदासीना गजवाहने।
हरिच्छविः पुस्तकाढ्याऽभयदौ दक्षिणौ करौ ॥
वामौ तु दधती बीजपूरवल्लकिसंयुतौ।
प्रभोरभूता ते नित्यामस्तं शासनदेवते ॥

अमरचन्द्र, २८८-२८६

सिंहस्था हरिताङ्गरुक् भुजचतुष्केण प्रभावोजिता
नित्यं धारितपुस्तकाभयलसद्वामान्यपाणिद्वया।
पाशाम्भोरुहराजिवामकरभाग् सिद्धायिका सिद्धिदा
श्रीसंघस्य करोतु विघ्नहरणं देवार्चने संस्मृता ॥

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

तत्तीर्थोत्पन्ना सिद्धायिका हरितवर्णा सिंहवाहना
चतुर्भुजा पुस्तकाभययुक्तदक्षिणकरा मातुलिंग--
वीणान्वितवामहस्ता चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

सर्वाह्ण यक्ष

उत्तुंग शरदभ्रशुभ्रमुचितं सद्विभ्रमं बिभ्रत
यो दिव्यद्विरमास्रह शिरसि श्रीधर्मचक्रं दधौ ।
हस्ताभ्याममितद्युति करयुगेनान्येन बद्धाञ्जलि
त जैनाध्वररक्षणक्षममिमं सर्वाह्णयक्षं यजे ।।

नेमिचन्द्र, पन्ना ६६

अनावृत यक्ष

मेरोरीशानभागे कुरुषु मणिमयस्यान्तरेषु स्थितस्य
श्रीजंबूभूरुहस्य स्थितिजुषमनिशं पूर्वशाखास्थमौघे ।
शंखं चक्रं च कुण्डि दधतमुरुकरैरक्षमालां च कृष्णं
पक्षेन्द्रारूढमस्यां भवदिशि विधिनानावृतेन्द्रं भजामि ।।

नेमिचन्द्र, ३६३

जंबूवृक्षस्य नानामणिमयवपुषः प्राज्यजंबूवृतस्य
प्राक्शाखामावसन्तं नवजलदरुचं पक्षिराजाधिरूढम् ।
कुण्डीशंखाक्षमालारथचरणकरं श्राणितःशेषजंबू
द्वीपश्रीकं यजेस्मिन् विधुरविधुतयेनावृतं व्यंतरेन्द्रम् ।।

आशाधर, ३।२०१

ब्रह्मशांति यक्ष

ब्रह्मशान्ति पिङ्गवर्णं दंष्ट्राकरालं जटामुकुटमण्डितं
पादुकारूढं भद्रासनस्थितमुपवीतालंकृतस्कंधं
चतुर्भुजं अक्षसूत्रदण्डकान्वितदक्षिणपाणिं कुण्डिकाछत्रा--
लंकृतवामपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

तुम्बरु यक्ष

भगवदर्हत्प्रतिपन्नप्रतिहारभावत्वेनाधिष्ठितद्वाराभ्यन्तराय
जटामुकुटधारिणे नरशिरःकपालमालाभूषणशिरोधराय
खट्वांगपाणये तुम्बरवे स्वाहा।

निर्वाणकलिका, बिम्बप्रतिष्ठाविधि, पन्ना २०

क्षेत्रपाल

ऊर्ध्वस्थेन करद्वयेन फलकं खड्गं कराभ्यामधो
वतिभ्यां मुरुसारमेयमसितं स्फूर्जद्गदां बिभ्रतम् ।
प्रत्यूहक्षपणक्षमं सभवितक्षेत्रव्रज क्षेत्रपम्
तैलेनाद्य सताभिषिच्य विदधे सिंदूरकैर्धूसरम् ।।

नेमिचन्द्र, ११५-११६

क्षेत्रपालो जिनार्चांकजटामुकुटभूषित ।
सिंदूरांकितसन्मौलिरंजनाद्रिसमनिभः ।।
सारमेयसमारूढो नग्नो नागविभूषणः।
त्रिलोचनश्चतुर्बाहुः तैलाभ्यमृदुर्विग्रहः।।
स्वर्णपात्र गदां बिभ्रड्डमरू धनुकामपि ।
जिनेश्वर जिनमूर्तीन् वदारुर्धर्मवत्सलः ।।
निःपत्नीको जिनच्छाया. प्रत्यूहक्षपणक्षमः ।
एवंविधगुणा ध्येयः पूजनीय. सुवस्तुभि. ।।

भट्टाकलंक, प्रतिष्ठाकल्प

नम. क्षेत्रपालाय कृष्णगौरकाञ्चनधूसरकपिलवर्णाय
कालमेघमेघनादगिरिविदारण आह्लादन प्रह्लादन
खञ्जकर्भीमगामुखभूषणदुरितविदारणदुरितारि
प्रियकरप्रेतनाथप्रभृतिप्रसिद्धाभिधानाय विंशतिभुजदण्डाय
बर्बरकेशाय जटाजूटमण्डिताय वासुकीकृतजिनोपवीताय
तक्षककृतमेखलाय शेषकृतहाराय नानायुधहस्ताय
सिंहचर्मावरणाय प्रेतासनाय
कुक्कुरवाहनाय त्रिलोचनाय आनन्दभैरवाद्यभैरवपरिवृताय
चतुःषष्टियोगिनीमध्यगताय ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८१.

क्षेत्रपालं क्षेत्रानुरूपनामानं श्यामवर्णं बर्बरकेश—
मावृत्तपिङ्गनयन विकृतदंष्ट्रं पादुकाभिरूढं
नग्नं कामचारिणं षड्भुजं मुद्‌गरपाशडमरूका-
न्वितदक्षिणपाणिं श्वानाकुशगेडिकायुतवामपाणि
श्रीमद्‌भगवतो दक्षिणपार्श्वे ईशानाश्रितं दक्षिणाशामुखमेव
प्रतिष्ठाप्यमिति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३८,३९

प्रासादे वा गृहे वा क्षेत्रपालस्य द्विधा मूर्ति कायरूपा वा
लिंगरूपा वा ।

आचारदिनकर, उदय ३३,पन्ना २१०

अष्ट मातृका

इन्द्राणी वैष्णवी कौमारी वाराही ततः परा ।
ब्रह्माणी च महालक्ष्मी चामुण्डा च भवानि च ।।
इत्यष्टौ देवता अत्र दिक्षिवद्राण्यादिकास्तथा ।
ब्रह्माण्याद्या विदिक्ष्वेव लेख्या विघ्नविनाशये ।।

भट्टाकलंक, प्रतिष्ठाकल्प

दधतां पविमिन्द्राणी चक्रं वैष्णव्यसिं च कौमारी
सीरं वाराही मुशलं ब्रह्माणी गदां महालक्ष्मी ।
शक्तिं चामुण्डायति माहेशी भिण्डमालमाघ्नवन्तु
विघ्नान् प्रणवमुखाग्या गभस्वाहान्तमत्रविन्यस्ता. ।।

आशाधर, ३।२०७

इन्द्राणी

उत्तुंगमत्तद्विरदेन्द्ररूढा रूढाग्रवज्रायुधमुद्वहन्ती ।
ऐन्द्री वसत्यिन्द्रदिशीह वेद्या हेमप्रभा विघ्नविनाशनाय ।।

नेमिचन्द्र, ३६५

भगवति इन्द्राणि सहस्रनयने वज्रहस्ते सर्वाभरणभूषिते
गजवाहने सुराङ्गनाकोटिवेष्टिते काञ्चनवर्णे ········

आचरदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

वैष्णवी

या वैष्णवी विष्णुरथागयाना जिष्णोर्जिनेशस्तवने मुनीला ।
प्रत्यर्थिचक्रप्रतिघातचक्र धृत्वेयमास्ता दिशि सा यमस्य ।।

नेमिचन्द्र, ३६५

भगवति वैष्णवि शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गकरे
गरुडवाहने श्यामवर्णे······· ·

आचार्यदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

कौमारी

कौमारिका कोमलविद्रुमाभा शिखण्डियाना धृतमण्डलाग्रा ।
प्रचण्डमूर्तिर्वरुणात्प्रतीच्या वेद्या जिनेन्द्रात्वरविघ्नशान्त्यै ।।

नेमिचन्द्र, ३६६

भगवति कौमारि षण्मुखि शूलशक्तिधरे वरदाभयकरे
मयूरवाहने गौरवर्णे ·············

आचार्यदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

वाराही

वाराहिका वन्यवराहयाना श्यामप्रभार्भाकरर्मा:(?)रपाणि: ।
अत्रोत्तरस्या दिशि वेदिकायामास्ता समस्ताध्वरविघ्नशान्त्यै ।।

नेमिचन्द्र, ३६६

भगवति वाराहि वराहीमुखि चक्रखड्गहस्ते शेषवाहने
श्यामवर्णे ············

आचार्यदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

ब्रह्माणी

पद्मप्रभाका श्रितपद्मयाना विद्वेषिमग्रामकमुद्गराग्रा ।
ब्रह्माणिसंज्ञा जिनयज्ञवेद्या हुताशनाशा समलंकरोतु ।।

नेमिचन्द्र, ३६६

भगवति ब्रह्माणि वीणापुस्तकपद्माक्षसूत्रकरे हंसवाहने
श्वेतवर्णे आगच्छ ···········

आचार्यदिनकर, उदय ६, पन्ना १२

लक्ष्मी /महालक्ष्मी /त्रिपुरा

श्वेतच्छदाभोदुरुवाहनस्था लक्ष्मीर्गदालक्षितशस्त्रहस्ता ।
विघ्नापनोदाय दिशीह वेद्याः प्रवर्ततां दक्षिणपश्चिमायाम् ।।
नेमिचन्द्र, ३६६

भगवति त्रिपुरे पद्मपुस्तकवरदाभयकरे सिंहवाहने
श्वेतवर्णे ....

आचारदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

चामुण्डा

चामुडिका प्रेतगता समस्यमार्तण्डदीप्तिर्धृतदण्डशक्तिः ।
प्रत्यूहशान्त्यै दिशि वेदिकायाः प्रवर्ततामुत्तरपश्चिमायाः ।।
नेमिचन्द्र, ३६६

भगवति चामुण्डे शिराजालकरालशरीरे प्रकटितदशने
ज्वालाकुन्तले रक्तत्रिनेत्रे शूलकपालखड्गप्रेतकेशकरे
प्रेतवाहने धूम्रवर्णे..........

आचारदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

रुद्राणी /माहेश्वरी

उच्चंडशावकरगते धृतभिंडिमाले रुद्राणि रुद्रामलचंद्रकान्ते ।
पूर्वोत्तरस्या दिशि तिष्ठ वेद्या विद्यानिधेरध्वरविघ्नशान्त्यै ।।
नेमिचन्द्र, ३६७

भगवति माहेश्वरि शूलपिनाककपालखट्वाङ्गकरे चन्द्रार्धललाटे
गजचर्मावृते शेषाहिबद्धकाञ्चीकलापे त्रिनयने वृषभवाहने
श्वेतवर्णे आगच्छ ....

आचारदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

षष्ठी

ओ षष्ठि आम्रवनामीने कदंबवनविहारिपुत्रद्वययुते नरवाहने
श्यामागि इह आगच्छ...

आचारदिनकर, उदय ६, पन्ना १३

शान्ति / देवी

······धवलद्युतिवरदकमलपुस्तककमण्डलुभूषितानेकपाणिसकलजनशान्तिकारिके शान्तिदेव्यै स्वाहा ।

निर्वाणकलिका, बिम्बप्रतिष्ठाविधि, पन्ना १८

तथा शान्तिदेवता धवलवर्णा कमलासना चतुर्भुजा वरदाक्षसूत्रयुक्तदक्षिणकरा कुण्डिकाकमण्डलुवन्वितवामकरां चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३७

१. इन्द्र

रूप्याद्रिस्पर्द्धिघंटायुगरणत्कटटंकारनानाविराम
द्रूपामस्यानिचित्रोज्ज्वलविलसल्लक्ष्मवर्मद्वयस्थं ।
दृप्यत्सामानिकादिप्रिदशपरिवृतं स्वप्नजन्यादिदर्वी
लोलाक्षं वज्रभृद्रोद्भटसुभगरुचं प्रागिहेन्द्रं यजामि ।।

आशाधर, ३।१८७

उत्तुंगं शरदभ्रशुभ्रमुचितात्रभ्रंकुरोद्विभ्रमम
तं दिव्याभ्रमुवल्लभं द्विरमुपारूढ प्रगाढश्रियम् ।।
दंभोलिश्रितपाणिमप्रतिहताज्ञैश्वर्यविभ्राजितं
शच्या सयुतमाह्वये विमलतामिन्द्रं जिनेन्द्राध्वरे ।।

नेमिचन्द्र, ५४

नमः श्रीइन्द्राय तप्तकाञ्चनवर्णाय पीताम्बराय ऐरावणवाहनाय वज्रहस्ताय······पूर्वदिगधीशाय च ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७८

२. अग्नि

आग्नेय्यां दिशि मेषवाहनसमारूढं सुधमच्छ्रजं
आग्नेयादिवधूजनाहितदृशं ज्वालाज्वलच्छेखरम् ।
कल्पान्तां ग्रहमस्तरश्मिसदृशं स्फुर्जत्प्रभोल्कायुधं
गंधाद्यर्घमदो विनीयं हुतभुक् देवं समाह्वानये ।।

वसुनन्दि, ६।५८

स्वमारूढघूम्रगलचतुरपृथुप्रांशुभगाभनुग
स्थं रौद्रापिंगक्षणयुगमनूल ब्रह्मसूत्र शिखाम्भम् ।
कुंडी वामप्रकोष्ठे दधतमितरपाण्यात्तपुण्याक्षसूत्र
स्वाहान्वीतं धिनोमि श्रुतिमुखरसभ प्राच्यपाच्यतरेऽग्निम् ।।

आशाधर, ३।१८८

शोणभ्रूश्मश्रुकेशावकमरुणरुच जाज्वलज्ज्वालशक्ति
कुंडी वामेऽक्षमालामितरकरतले बिभ्रत सोपवीतम् ।
स्वाहायुक्त नियुक्त जिनयजनविधेर्दोरधूर्यादिकारे
सद्धेदाधापिमस्याकृतमनलमलकारसार यजेऽहम ।।

नेमिचन्द्र, ३५४

नम अग्नये सर्वदेवमुख य प्रभूततेजोमयाय
छागवाहनाय नीलाम्बराय धनुर्बाणहस्ताय

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६

नत्र अग्नि अग्निवर्णं मषवाहन सप्तशिख शक्तिपाणि चेति ।

निर्वाणकलिका पन्ना ३८

३. यम

प्रोद्यत्प्रचण्डमहिषोत्तमयानमस्थ दोर्दण्डनकराद्धृतदण्डचण्ड-
छायागनादिपरिवारपरिष्कृतागमाह्वानये यममिमु दिशिदक्षिणस्याम्।।

वसुनन्दि, ६।५९

कल्पान्ताब्दोधजेतृ निगुणफाणगुणादगाहितग्रैवघण्टा
टंकारारुग्रश्र गक्रमहतमधरव्रातरत्नाक्षमस्थम् ।
चण्डार्चि.कोदण्डाट्टमरकरमानिकरदाशादिलोक
कार्ष्ण्योद्रेक नृशमप्रथममथ यम दिश्यराच्या यजामि ।।

आशाधर, ३।१८९

गवलयुगलधृष्टाम्भोदमारूढवन्त महितमहिषमुच्चैरजनाद्रीन्द्रकल्पम् ।
असितमहिषभष भीषण चडदडविदितमदयधर्म व्याह्वय धर्मराजम्।।

नेमिचन्द्र,५२

नमो यमाय धर्मराजाय दक्षिणदिगधीशाय कृष्णवर्णाय
चर्मविरणाय महिषवाहनाय दण्डहस्ताय ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६

तथा यमराजं कृष्णवर्णं महिषवाहनं दण्डपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, पन्ना ३८

४. नैऋंति

याम्यापराया दिशि नैऋंतेश्वर
स्वैर्भृत्यनिकरैश्च संयुतम् ।
कार्तक्षयानं धृतवज्रमुद्गर
माह्वानये जैनमहामहात्मने ।।

वसुनंदि, ६।६०

आरूढं धूमधूम्रायतविकटसटारम्नाग्रदिग्रूक्षरूक्षमा
लक्षाक्षांशिष्टा स्फुटरश्चितकला यादृमाभागमृक्ष ।
क्रूरक्रव्यात्परीतं तिमिरचयरुच मद्गरक्षण्णरौद्र
क्षुद्रौघ त्रान याज्ञा नरहरनमहं नैऋंत तर्पयामि ।।

आशाधर, ३।१६०

तमालनील पुन्नावलम्बिस्फुटत्सटाभारमदारमृक्षम् ।
आरूढमार्भीलमुद्दृढशक्ति वधयत नैऋंतमाह्वयामि।।

नेमिचन्द्र, ७२

नमो निऋंतय निऋंत्यादिगधीशाय धूम्रवर्णाय
व्याघ्रचर्मावृताय मुद्गरहस्ताय प्रेतवाहनाय ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७६

तथा नैऋंतिं हरितवर्णं शववाहनं खड्गपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

५. वरुण

करिमकरविमानारूढमिद्धं सुशुभ्र
वरुणममरमुख पाशहस्त सभार्यम्
स्वपरजनसमेत च्वस्तनिःशेषविघ्नं
अपरदिशि सपर्यापूर्वक व्याहरामि ।।

वसुनन्दि,६।६१

नित्याभः कोलिपाङ्कटकपिलविशच्छेदमोदर्यदंन
प्रोत्फुल्यद्दमेलन्करकरिमकरव्योमयानाधिरूढम् ।
प्रेखन्मुक्ताप्रवालाभरणभरमुपस्थावृदारादृताक्षं
स्फूर्जद्भीमाहिपाश वरुणमपरदिग्रक्षणं प्रीणयामि ।।
आशाधर, ३।१६१

करी कथंचिन्मकरः कथचिद् मत्यापयेज्जैनकथंचिदुक्तम् ।
यस्त करिप्राङ्मकरं गतोहिपाशोर्च्यते विश्रुतपाशपाणिः।।
नेमिचन्द्र,५३

नमो वरुणाय पश्चिमदिगधीश्वराय समुद्रवासाय
मेघवर्णाय पीताम्बराय पाशहस्ताय मत्स्यवाहनाय ।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७९

तथा वरुण धवलवर्ण मकरवाहन पाशपाणि चेति ।
निर्वाणकलिका, ३८

६, वायु

अपरोत्तरदिग्देशे प्रचण्डदोर्दण्डधृतमहावृक्षम
मृगवाहन सभार्य सपरिजनं वाह्वये पवनम् ।।
वसुनन्दि, ६।६२

वल्गच्छृगाग्रभिन्नाबुदपटलगलत्तोयपीतश्रमाभ्र-
प्लुत्यस्तम्वातरंहः खरकपिनकुलप्रावमारगम्मम ।
व्यालोलद्गात्रयत्र त्रिजगदसुधृतिस्यग्रमुग्रद्रुमास्त्र
सर्वार्यानिर्थसर्गप्रभूमनिकमुदक् प्रत्यगत· प्रगोर्मि।।
आशाधर, ३।१६२

य. पवधाराचतुर तुरंगं समारुरोहोरुमहीरुहास्त्रः
तं वायुवेगीयुतवायुदस्रं व्याह्वानये व्याहतयागविघ्नम् ।।
नेमिचन्द्र,५३

नमो वायवे वायव्यदिगधीशाय धूसरांगाय
रक्ताम्बराय हरिणवाहनाय ध्वजप्रहरणाय च ।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १७९

वायुं सितवर्णं मृगवाहनं वज्रां (ध्वजा) लंकृतपाणि चेति

निर्वाणकलिका,३८

७. कुबेर

इनस्ततो नाभिगिरेःसगर्भा गदां मलीला भ्रमयन्नुदीच्ये।
द्वारे निषण्णोनुचरैर्वितदैः कुबेरवीरानुसरोपचार ॥

आशाधर, ३।१८४

उत्तरस्या दिशायां विमानस्थितं भूरवित्तेश्वरयक्षवृंदार्चितम्
यक्षिणीभिर्वृत्तं दिव्यशस्त्रान्वितं व्याहराम कुबेरं सुशक्त्यान्वितम्॥

वसुनन्दि,६।६३

नमो धनदाय उत्तरदिगधीशाय सर्वयक्षेश्वराय
कैलासस्थाय अलकापुरीप्रतिष्ठाय शक्रकोशाध्यक्षाय
कनकाङ्गाय श्वेतवस्त्राय नरवाहनाय रत्नहस्ताय।

आचारदिनकर, उदय ३३,पत्रा १७६

कुबेरमनेकवर्णं निधिनवकारूढ निचूलकहस्तं
तुन्दिलं गदापाणि चेति।

निर्वाणकलिका, ३८

८. ईशान

कैलासाचलसंनिभायतमितोनुगागविभ्राजितं
पर्जन्योर्जितगर्जनं वृषभमारूढं जगद्रुद्रकम्।
नागाकल्पमनल्पपिंगलजटाजूटार्धचंद्रोज्जवलम्
पार्वत्याः पतिमाह्वये त्रिनयनं भास्वन्त्रिशूलायुधम्॥

नेमिचन्द्र,५८

ईशान्या शीतरश्मिद्युतिवृषभमहायानसंस्थवपाकं
रुद्राण्यालिंगितांगकपिलतरजटाजूटस्थचंद्रम्।
शूलास्त्रव्यग्रहस्तं भूमगणपरिवृतं कृष्णनागप्रभूषं
जैने पूज्योत्सवेस्मिन्भवनमभयमिहाह्वानयाम्यादराद्द्राक्॥

वसुनन्दि, ६।६४

नम श्री ईशानाय ईशानदिगधीशाय...श्वेतवर्णाय
गजाजिनवृताय वृषभवाहनाय पिनाकशूलधराय ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८०

तथेशानं धवलवर्ण वृषभवाहनं त्रिनेत्रं शूलपाणि चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

९. धरणेंद्र/नाग

वक्षोजस्तर्जिपृष्ठश्वसनसमनर. कूर्मराजाधिरूढ
क्षुद्रद्रोवे भकु आक्रमणत्रणमृणिस्फारणव्यग्रपाणिम् ।
संश्लिष्ट दृक्महस्त्रद्विनव्यघृणिफणारत्नरञ्जनवाल
व्रघ्नौद्यापीडमर्चिच्छ्लनमहियमधोर्चामि पद्मासमेनम् ॥

आशाधर ४ / ६१

ऐरावणोरुचरणातिपृथुत्वधर्म श्रीकूर्मवज्रनिभपृष्ठकृतप्रतिष्ठम्
व्याहूत्वानप धवलमकुशपाशहस्त पद्मार्पत फणिपतिफणिमौलिचूलम् ॥

नामचन्द्र, ५४

नमो नागाय पातालाधीश्वराय कृष्णवर्णाय
पद्मवाहनाय उरगहस्ताय च ।

आचारदिनकर, उदय ३३

नाग श्यामवर्ण पद्मवाहनमुरगपाणि चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

१०. सोम/ब्रह्मा

ऊर्ध्वाया दिश्यमेवद्युतिविशरसुधाधौतभूमण्डलात
प्राप्य चन्द्रेन्यभिख्यामिवकुमुदवनाह्लादनात्सर्वकानम् ।
रोहिण्याश्लिष्टमूर्त्तिद्विरदरिपुविमानस्थित कुन्तपाणि
दत्वार्घ चदनाद्यैज्जिनभवनविधौ सोममाहूवानयामि ॥

वसुनन्दि, ६ ६६

अरुणसितसटौघभ्राजितश्वेतगात्र-
प्रखरनखररह सिहमारूढवन्तम् ।
कुवलयमयमाल कान्तकातं सकुन्तं
सितनुनकरसाद्रं चंद्रमाहूवानयामि ॥

नेमिचन्द्र, ५४

नमो ब्रह्मणे ऊर्ध्वलोकाधीश्वराय.........नाभिसंभवाय काञ्चन-
वर्णाय चतुर्मुखाय श्वेतवस्त्राय पुस्तककमलहस्ताय ।

आचारदिनकर उदय ३३ पन्ना १७६

तथा ब्रह्माणं धवलवर्णं हंसवाहनं कमण्डलुपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

१. सूर्य

नमः सूर्याय सहस्रकिरणाय रत्नादेवीकान्ताय यमयमुनाजनकाय
......पूर्वदिगधीशाय स्फटिकोज्ज्वलाय रक्तवस्त्राय कमलहस्ताय
सप्ताश्वरथवाहनाय च ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८०

तत्रादित्यं हिङ्गुलवर्णमूर्ध्वस्थितं द्विभुजं कमलपाणिं चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

आदित्यमाद्यं सकलग्रहाणामानिद्यमम्भोरुहचारुपाणिम् ।
पद्मप्रभं नीलतुरंगयानमानदयामि प्रविनीय्यं पूजाम ।।

सिंहासनप्रतिष्ठा

सूर्याय सहस्रकिरणाय गजवृषभसिंहतुरंगवाहनाय
रक्तवर्णाय.........।

प्रतिष्ठाकल्प, पन्ना १४

२. चन्द्र

नमश्चन्द्राय......नागगणाधीशाय वायव्यदिगधीशाय
श्वेतवस्त्राय श्वेतदशवाजिवाहनाय सुधाकुम्भहस्ताय...।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८०

तथा सोमं श्वेतवर्णं द्विभुजं दक्षिणं अक्षसूत्रं
वामे कुण्डिका चेति

निर्वाणकलिका, ३८

सारंगमारोहति कुंतमस्त्रमंगीकरोति क्षतवैरिवर्गः ।
यस्तं प्रशस्तं सकलं हिमांशुमाकारयामि स्वहिताय यज्ञे ।।

सिंहासनप्रतिष्ठा

प्रतीचीदिग्दलोद्भूत अक्षमालाकमराम्बुपाणिसोमाय
मृगवाहनाय ।

प्रतिष्ठाकल्प, पन्ना १४

३. मंगल

नमः मंगलाय दक्षिणदिगधीशाय विद्रुमवर्णाय
रक्ताम्बराय भूमिस्थिताय कुद्दालहस्ताय ।

आचारदिनकर उदय, ३३, पन्ना १८०

तथाङ्गारकं रक्तवर्णं द्विभुज दक्षिणेक्षसूत्रं वामे कुण्डिकां चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

त्रिशूलविध्वस्तसमस्तशत्रो शोणांगरक्ताक्षपरिग्रहोग्रा ।
त्वं मंगलातुच्छममुच्चवेश्मिन्नागच्छ सच्छायसदाहितेच्च ।।

सिंहासनप्रतिष्ठा

वारुणदिग्दलासिने रक्तप्रभाक्षसूत्रावलयकुंडिकालंकृते
भौमाय गजवाहनाय ।

प्रतिष्ठाकल्प, पन्ना १४

४. बुध

नमः बुधाय उत्तरदिगधीशाय हरितवस्त्राय
कलहंसवाहनाय पुस्तकहस्ताय च ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८०

तथा बुधं पीतवर्णं द्विभुजं अक्षसूत्रकुण्डिकापाणि चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

बुधं निरुद्धाखिलं सनीलं श्रीतोष्णसच्छायपरिग्रहागम् ।
दुर्गोपसर्गैकविनाशदक्षं यजे सदा शांतिधिया यजामि ।।

सिंहासनप्रतिष्ठा

५. वृहस्पति

नमः श्रीगुरवे वृहस्पतये ईशानदिगधीशाय सर्वदेवाचार्याय
सर्वग्रहबलवत्तराय काचनवर्णाय पीतवस्त्राय
पुस्तकहस्ताय श्रीहंसवाहनाय ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८०

तथा सुरगुरुं पीतवर्णं द्विभुजं अक्षसूत्रकुण्डिकापाणिं चेति ।
निर्वाणकलिका, ३८

बृहस्पति सारसरोरुहस्थप्रसव्यहस्तस्थितपुस्तक च ।
सुवर्णवर्ण प्रवितीर्णशोभं क्षोभं दधानं द्विषता यजामि ।।
सिंहासनप्रतिष्ठा

६. शुक्र

नमः शुक्राय दैत्याचार्याय आग्नेयदिगधीशाय
स्फटिकोज्ज्वलाय श्वेतवस्त्राय कुम्भहस्ताय तुरगवाहनाय ।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८१

तथा शुक्रं श्वेतवर्णं द्विभुज अक्षसूत्रकमण्डलुपाणि चेति ।
निर्वाणकलिका, ३८

शालूरयानाहिकरा सुराणां गुरो प्रणष्टप्रतिपक्षदक्ष ।
शुक्रं स्वय वेदिविधानरक्षामागत्य नित्यं कुरु राजताभम् ।।
सिंहासनप्रतिष्ठा

७. शनि

नमः शनैश्चराय पश्चिमदिगधीशाय नीलदेहाय
नीलाम्बराय परशुहस्ताय कमठवाहनाय ।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८१

तथा शनैश्चरमोषत्कृष्णं द्विभुजं लम्बकूर्च
किञ्चिद्दर्शनं द्विभुजमक्षमालाकमण्डलुयुक्तपाणि चेति ।
निर्वाणकलिका, ३८

शनैश्चरं संचरता ग्रहाणा शनिश्चरकज्जलकान्तमंत्र
विद्वेषिशेषैकविशेषवेषमन्वेषयतं स्वयमाह्वयामि ।।
सिंहासनप्रतिष्ठा

८. राहु

नमः राहवे नैर्ऋतदिगधीशाय कज्जलश्यामलाय
श्यामवस्त्राय परशुहस्ताय सिंहवाहनाय ।
आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना १८१

तथा राहुमतिकृष्णवर्णं अर्धकायरहितं द्विभुजमर्घ–
मुद्रान्वितपाणिं चेति ।
निर्वाणकलिका, ३८

अलीन्द्रनीलासितकायकांतिकेन्वानरत्राशनदामभूषम् ।
राहुं हतारिष्टमदष्टचेष्टमाकारयाम्यत्र पवित्रकार्ये ।।
सिंहासनप्रतिष्ठा

९. केतु

नमः केतवे राहुप्रतिच्छन्दाय श्यामवस्त्राय
पन्नगवाहनाय पन्नगहस्ताय ।

आचारदिनकर, उदय ३३, पन्ना ११८

तथा केतु धूम्रवर्णं द्विभुजमक्षसूत्रकुण्डिकान्वित--
पाणि चेति ।

निर्वाणकलिका, ३८

केतुर्महाकेतुरतीवशूरो दूरोज्झितागानिकृतापकारः ।
प्रारम्य सर्वज्ञमहे फणाग्रमणिप्रभाढ्यः समुपैति शीघ्रम् ।।

सिंहासनप्रतिष्ठा

ग्रहशांति

पद्मप्रभस्य मार्तण्डश्चन्द्रश्चन्द्रप्रभस्य च ।
वासुपूज्यो भूमिपुत्रो बुधोऽप्यष्टजिनेश्वरा ।।
विमलानंतधर्मारा: शान्तिः कुन्थुर्नमिस्तथा ।
वर्धमानो जिनेन्द्राणा पादपद्मं बुध न्यसेत् ।।
ऋषभाजितसुपार्श्वा अभिनन्दनशीतलौ ।
सुमति. सभवः स्वामी श्रेयासश्च बृहस्पति
सुविधिः कथित शुक्रः सुव्रतश्च शनैश्चर
नमीनाथो भवेद्राहु. केतुः श्रीमल्लिपार्श्वयो: ।।

आचारदिनकर, उदय ३४, शान्त्यधिकार

दिक्कुमारिकाएँ

ओ	सुवर्णवर्णे	चतुर्भुजे	पुष्पमुखकमलहस्ते	श्रीदेवी	आगच्छ
ओ	रक्तवर्णे	चतुर्भुजे	पुष्पमुखकमलहस्ते	ह्रीदेवी	आगच्छ
ओ	सुवर्णवर्णे	चतुर्भुजे	पुष्पमुखकमलहस्ते	धृतिदेवि	आगच्छ
ओ	सुवर्णवर्णे	चतुर्भुजे	पुष्पमुखकमलहस्ते	कीर्त्तिदेवि	आगच्छ
ओ	सुवर्णवर्णे	चतुर्भुजे	पुष्पमुखकमलहस्ते	बुद्धिदेवि	आगच्छ
ओ	सुवर्णवर्णे	चतुर्भुजे	पुष्पमुखकमलहस्ते	लक्ष्मीदेवि	आगच्छ
ओ	सुवर्णवर्णे	चतुर्भुज	पुष्पमुखकमलहस्ते	शान्तिदेवि	आगच्छ
ओ	सुवर्णवर्णे	चतुर्भुजे	पुष्पमुखकमलहस्ते	पुष्टिदेवि	आगच्छ

वसुनन्दि, ६

टीप—नेमिचन्द्र ने इन्हे पुष्पमुखकलशकमलहस्ता कहा है ।

देशना

नरेशों के नाम

भौगोलिक नाम

लेखकों और आचार्यों के नाम

ग्रन्थों के नाम

सामान्य

ग्रन्थ निर्देश

[उन ग्रन्थों को छोड़कर जिनका उल्लेख देशना पृष्ठ २०४-०६ पर किया जा चुका है]

अद्भुतपद्मावतीकल्प	:	श्रीचन्द्रसूरि
अन्तगडदशाओ	:	अभयचन्द्रसूरि कृत टीका
अभिधानचिन्तामणि	:	आचार्य हेमचन्द्र
अपराजितपृच्छा	:	भुवनदेव
आचार दिनकर	:	वर्धमानसूरि, पंडित केसरीसिंह ओसवाल बम्बई द्वारा दो जिल्दों में प्रकाशित संस्करण।
एकविंशतिस्थानकप्रकरण	:	मुनि चतुरविजय द्वारा सम्पादित
काण्ट्रीब्यूशन टू ए बिब्लियोग्राफी ऑफ इण्डियन आर्ट एण्ड एस्थेटिक्स, प्रथम खण्ड	:	हरिदास मित्रा, विश्वभारती, शान्ति-निकेतन, १९५१.
कामचाण्डालिनीकल्प	:	मल्लिषेण
कैनन्स ऑफ इण्डियन आर्ट	:	तारापद भट्टाचार्य
कैटलाग ऑफ मथुरा म्यूजियम	:	वी० एस० अग्रवाल
खजुराहो की देव प्रतिमाएं	:	डा० रामाश्रय अवस्थी, आगरा, १९६७
घण्टाकर्णमणिभद्रतंत्रमंत्र	:	साराभाई नवाब, अहमदाबाद
चन्द्रप्रज्ञप्ति	:	शान्तिचन्द्र कृत टीका, देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फण्ड, बम्बई, १९२०
चतुर्विंशतिजिनेन्द्रचरित	:	अमरचन्द्रसूरि
चक्रेश्वरी स्तोत्र	:	जिनदत्तसूरि
जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति	:	शान्तिचन्द्र कृत टीका, देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फण्ड, बम्बई, १९२०

जंबूदीवपण्णत्तिसंगहो : पउमणंदि, आदिनाथ नमिनाथ उपाध्ये और हारालाल जैन द्वारा सम्पादित, जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापुर, १९५८.

जिनयज्ञकल्पदीपक : पंडित आशाधर का स्वोपज्ञ निबंध

जिनयज्ञकल्पटीका : पंडित आशाधर के प्रतिष्ठाग्रन्थ पर संस्कृत टीका

जिनसंहिता : इन्द्रनन्दि, हस्तलिखित पोथी, बम्बई

——— : भट्टारक एकसंधि, हस्तलिखित पोथी, आरा.

जैन आइकोनोग्राफी : बी० भट्टाचार्य, लाहौर, १९३९,

जैन साहित्य और इतिहास : नाथूराम प्रेमी, बम्बई

जैन स्तूप ऑफ मथुरा : वी० ए० स्मिथ

तिलोयपण्णत्ती : यतिवृषभ, सोलापुर, १९५६

दीपार्णव

निर्वाणकलिका : पादलिप्ताचार्य, सम्पादक मोहनलाल भगवानदास झवेरी, बम्बई, १९२६

डिक्शनरी ऑफ हिन्दू आर्किटेक्चर : पी० के० आचार्य

पंचवास्तुप्रकरण : हरिभद्रसूरि, सूरत, १९२७

प्रतिमा लक्षण : द्विजेन्द्रनाथ शुक्ल

प्रतिष्ठातिलक : नेमिचन्द्र कृत, मराठी अनुवाद सहित सोलापुर

प्रतिष्ठापाठ : जयसेन (वसुविन्दु), सोलापुर

——— : सकलचन्द्र उपाध्याय, गुजराती अनुवाद सहित

प्रतिष्ठासारसंग्रह : वसुनन्दि, हस्तलिखित प्रति, रायपुर संग्रहालय

——— : ब्र० सीतलप्रसाद, सूरत

प्रतिष्ठासारोद्धार : पंडित आशाधर, बम्बई

प्रवचनसारोद्धार : नेमिचन्द्रसूरि, सिद्धसेनगणी की तत्त्वज्ञान विकासिनी टीका

प्राचीन भारतीय मूर्तिकला : डा० वासुदेव उपाध्याय, वाराणसी

प्रासादमण्डन : पं० भगवानदास जैन जयपुर द्वारा प्रकाशित

भद्रबाहुसंहिता : पं० नेमिचन्द्र शास्त्री द्वारा सम्पादित

भारती कल्प : मल्लिषेण, हस्तलिखित प्रति, आरा

भारतीय स्थापत्य : द्विजेन्द्रनाथ शुक्ल, लखनऊ

भैरवपद्मावतीकल्प : मल्लिषेण कृत, साराभाई नवाब द्वारा प्रकाशित, अहमदाबाद

मंदिरप्रतिष्ठाविधि : हस्तलिखित प्रति, आरा

मंदिरवेदीप्रतिष्ठाकलशारोहणविधि : पं० पन्नालाल साहित्याचार्य, वाराणसी

मन्त्राधिराजचिन्तामणि : साराभाई नवाब द्वारा सम्पादित

यशस्तिलकचम्पू : सोमदेवसूरि, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई

वास्तुसारप्रकरण : ठक्कुर फेरु, पंडित भगवानदास जैन द्वारा सम्पादित, जयपुर, १९३६

विद्यानुवाद : मल्लिषेण, हस्तलिखित प्रति, जयपुर

विवेकविलास : जिनदत्तसूरि, मेसर्स मेघजी हीरजी कंपनी बम्बई द्वारा प्रकाशित, १९१६

शिल्परत्नाकर : नर्मदाशंकर मूलजीभाई

सिद्धान्तसारादिसंग्रह : माणिकचन्द्र ग्रन्थमाला, बम्बई

सूर्यप्रज्ञप्ति : मलयगिरि की टीका, आगमोदय समिति सूरत, १९१९

संग्रहणी : मलयगिरि की टीका, भावनगर
स्टडीज इन जैन आर्ट : उमाकान्त परमानन्द शाह, वाराणसी
क्षीरार्णव
त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित : आचार्य हेमचन्द्र, जैनधर्मप्रसारक सभा, भावनगर
ज्ञानप्रकाश (आयतत्त्वाधिकार)

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१३	स्थापना के दो है	स्थापना के दो भेद है
१०	१८	ठक्कर	ठक्कुर
११	१८	ममत्वपूर्ण	महत्वपूर्ण
१८	८	ठक्कर	ठक्कुर
३२	१३	उपर	ऊपर
३३	२८	शेग	शेप
५३	८	जन	जैन
५५	११	अच्छाना	अच्छुप्ता
८१	१	दाय	दाये
८१	८	गामेध	गोमेध
९१	१	मल्लिपण	मल्लिषेण
१०५	२३	तीर्थकरो	तीर्थंकरो
१०६	२५	वज्रर्भृ	वज्रभृ
१११	६	हथ	हाथ
१२०	१८	पावती	पार्वती
१२०	१६	छाया	यम
१२८	अंतिम	महाविद्यामार	महाविद्य, मार

विद्या देवियां

१. रोहिणी (दिग०)

१ रोहिणी (श्वे०)

२ प्रज्ञप्ति (दिग०)
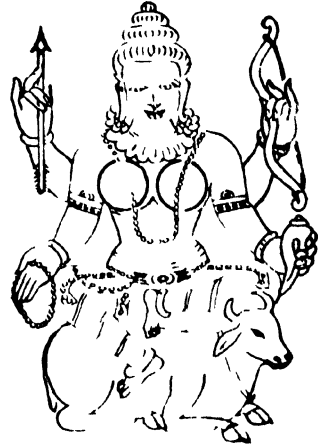
२. प्रज्ञप्ति (श्वे०)

फलक दो

विद्या देवियां

३. वज्रशृंखला (दिग०)

३ वज्रशृंखला (श्वे०)
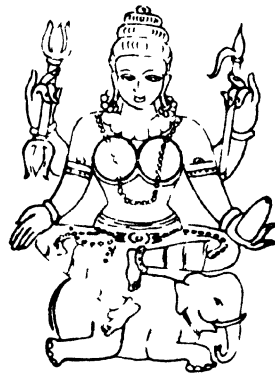
वज्रांकुशा (दिग०)

४ वज्रांकुशा (श्वे०)

विद्या देवियां

५. जाम्बूनदा (दिग०)

५ अप्रतिचक्रा (श्वे०)
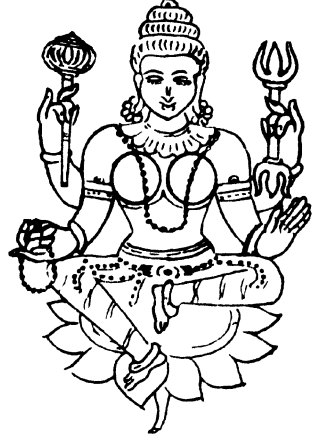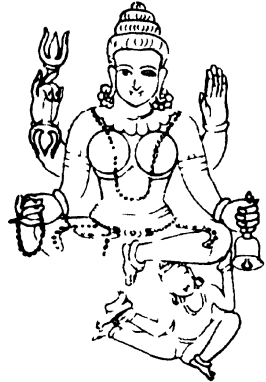
६. पुरुषदत्ता (दिग०)

६ पुरुषदत्ता (श्वे०)

फलक चार

विद्या देवियां

७. काली (दिग०)

७. काली (श्वे०)

८. महाकाली (दिग०)

८. महाकाली (श्वे०)

विद्या देविया

९. गौरी (दिग०)

९ गौरी (श्वे०)

१०. गाधारी (दिग०)

१० गाधारी (श्वे०)

विद्या देवियां

११ ज्वालामालिनी (दिग०)

११ ज्वाला (श्वे०)

१२ मानवी (दिग०)

१२. मानवी (श्वे०)

विद्या देवियां

१३ वरोटी (दिग०)

१३. वैरोट्या (श्वे०)

१४. अच्युता (दिग०)

१४ अच्छुप्ता (श्वे०)

विद्या देवियां

१५. मानसी (दिग०)

१५ मानसी (श्वे०)

१६ महामानसी (दिग०)

१६ महामानसी (श्वे०)

शासन यक्ष

१. गोमुख (दिग०)

१. गोमुख (श्वे०)

२. महायक्ष (दिग०)

२. महायक्ष (श्वे०)

फलक दस

शासन यक्ष

३ त्रिमुख (दिग०)

३ त्रिमुख (श्वे०)

४ यक्षेश्वर (दिग०)

४ यक्षेश्वर (श्वे०)

शासन यक्ष

५ तुम्बरु (दिग०)

५ तुम्बरु (श्वे०)

६ पुष्प (दिग०)

६ कुसुम (श्वे०)

शासन यक्ष

७. मातग (दिग०)

७. मातंग (श्वे०)

८. श्याम (दिग०)

८. विजय (श्वे०)

फलक तेरह

शासन यक्ष

९. अजित (दिग०)

९. अजित (श्वे०)

१०. ब्रह्म (दिग०)

१०. ब्रह्म (श्वे०)

फलक चौदह

शासन यक्ष

११. ईश्वर (दिग०)

११. ईश्वर (श्वे०)

१२. कुमार (दिग०)

१२. कुमार (श्वे०)

शासन यक्ष

१३. षण्मुख (दिग०)

१३. षण्मुख (श्वे०)

१४. पाताल (दिग०)

१४. पाताल (श्वे०)

फलक सोलह

शासन यक्ष

१५ किन्नर (दिग०)

१५. किन्नर (श्वे०)

१६. गरुड (दिग०)

१६. गरुड (श्वे०)

शासन यक्ष

१७. गधर्व (दिग०)

१७ गधव (श्वे०)

१८. खेन्द्र (दिग०)

१८. यक्षेन्द्र (श्वे०)

फलक अठारह

शासन यक्ष

१९. कुबेर (दिग०)

१९. कुबेर (श्वे०)

२०. वरुण (दिग०)

२०. वरुण (श्वे०)

फलक उन्नीस

शासन यक्ष

२१. भृकुटि (दिग०)

२१. भृकुटि (श्वे०)

२२. गोमेद (दिग०)

२२. गामेध (श्वे०)

फलक बीस

शासन यक्ष

२३. धरणेन्द्र (दिग०)

२३. पार्श्व (श्वे०)

२४. मातंग (दिग०)

२४. मातंग (श्वे०)

शासन यक्षी

१. चक्रेश्वरी (दिग०)

१. अप्रतिचक्रा (श्वे०)

२. रोहिणी (दिग०)

२. अजिता (श्वे०)

फलक बाईस

शासन यक्षी

३. प्रज्ञप्ति (दिग०)

३. दुरितारि (श्वे०)

४. वज्रश्रृंखला (दिग०)

४ कालिका (श्वे०)

शासन यक्षी

५. पुरुषदत्ता (दिग०)

५ महाकाली (श्वे०)

६. मनोवेगा (दिग०)

६ अच्युता (श्वे०)

फलक चौबीस

शासन यक्षी

७. काली (दिग०)

७. शान्ता (श्वे०)

८. ज्वालामालिनी (दिग०)

८. भृकुटि (श्वे०)

शासन यक्षी

९. महाकाली (दिग०)

९. गुताग (श्वे०)

१०. मानवी (दिग०)

१०. अशोका (श्वे०)

फलक छब्बीस

शासन यक्षी

११ गौरी (दिग०)

११. मानवी (श्वे०)

१२. गाधारी (दिग०)

१२ चण्डा (श्वे०)

शासन यक्षी

१३. वैरोटी (दिग०)

१३. विदिता (श्वे०)

१४ अनन्तमती (दिग०)

१४ अंकुशा (श्वे०)

फलक अट्ठाइस

शासन यक्षी

१५. मानसी (दिग०)

१५. कन्दर्पा (श्वे०)

१६. महामानसी (दिग०)

१६. निर्वाणी (श्वे०)

शासन यक्षी

१७. जया (दिग०)

१७. बला (श्वे०)

१८ तारावती (दिग०)

१८ धारिणी (श्वे०)

शासन यक्षी

१६. अपराजिता (दिग०)

१६. वैरोट्या (श्वे०)

२०. बहुरूपिणी (दिग०)

२०. नरदत्ता (श्वे०)

शासन यक्षी

२१. चामुण्डा (दिग०)

२१ गान्धारी (श्वे०)

२२. आम्रा (दिग०)

२२ अम्बिका (श्वे०)

२३. पद्मावती (दिग०)

२३ पद्मावती (श्वे०)

फलक बत्तीस
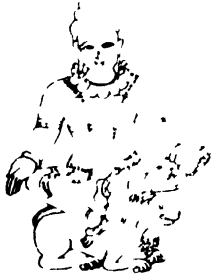
२४. सिद्धायिका (दिग०)

२४. सिद्धायिका (श्वे०)

क्षेत्रपाल

अनावृत यक्ष (दिग०)

सर्वाह्न यक्ष (दिग०)

ब्रह्मशान्ति यक्ष(श्वे०)